अगस्त क्रान्ति

क्षेमचन्द्र 'सुमन'

50/-

अगस्त-क्रान्ति

भारतीय स्वातन्त्र्य-संघर्ष की ओजमयी गाथा

क्षेमचन्द्र 'सुमन'

आर्य बुक डिपो

करोल बाग, नई दिल्ली-110005

प्रकाशक :
सुखपाल गुप्त
आर्य बुक डिपो
30, नाई वाला, करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
दूरभाष : 5721221

© क्षेमचन्द्र 'सुमन'

मूल्य : 50.00 रुपये

प्रथम संस्करण : 1996

टाइपसैटिंग :
राकेश प्रिंटर्स

मुद्रक :
विशाल प्रिंटर्स
शाहदरा, दिल्ली-32

''यह वर्ष भारत छोड़ो आंदोलन, 1942 का स्वर्ण जयंती वर्ष है। इसलिए मेरा मन स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय के आदर्श, साहस और दृढ़ निश्चय की स्मृतियों से ओतप्रोत है। हमें अपनी आजादी और उस आजादी की उपलब्धियों की रक्षा करनी है। हमें यह याद रखना है कि समानता के बिना आजादी निरर्थक सी. हो जाती है और सामाजिक तथा आर्थिक न्याय के बिना समानता का अर्थ नहीं रहता।''

महामहिम राष्ट्रपति

डॉ० शंकरदयाल शर्मा द्वारा

25 जुलाई 1992 को शपथ-ग्रहण के उपरान्त दिये गए भाषण से

फीरोजपुर जेल के साथी
अगस्त-क्रान्ति की अमर आहुति
शहीद राजनारायण मिश्र
की पावन स्मृति में

प्रकाशकीय

इस पुस्तक को अपने सुधी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। कई वर्षों के निरन्तर प्रयास के उपरान्त हमें अपने इस मिशनरी अभियान में सफलता मिल सकी है।

इस पुस्तक के लेखक (स्व०) आचार्य क्षेमचन्द्र 'सुमन' ने अपनी लम्बी बीमारी के दौरान, अपने अमूल्य जीवन का एक-एक क्षण निकालकर इसे तैयार किया और अपनी अंतिम साँस तक इसके प्रूफ संशोधित करने तथा इसको अंतिम रूप देने में तनिक भी कसर नहीं रख छोड़ी थी। ऐसे अप्रतिम साहित्य-मनीषी आचार्य क्षेमचन्द्र 'सुमन' के हम ऋणी हैं।

उनके दिवंगत हो जाने के उपरान्त, कई महीनों तक हम उनके वियोग की पीड़ा से नहीं उबर पाये और पर्याप्त समय के पश्चात् जब इस पुस्तक के मुद्रण का सिलसिला पुन: प्रारंभ हुआ, तो हमने अन्तिम प्रूफ संशोधन का उत्तरदायित्व सुमनजी के स्थान पर अपने मित्र श्री कन्हैयालाल गौड़ को सौंप दिया। इस पुस्तक को मुद्रण-स्तर तक लाने में उनके द्वारा हमें जो श्रम साध्य सहयोग मिला, उसके लिए हम उनका हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं।

कम्पोजिंग-प्रक्रिया के लम्बे अन्तराल के फलस्वरूप पुस्तक के अनेक पृष्ठ पुस्तक से विलग हो गए थे, जिससे पुस्तक का तारतम्य ही टूट गया था। इस सम्बन्ध में सुमनजी के अनन्य शिष्य डॉ० इन्द्र सेंगर ने सुमनजी के निजी पुस्तकालय से अन्वेषण करके इस पुस्तक में अपेक्षित पृष्ठ संयोजित करके अपना जो विशेष सहयोग दिया है एतदर्थ हम उनका भी आभार व्यक्त करते हैं।

इस पुस्तक के मुद्रण, टंकन में प्रिय राकेश शर्मा ने भी भरपूर सहयोग प्रदान किया है, इसके लिए वे भी धन्यवाद के पात्र हैं।

अब यह पुस्तक हमारे प्रिय पाठकों के हाथों में है, वे इसे पढ़कर रसास्वादन तो करेंगे ही बल्कि भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम सम्बन्धी आँखों देखी सच्ची घटनाओं और इतिहास की पूरी-पूरी जानकारी से भी अवगत होंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

—सुखपाल गुप्त

दो शब्द

गोस्वामी तुलसीदास जी ने ठीक ही कहा है—

जाकी रही भावना जैसी।
प्रभु मूरति देखी तिन तैसी॥

एक ही घटना को भिन्न-भिन्न लोग अपनी प्रकृति, अपनी वासना, अपने विचारों के अनुसार भिन्न-भिन्न रूप से देखते हैं, और इसी कारण उनसे भिन्न-भिन्न परिणाम भी निकालते हैं। चाहे कोई अपने को कितना ही पक्षपातहीन क्यों न समझे, इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह इतिहास के प्रति भी विशेष दृष्टिकोण रखता ही है और ऐतिहासिक घटनाओं से निष्कर्ष भी ऐसा निकालता है जिससे उन्हीं घटनाओं की समीक्षा-परीक्षा करते हुए दूसरे लोग दूसरा निकालते हैं। इसमें किसी का कोई दोष नहीं है। मनुष्य की प्रकृति ही ऐसी है इस कारण ऐसा होना अनिवार्य है।

इन घटनाओं के सम्बन्ध में सरकार की क्या राय है, वह तो उस समय के कृत्यों से मालूम ही हो गया था और सर रिचर्ड टाटेनहम ने उसे सदा के लिए 'कांग्रेस की जिम्मेदारी' नामक अंग्रेजी पुस्तक में लिपिबद्ध भी कर दिया है। मेरी भी उस सम्बन्ध में कुछ राय है। उस समय के प्रधान पात्रों के सम्बन्ध में भी मेरी राय है। पर उस राय को विस्तार से प्रकट करने का यह अवसर नहीं है। यह तो मानना ही पड़ेगा कि 1942 हमारे लिए विशेष स्मरणीय रहेगा। अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से भी यह समय विशेष महत्त्व रखता है। विश्वव्यापी युद्ध चोटी पर पहुँच चुका था। यूरोप में आन्तरिक युद्ध तो था ही, यूरोप और एशिया का भी भीषण संघर्ष हो रहा था। जापान की शक्ति पराकाष्ठा को पहुँच रही थी, स्वतन्त्रता की लहर देश-देशान्तरों में बह रही थी। भारत इससे पृथक नहीं रह सकता था। भारत के भाव उसकी परिमित शक्ति के अनुसार एक विशेष प्रकार से प्रकट हो ही गए।

भारत के वर्तमान इतिहास में सन् 1942 की घटनाओं का विशेष स्थान है। ये घटनाएँ ऐसी एकाएक घटीं, उनका प्रभाव इस रूप से चारों तरफ फैला कि कितने ही लोग स्तम्भित हो गए, कितने ही किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गए। क्या हुआ, कैसे हुआ, इसकी अभी विवेचना करनी बाकी है। अभी तक तो घटनाओं का ही संचय पूरी तरह नहीं हो पाया है। ऐसी अवस्था में चाहे किसी दृष्टिकोण से इस विषय को देखा जाए, जो कोई उस समय की घटनाओं

का क्रमबद्ध संग्रह करने का प्रयत्न करता है, वह हमारी कृतज्ञता का पात्र है। यदि कोई भुक्तभोगी ऐसा करता है तो हमें उसकी कृति का विशेष प्रकार से स्वागत करना चाहिए, क्योंकि वह भीतर से हमें हाल बतलाता है। इस कारण मैं भी श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' की इस पुस्तक के प्रकाशन पर सन्तोष प्रकट करता हूँ। सन् 1942 को ठीक प्रकार से देखने और समझने में भविष्य के ऐतिहासिकों को इससे सहायता मिलनी चाहिए।

मेरे मित्र श्री समुन जी ने उन घटनाओं का संग्रह और विवेचन किया है। उसके पात्रों का भी वर्णन किया है। इनके सम्बन्ध में अपना मत भी प्रकट किया है। अवश्य ही उन्होंने एक विशेष दृष्टिकोण से अपनी पुस्तक लिखी है। अपने भावों को उन्होंने सफाई से व्यक्त किया है। देश ने क्या-क्या सहा, उस क्रान्ति के वास्तविक नेताओं ने क्या-क्या संकट उठाए यह सब जानने और समझने में उनकी पुस्तक बहुत सहायक हो सकती है। मुझे आशा है कि लोग इससे पर्याप्त लाभ उठाएँगे और जिस उद्देश्य से लेखक ने इतना परिश्रम कर इसे हमें दिया है वह सिद्ध होगा। हमें अपना आगे का कार्यक्रम निश्चित करने में भी इससे सहायता मिलनी चाहिए जिससे उस समय की अपनी भूलों से हम शिक्षा ले सकें और अपनी त्रुटियों को दूर कर सच्चे और पूर्ण स्वराज्य के योग्य अपने को बना सकें।

सेवाश्रम बनारस
(प्रवास) दिल्ली
4 नवम्बर, 1946

श्री प्रकाश

एक अनमोल दस्तावेज

प्रस्तुत कृति के प्रणेता बहुमुखी प्रतिभा के धनी आचार्य क्षेमचन्द्र 'सुमन' के जीवन-क्षेत्र को प्रधानत: जिन रूपों में विभक्त किया जा सकता है, उनमें वे एक समर्पित स्वतंत्रता सेनानी, वैदिक परम्परा के आर्ष पुरुष और हिन्दी-साहित्य के भगीरथ के रूप में प्रतिष्ठापित हैं। उनकी साहित्य-साधना का शुभारम्भ काव्य-विद्या से हुआ था। इस क्षेत्र में कतिपय कदम चलने के उपरान्त उन्होंने संयोगवश स्वयं को पूर्णरूपेण गद्य के क्षेत्र में केन्द्रित कर लिया, जिसमें उन्हें अप्रत्याशित सफलता भी मिली। गद्य की विभिन्न विधाओं में आपने जहाँ हिन्दी-जगत् को स्वाधीनता संग्राम के इतिहास से अवगत कराया, वहीं हिन्दी साहित्य के इतिहास का भी प्रणयन किया। यदि एक ओर विविध प्रकार के निबन्धों का लेखन किया, तो दूसरी ओर साहित्य के विवेचन और हिन्दी साहित्य में हुए नये प्रयोगों पर भी पुस्तकों की रचना की। इसके अतिरिक्त, विभिन्न राजनेताओं, साहित्यकारों, पत्रकारों और समाज-सेवियों की न केवल जीवनियाँ ही लिखीं, प्रत्युत् अपने संसर्ग में आए अनेक महानुभावों के संस्मरण भी लिखे। आपने ऐतिहासिक महत्त्व के अनेकश: भाषण भी दिए और सन्दर्भग्रन्थों की रचना भी की, 'दिवंगत हिन्दी-सेवी' शिखर साधना का कालजयी पताका है।

सुमनजी देश के स्वाधीनता-संग्राम के स्वयं भी एक सेनानी रहे। सन् 1942 की क्रांति में आपको कारावास की यातनाएँ भोगनी पड़ीं। आपके द्वारा सृजित अनेक कृतियाँ इस तथ्य की ज्वलन्त साक्षी हैं। आपने स्वाधीनता-संग्राम विषयक जिन इतिहासपरक पुस्तकों की रचना की, उनमें 'कांग्रेस का संक्षिप्त इतिहास', 'आज़ादी की कहानी', 'हम स्वाधीन हुए', और 'हमारा संघर्ष' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यह पुस्तक 'हमारा संघर्ष' का ही परिमार्जित रूप है, जो सन् 1946 ई० में प्रकाशित हुई थी। प्रस्तुत कृति में आपने एक महत्त्वपूर्ण रहस्योद्घाटन किया है कि अंग्रेजों के खिलाफ भारतीय सैनिकों में विद्रोह की ज्वाला 10 मई, 1857 ई० को समस्त मेरठ में गोधूलि के समय भड़क उठी थी, जिसकी लपटें देखते-देखते सम्पूर्ण भारत में फैल गईं थीं।

प्रस्तुत पुस्तक के अध्ययन से, देश की स्वाधीनता के लिए देश-वासियों ने जो-जो कष्ट सहे, जो-जो त्याग और बलिदान किये, उन्हें कैसे-कैसे जघन्य अत्याचार सहने

पड़े और शहादतें मिलीं, उन सबका एक सजीव चित्र पाठकों के मानस-पटल पर अंकित हो जाता है, जो रोमांचित करने वाला है। अनेक घटनाएं पढ़कर आँखें छलछलाने लगती हैं। देश की स्वाधीनता के लिए संचालित संघर्ष के जीवन्त दस्तावेज के रूप में, इस पुस्तक के माध्यम से, सुमनजी ने तत्कालीन समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित सामग्री का सदुपयोग करके एक सजग और तटस्थ इतिहासकार के रूप में प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत करने का सराहनीय कार्य किया है।

इस पुस्तक की मुख्य विशिष्टता यह भी है कि इसमें उन सभी ऐतिहासिक तिथियों, घटनाओं, आन्दोलनों और प्रमुख क्रांतियों एवं क्रांतिकारियों का प्रामाणिक उल्लेख है, जो भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम की क्रोश शिला रहे हैं। ये सभी तथ्य सुमनजी ने सुव्यवस्थित और वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करके, निश्चय ही देश की प्रत्येक पीढ़ी का मार्गदर्शन करने का आशंसनीय कार्य किया है।

सारांशत: यह कृति भारतीय स्वाधीनता संग्राम की गाथा का एक अनमोल दस्तावेज है, जिसके पठन-पाठन से देश के प्रत्येक नागरिक को अपने देश की स्वतंत्रता को अक्षुष्ण बनाए रखने के लिए संकल्पबद्ध होने की सहज प्रेरणा मिलती रहेगी। सुमनजी के इस महती राष्ट्रीय अवदान के लिए हिन्दी-जगत सदा उनका ऋणी रहेगा।

मैं अपने जन्म के संस्कारों का सुफल मानता हूँ कि मैं उनके साथ सन् 1977 से अन्यतम रूप से जुड़ा रहा। उन्हीं की स्नेहिल एवं शीतल छाया में मेरी लेखनी ने शब्द-महलों के सृजन का अभ्यास किया। मैं आज जो कुछ भी हूँ सब उन्हीं के आशीष और स्नेह का प्रसाद है।

—डॉ० इन्द्र सेंगर

निवेदन

भारतीय स्वाधीनता-आन्दोलन के इतिहास में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के 'अंग्रेजो, भारत छोड़ो' तथा 'करो या मरो' के आह्वान पर 9 अगस्त, 1942 ई० को ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध हमारा जो संघर्ष प्रारम्भ हुआ था उसे 'अगस्त-क्रान्ति' कहा जाता है। भारत की निहत्थी जनता द्वारा की गई यह क्रान्ति जिस साहस और शौर्य की अनेक ज्वलन्त गाथाओं से परिपूर्ण है, वह अपने में एक ऐसा आलोक-दीप बन गई है कि जिससे हमारी जनता युग-युगों तक प्रेरणा और प्रोत्साहन प्राप्त करती रहेगी। 9 अगस्त का दिन भारत की स्वतन्त्रता के इतिहास का एक स्वर्णिम पृष्ठ बन गया।

जब ब्रिटिश नौकरशाही ने रात में हमारे सभी शीर्षस्थ नेताओं और गांधीजी को गिरफ्तार करके किसी अज्ञात स्थान पर ले जाकर नज़रबन्द कर दिया तथा सारे देश में धारा 144 लगा दी तब हमारे देश के अबाल-वृद्ध, नर-नारियों ने क्रोधान्ध होकर शासन की मशीनगनों, बमों और लाठी-प्रहारों के नृशंस अत्याचारों की छाया में जिस अद्‌भुत साहस के साथ यह संग्राम लड़ा था उसे सरकार ने 'खुला विद्रोह' की संज्ञा दी थी। यह निर्विवाद है कि सन् 1857 ई० से लेकर 1942 तक नि:शस्त्र जनता द्वारा इतनी बड़ी क्रान्ति कभी नहीं हुई थी, जिसमें उचित नेतृत्व के अभाव में भी जनता ने शासन-तन्त्र को लगभग उखाड़ ही फेंका था।

प्रस्तुत पुस्तक में इसी जन-क्रान्ति का विशद विवेचन प्रस्तुत करने का एक विनम्र प्रयास किया गया है। इसमें सन् 1957 के विद्रोह से लेकर अगस्त-क्रान्ति तक के स्वतन्त्रता के लिए किये गए भारतीय जनता के संघर्ष की शौर्यपूर्ण गाथा अत्यन्त सरल और सुबोध शैली में प्रस्तुत की गई है। इससे जहाँ पाठकों को इस जन-क्रान्ति से सम्बन्धित विभिन्न वर्गों तथा सम्प्रदायों के स्वातन्त्र्य-प्रेमियों के साहसिक कार्यों का परिचय प्राप्त होगा, वहाँ वे इस तथ्य से भी भली-भाँति अवगत हो सकेंगे कि अपने शीर्ष-नेताओं के सम्यक् दिशा निर्देशन के अभाव में भी हमारे देश के असंख्य नर-नारियों ने उस क्रान्ति में अपने कर्त्तव्य का निर्वाह किस प्रकार किया ?

भारत के अतिरिक्त इस जन-क्रान्ति का प्रभाव विदेशों में जिस रूप में पड़ा था उसका ज्वलन्त उदाहरण 'टैंगोनिका' का आन्दोलन है। जिस समय भारत की कोटि-कोटि जनता इस आन्दोलन में पूर्णत: संलग्न थी तब 'आजाद हिन्द सरकार' के सूत्रधार 'नेताजी सुभाष' ने भी विदेश में भारत की मुक्ति के लिए 'आजाद हिन्द फौज' को संगठित करने में अपनी विशिष्ट भूमिका निभाई थी। इस फौज के सिपाहियों ने नेताजी की कमान में भारत की स्वतन्त्रता का जो उद्घोष अपने 'दिल्ली चलो' नारे के माध्यम से किया था, वह एक ऐसा आदर्श प्रस्तुत करता है कि जिस पर हम सभी भारतीयों को गर्व है। हमने इसमें शौर्य और साहस की इस ज्वलन्त गाथा को भी संक्षेप में प्रस्तुत कर दिया है।

यह एक सुयोग ही था कि हम भी लगभग ढाई वर्ष तक इस क्रान्ति की लपटों के शिकार हो रहे हैं और इसी बीच हमें अनेक राजनेताओं, कार्यकर्त्ताओं और भूमिगत व्यक्तियों से मिलने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ था। जब हम लाहौर में वहाँ के दैनिक 'हिन्दी मिलाप' में कार्यरत थे तब वहाँ पर देश के विभिन्न भू-भागों के अनेक भूमिगत नेताओं और कार्यकर्त्ताओं का परामर्श-स्थल हमारा ही निवास था। यहाँ तक कि सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, रामनन्दन मिश्र, योगेन्द्र शुक्ल, डॉ० कुशलानंद गैरोला, प्रो० राधेश्याम, आचार्य दीपंकर, जीवनराम पालीवाल तथा भावदयाल शर्मा आदि अनेक महानुभाव वेश बदलकर इसमें आया करते थे। हमारे निवास पर ही आन्दोलन से सम्बन्धित सूचनाएँ और उद्बोधन 'साइक्लोस्टाल' मशीन द्वारा प्राय: आचार्य दीपंकर तैयार किया करते थे। यहाँ तक कि उनकी गिरफ्तारी भी हमारे ही निवास पर हुई थी।

यह पुस्तक सन् 1946 में उन दिनों लिखी गई थी जब हमारी धर्मपत्नी भयंकर रूप से अस्वस्थ थीं। ऐसी स्थिति में तब हम इसे यथाभिलाषित रूप नहीं दे सके थे। अगस्त-क्रान्ति की स्वर्ण जयन्ती के पावन अवसर पर अब इस पुस्तक को संशोधित करके प्रकाशित करने का सुयोग बना तब भी हम निरन्तर आठ वर्ष से चली आने वाली अपनी दीर्घकालीन अस्वस्थता के कारण इस संकल्प को पूर्ण करने में असमर्थ रहे और यह संस्करण यथावत् ही प्रकाशित किया जा रहा है। इसे एक विनम्र श्रद्धांजलि के रूप में ही ग्रहण किया जाना चाहिए।

इस पुस्तक की भूमिका सन् 1946 ई० में ही पाकिस्तान में भारत के भूतपूर्व उच्चायुक्त तथा आसाम, महाराष्ट्र और तमिलनाडु के भूतपूर्व राज्यपाल श्री श्रीप्रकाश ने लिखी थी, जो उन दिनों केन्द्रीय धारा सभा के सदस्य थे। यह हमारा दुर्भाग्य है कि वे आज हमारे बीच में नहीं हैं। उनका पुण्य स्मरण करना हमारा मौलिक कर्त्तव्य है।

यहाँ हम आर्य बुक डिपो के उत्साही संचालक श्री सुखपाल गुप्त के प्रति आभार प्रकट किए बिना भी नहीं रह सकते, जिनकी तत्परता और सूझ-बूझ से राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के आह्वान पर 'करो या मरो' की अमर क्रान्ति का यह ज्वलन्त दस्तावेज अगस्त-क्रान्ति की स्वर्ण जयन्ती के पावन अवसर पर हिन्दी के पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा सका है। राकेश प्रिंटर्स के श्री राकेश शर्मा भी हमारे साधुवाद के पात्र हैं, जिन्होंने अत्यन्त सावधानी और लगन से इस मुद्रण का दुरूह कार्य सम्पन्न किया।

आशा है हमारे इस प्रयास का यथोचित स्वागत किया जाएगा।

अजय निवास
जी-10, दिलशाद कालोनी,
शाहदरा, दिल्ली-95

—क्षेमचन्द्र 'सुमन'
15 अगस्त, 1992

बलि-पन्थियों की अर्चना

बलि-पंथी अनगिनत वीरों के, अर्चन का अवसर आया।
पुलक मिली प्राणों को पावन, थिरक उठी जन-मन काया॥
आज 'बहादुरशाह जफर' के प्राणों को चेतना मिली।
'सत्तावन' की दीप-शिखा के, शलभों की वेदना खिली।
'झाँसी वाली' भी पुलकित है अपनी बज्र कहानी ले।
कानपुर के 'शाह पेशवा' की गाथा बलिदानी ले।
'बुन्देले हरबोलों' का यश-सौरभ चहुँदिशि है छाया।
बलि-पन्थी अनगिनत वीरों के वन्दन का अवसर आया॥

आज उठा अँगड़ाई लेकर 'जलियाँवाला बाग' अमर।
आज उठा बलिदान 'साबरमती' अंक का शान्ति समर॥
आज उछलते पेशावर के 'मरण कांड' के बलिदानी।
आज चमकती 'बयालीस' के बलि-वीरों की पेशानी॥
आज 'बारडोली' औ 'डाँड़ी-कुँच' नया दिन है लाया।
पुलक मिली प्राणों को पावन, थिरक उठी जन-मन काया॥

आज 'चन्द्रशेखर', 'बिस्मिल' औ 'भगत सिंह' के गान जगे।
'रास बिहारी', 'हरदयाल', 'अशफाक' शेर के मान जगे॥
करते गान स्वतंत्र देश का यति 'यतीन्द्र' के प्राण पगे।
'मदन धींगड़ा', 'ऊधम सिंह' के आजादी-अभियान जगे॥
'खुदीराम', 'राजेन्द्र लाहिड़ी' का मन चुप-चुप मुसकाया।
बलि-पन्थी अनगिनत वीरों के, अर्चन का अवसर आया॥

'अलिपुर', 'चौरी चौरा' औ 'बंग भंग' की घटनाएँ।
'कोमागातामारू' औ 'आष्टी-चिमूर' की ललनाएँ॥
अब भी जीवित हैं भारत के कण-कण में वे इठलातीं।
'बलिया' के गौरव की गाथा हर्ष-विनन्दित है गातीं॥
'तात्याँ टोपे', 'वीर कुँवर' का खून अरे है रंग लाया।
पुलक मिली प्राणों को पावन थिरक उठी जन-मन-काया॥

आज उमड़ता है 'अजनाला' लिये हर्ष का पारावार।
आज उछलती है 'रावी' औ 'सतलज' की पावन जलधार॥
आज मचलता 'सिंगापुर' का द्वीप शहीदों का ले प्यार।
आज गूँजता जन-गण-मन में प्रिय 'सुभाष' का जय-जयकार॥
आज 'शिवालक', 'बिन्ध्याचल' उन्तुंग 'हिमालय' हहराया।
बलि-पन्थी अनगिनत वीरों के अर्चन का अवसर आया॥

'गान्धी' और 'जवाहर' का सपना वह देखो पूर्ण हुआ।
'तिलक', 'गोखले' का आयोजन है सचमुच सम्पूर्ण हुआ॥
बालक, वृद्ध, युवा सब ही ने आज अनूठा प्रण ठाना।
चक्र ध्वजा के आदर्शों पर चल अशोक का युग लाना॥
'सत्यमेव जयते' से सबने नव-नव उद्‌बोधन पाया।
बलि-पन्थी अनगिनत वीरों के अर्चन का अवसर आया।
पुलक मिली प्राणों को पावन थिरक उठी जन-मन काया॥

क्षेमचन्द्र सुमन'

अनुक्रम

पहला भाग (पृष्ठभूमि)

1. सन् सत्तावन की छाया में 3
2. राष्ट्रीय जागरण 10
3. अगस्त-क्रान्ति 24
4. संघर्ष का प्रारम्भ 36
5. देहातों में बगावत 39
6. छात्रों का कार्य 42
7. औद्योगिक हड़तालें 44
8. एक नजर में 47

दूसरा भाग (क्रान्ति का विस्फोट और दमन)

1. बम्बई से प्रारम्भ 55
2. गुजरात भी पीछे न रहा 59
3. सतारा की पत्री-सरकार 61
4. बापू का वर्धा 65
5. आष्टी और चिमूर 67
6. कर्नाटक के अत्याचारों की पराकाष्ठा 70
7. सिन्ध का कार्य 71
8. भारत की राजधानी में 72
9. स्वतन्त्र बलिया 76
10. जौनपुर और गाजीपुर भी 80
11. त्रिवेणी के तट पर खून की होली 81
12. गोरखपुर और आजमगढ़ 82
13. विश्वनाथपुरी में 84
14. बैसवारे का शौर्य 86
15. चन्द्रगुप्त का पाटलिपुत्र 89

16. शाहाबाद का दमन 91
17. सारे बिहार में क्रान्ति की लहर 93
18. पटना कैम्प जेल की हृदय-विदारक घटनाएँ 95
19. उड़ीसा का बलिदान 100
20. क्रान्तिदर्शी बंगाल 102
21. आसाम भी क्रान्ति की लपटों में 108

तीसरा भाग (विदेश में भी चिनगारी पहुँची)

1. स्वतंत्रता की अमर झाँकी : आजाद सरकार 113
2. टैंगेनिका का सन् 1942 128

चौथा भाग (अगस्त-क्रान्ति के सेनानी)

1. अच्युत पटवर्धन 135
2. श्री जयप्रकाश नारायण 141
3. डॉ० राममनोहर लोहिया 154
4. वीरांगना अरुणा 160
5. रेडियो-बेन उषा मेहता 164
6. गोरखपुर के गांधी बाबा राघवदास 170
7. हवलदार रामानन्द तिवारी 174

पाँचवाँ भाग (अगस्त-क्रान्ति पर नेताओं के उद्‌गार)

1. पं० जवाहरलाल नेहरू 179
2. आचार्य नरेन्द्र देव 181
3. आचार्य कृपलानी 181
4. शिब्बनलाल सक्सेना 181
5. जगतनारायणलाल 183

छठा भाग (अगस्त-क्रान्ति के शहीद)

1. महादेव देसाई 197
2. राष्ट्रमाता कस्तूरबा गांधी 197
3. अमर शहीद राजनारायण मिश्र 198
4. श्रीदेव 'सुमन' 202
5. रमेशचन्द्र आर्य 203

6. देवशरणसिंह 204
7. देवीपद चौधरी 204
8. रामगोविन्द 204
9. रामनन्दन 205
10. राजेन्द्रप्रसाद 205
11. सतीश झा 205
12. उमाकान्त सिंह 205
13. विन्ध्येश्वरी प्रसाद 205
14. महेन्द्र चौधरी 206
15. फुलैनाप्रसाद श्रीवास्तव 206
16. प्रभुनारायण 206
17. पटना कैम्प जेल के शहीद 206
18. दत्ता जोशी 210
19. उदयचन्द 210
20. बसन्त दाते 211

सातवाँ भाग (करो या मरो)

महात्मा जी का मन्त्र-दान 215

पहला भाग

पृष्ठभूमि

आज बहादुरशाह जफर के
प्राणों को चेतना मिली।
सत्तावन की दीप-शिखा के
शलभों की वेदना खिली॥

आज उठा अँगड़ाई लेकर
'जलियाँवाला बाग' अमर।
आज उठा बलिदानी 'साबर-
मती' अंक का शान्ति-समर॥

आज उछलते पेशावर के
'मरण-काण्ड' के बलिदानी।
आज चमकती 'बयालीस' के
बलि-वीरों की पेशानी॥

आज 'बारडोली' औ 'डाँडी-
कूच' नया दिन है लाया।
पुलक मिली प्राणों को पावन
थिरक उठी जन-मन काया॥

1

सन् सत्तावन की छाया में

जीवन संघर्षमय है। प्रत्येक बार हमें अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए विरोधी शक्तियों से संघर्ष करना ही पड़ता है और इसीलिए जीवन को संग्राम कहा गया है। जीवन को अधिक सरल और सुखमय बनाने के लिए चिरकाल से संसार के विचारकों का यह प्रयत्न रहा है कि जीवन में संघर्ष की मात्रा कम से कम हो। इसके लिए भिन्न-भिन्न प्रदेशों व समाजों में भिन्न-भिन्न प्रकार के नियम व उपनियम बनाये गए, विभिन्न संस्थाएँ स्थापित की गईं और ये सब संस्थाएँ किसी समय जीवन में सुख एवं समृद्धि लाने में सफल हुईं, यह निश्चित है। किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसा भी कोई प्रान्त या काल था, जहाँ 'संघर्ष' नाम की वस्तु न हो। सृष्टि की व्यवस्था होते ही विभिन्न राज्यों और संस्थाओं में संघर्ष प्रारम्भ हो गया।

धीरे-धीरे संस्थाएँ और नियम बदलते गए। कुछ संस्थाएँ मिट चलीं और कुछ संस्थाओं का रूप व्यापक होता गया। धर्म बनते और लुप्त होते गए। भिन्न-भिन्न जातियों या तो आपस में मिलती गईं या छिन्न-भिन्न होती गईं। बाद में उनमें से ही अनेक छोटी-छोटी उपजातियाँ उत्पन्न हुईं। कई उन्नत समझे जाने वाले देशों से जाति की सारी व्यवस्थाएँ, संस्थाएँ मिट गईं और उनमें एक व्यापकता आ गई।

यही हाल धर्म का हुआ। वास्तव में किसी भी धर्म की उत्पत्ति जीवन में आध्यात्मिकता और बन्धुत्व की भावना लाने के लिए ही हुई, किन्तु जहाँ विभिन्न धर्मों की छोटी-छोटी धारणाओं या सिद्धान्तों में मतभेद हुआ वहाँ विचारों की अव्यापकता के कारण संघर्ष की ही नींव पड़ी। शास्त्रार्थ भी इसी मतभेद का एक रूप था और अपनी-अपनी धार्मिक भावनाओं व रूढ़ियों को न छोड़ने की हठ हमेशा विनाश ही करती रही। जिन देशों ने धर्म व मतभेदों का यह बुरा परिणाम देखा, उन्होंने धर्म को अधिक व्यापक रूप दिया और लोगों में राष्ट्रीयता के भाव उत्पन्न किए।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि मानव जीवन में संघर्ष और विरोधों को कम करने के लिए जितने भी प्रयास हुए, वे सब किसी भयंकर संघर्ष के बाद ही हुए। भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में संघर्ष होने के बाद परिवार बने, विभिन्न कुटुम्बों में संघर्ष होने पर समाज और जातियाँ बनीं और उसके बाद राज्य बने। भिन्न-भिन्न राज्यों में संघर्ष होने के बाद

ही साम्राज्य बने और उसी से समाज में राष्ट्रीय भावना का आगमन हुआ।

भारतवर्ष अनादिकाल से ही अपनी संस्कृति,सभ्यता, आदर्श और श्रेष्ठता के लिए विश्व में एक अभूतपूर्व गौरव का स्थान ग्रहण किये हुए है। जैसा कि प्राकृतिक नियम है—किसी भी पदार्थ का उत्थान और पतन अवश्यम्भावी है। जो भारत सुदीर्घ काल तक समस्त संसार का शिरोमणि बनकर रहा, जिसकी महानता की छाप विश्व के सभी भू-भागों पर पड़ी हुई थी, जिससे शिक्षा प्राप्त कर, जिसका अनुसरण करके कोई भी राष्ट्र अपने को गौरवान्वित समझता था, एक समय आया जबकि उसे भी अवनति के अतल-तल में गिरना पड़ा। जहाँ मिथ्या अनाचार तथा सद्भाव नाम के लिए भी नहीं था, वहाँ पर इस मध्यकाल में अनीति, अशिक्षा, विद्वेष, भेदभाव तथा दासता का आविर्भाव आखिर किस प्रकार हुआ ? इतिहास अपने को बार-बार दुहराता है। जब दो समान शक्तियों का स्वार्थ परस्पर टकराता है तो संघर्ष होना स्वाभाविक है। भारतवर्ष में भी अंग्रेज व्यापार करने आए। बाद में वे अपनी कूटनीतिज्ञता के कारण व्यापारी से शासक बन गए। भारत ने इसे सहन करना उचित नहीं समझा और उनकी कूटनीतिक चालों से उन्मुक्त होने के लिए भारत पिंजरबद्ध शेर की तरह छटपटा उठा।

जब भारतीयों को पराधीनता का अनुभव होने लगा तो सब अपने आदर्श पर ध्यान रखते हुए तत्कालीन कठिनाइयों का निराकरण करने के लिए तुरन्त कटिबद्ध हो गए। कम्पनी के काले कारनामों ने प्रत्येक भारतीय के मन में विद्रोह और असन्तोष की एक आग जगा दी थी। परन्तु सभी भारतीय साधनहीन होने के कारण युद्ध करने में सक्षम नहीं थे।

आग भड़क उठी

असन्तोष की जो आग विवशता और साधनहीनता की राख के नीचे दबी पड़ी थी और धीरे-धीरे सुलग रही थी, उसके विस्फोट के लिए हवा का एक हल्का झोंका ही पर्याप्त था। बारूद इकट्ठी हो चुकी थी। अन्त में एक दिन वह भी आया जब चिनगारी उड़ी और मेरठ में 10 मई, सन् 1857 को गोधूलि के समय विद्रोह की आग भड़क उठी और फिर देखते-देखते यह समस्त भारत में फैल गई।

स्वतन्त्रता के लिए किया गया भारतीय सिपाहियों का यह प्रयत्न स्मरणीय है। थोड़ी सी ही देर में विद्रोहियों ने एक लाख वर्ग मील के भू-भाग पर अधिकार जमा लिया और ३ करोड़ 80 लाख भारतीयों ने कुछ समय के लिए अपने आपको विदेशी शासकों के बन्धन से मुक्त कर लिया। लगभग तीन वर्ष तक क्रान्ति की लपटें उठती रहीं और लगभग दो लाख वीरों ने अपने अधिकारों की इस लड़ाई में लड़ते-लड़ते अपने प्राणों की बलि दे दी। इस क्रान्ति को दबाने के लिए उस समय भारत सरकार को 4 करोड़ 60 लाख पौंड व्यय करना पड़ा था। ऐसी वीरता से युक्त महान् घटना हमारी उदासीनता और अहिंसा के प्रति रहने वाले हमारे भ्रमपूर्ण विश्वास के कारण अन्धकार के गह्वर-गर्त्त में पड़ी हुई है।

दिल्ली की ओर

सब विद्रोही सिपाही दिल्ली की ओर चल पड़े। उनकी संख्या बढ़ती गई। अंग्रेजों को सब ओर काल नज़र आने लगा। जो भाग सके, भाग गए। जो बचे, मार डाले गए। रक्त की नदी बहाई गई। अनियन्त्रित सिपाहियों की खूँरेज़ी देखकर मुगल साम्राज्य का अन्तिम सम्राट् बहादुरशाह घबरा गया। उसे रह-रहकर अपनी जान बचाने की फिक्र होने लगी। विद्रोही सिपाहियों ने दिल्ली में से अंग्रेजों का तख्ता उखाड़ फेंका। 16 मई के बाद वहाँ पर अंग्रजों का एक बच्चा भी दिखाई नहीं देता था। विदेशी सरकार के अत्याचारों ने ही सन् 1857 में भारतीयों को विद्रोह के रक्तरंजित मार्ग का पथिक बनाया था। परन्तु भारतीयों ने ऐसे समय में भी अपने पूर्व गौरव को नहीं भुलाया। उस समय भी उन्होंने मानव धर्म का त्याग नहीं किया। अपने उपकार के बदले में उनके साथ कैसा व्यवहार हुआ? आगे हम कुछ ऐतिहासिक तथ्य देते हैं, जिनसे भारतीयों की उदारता और विदेशी सत्ता की नृशंसता का किंचित् परिचय पाठकों को मिल जाएगा।

गदर के जमाने के इतिहास जिन लोगों ने लिखे हैं, उनमें से एक सहृदय अंग्रेज महाशय ने लिखा है कि सत्तावन की क्रान्ति के समय एक-एक अंग्रेज की देख-भाल के लिए दस-दस हिन्दुस्तानी थे। गोलन्दाजों में हिन्दुस्तानी चौगुने थे, सवारों में दुगुने। घोड़ों को दाना देने वाले, रोगियों की सेवा करने वाले सब हिन्दुस्तानी थे। दिल्ली की लड़ाई का वर्णन करते हुए उस लेखक ने लिखा है :—

"एक बार मैं अपनी सब तोपें वापिस ला रहा था। गोले बरसाकर मैंने सिपाहियों को आगे बढ़ने से रोका था। जो घायल हो गए थे, उन्हें गाड़ियों में बैठाकर वापिस अस्पताल भेज रहा था। मेरे एक भारतीय तोप ले जाने वाले के पैर में गोली लगी थी। गोली से उसके घुटने की हड्डी टूट गई थी। जो घोड़े तोप खींचते थे, उन पर यह आदमी बैठा था। मैंने पास जाकर घोड़ा रोकने को कहा, उसे उतारना चाहा। उसने कहा—'कुछ परवाह नहीं साहब।' मैंने जबरदस्ती हाथ पकड़कर उसे घोड़े से नीचे उतारा और डोली में बैठाकर अस्पताल भेजा। जो मैं न उतारता तो वह घोड़े पर ही रहता। हमारे साथी भारतीय ऐसे योद्धा, तेजस्वी और वीर थे। थोड़े से वेतन के बदले में उन्होंने इस प्रकार अपने प्राण दे दिए। उन्होंने किसी भी नृशंस भाव का परिचय नहीं दिया।"

परन्तु अंग्रेज इन प्रभु-भक्त, विश्वासी और स्वार्थत्यागी भारतीय वीरों के साथ कैसा व्यवहार करते थे ? मामूली, बहुत ही थोड़े वेतन के बदले में जो अपनी जानें खोकर भी अंग्रेजों की सेवा करते थे, अंग्रेज उनके साथ कैसा बर्ताव करते थे, इस विषय का ऐतिहासिक वर्णन बड़ा ही मर्मस्पर्शी और हृदयवेधी है। भारतीयों को अंग्रेज आदर की दृष्टि से कभी नहीं देखते थे, उनके साथ भला बर्ताव नहीं करते थे। भारतवासी विपत्ति से न डरकर, दुःखों से न घबराकर, विपक्षियों के डर से कातर न होकर, जीवन की ममता त्यागकर जिस प्रकार

अंग्रेजों का काम करते थे, अंग्रेज यदि उनसे मीठी तरह से हँस-बोलकर काम लेते तो मनुष्यत्व की रक्षा होती। परन्तु, हँसना-बोलना तो दूर रहा, वे भारतीयों को कुत्ता समझते थे। वे चाहे जैसे हों, आदमी की सूरत वाले कुत्तों का विनाश करने में ही अपना कल्याण समझते थे। कोई भारतीय उनसे चाहे जैसी सज्जनता का व्यवहार क्यों न करे, पर वे उसे जंगली जानवर की तरह मारने के योग्य ही समझते थे। बावर्चीखाने के लड़कों पर भोजन पहुँचाने का भार था। जब विपक्षियों की गोलियाँ बरसती होतीं तब भी उन्हें यह काम करना पड़ता था। अंग्रेजों को उनके इस त्याग पर किसी तरह की संवेदना न थी। वे उन्हें फटकारते, मारते और धिक्कारते थे।

अंग्रेज इतिहासकारों का मत

सुप्रसिद्ध अंग्रेज इतिहासकार 'के' साहब ने उनकी इस मनोवृत्ति का वर्णन इस प्रकार किया है :—

"निरन्तर युद्ध और हत्याओं के कारण हमारे आदमी ऐसे निर्दयी हो गए थे कि वे भारतीयों का जीवन कुत्ते-बिल्ली की तरह भी नहीं समझते थे। सेनापति और अफसर लोग न उन्हें उपदेश देते और न उनके दोष दूर करते। उनके काम आदमी को चौंका देने वाले होते थे। उस समय भारतवासियों पर अंग्रेज जैसा क्रोध दिखाते थे, उसे यूरोपियन कदाचित् ही स्वीकार करें। बड़ी ही कठोरता होती थी उनके उस व्यवहार में। हमारे आदमी उनको मारते और उनकी दुर्दशा करते थे। तोपों पर तैनात गोरे लड़ाई के मौके पर पानी पिलाने के लिए भिश्तियों को अपने पास पकड़कर रखते। गोलियों की मार से उस समय बहुत से भिश्ती मारे गए थे। इन पर सबसे अधिक दया होनी चाहिए थी। सईस, घसियारे, डोली उठाने वाले आदि हमारा काम करते हुए घायल हो जाते थे। ये लोग महीनों तक गर्मी तथा बरसात में खुले मैदान में हमारे साथ रहते थे। जो घायल हो जाते थे उन्हें भी छाया नसीब न होती थी। फौजी डाक्टर उन्हें दो गज 'केनविस' भी न देते थे। दिल्ली के अधिकांश निवासी हमारा भला चाहते थे; परन्तु सबको मारने की घोषणा की गई थी। हमारे बच्चे तक भारतीयों के खून के प्यासे हो गए थे। वे प्राय: कहा करते थे कि तमाम अर्दलियों और नौकरों को गोली का निशाना बना दिया जाए।"

एक इतिहास-लेखक ने लिखा था :—

"वह शान्ति का समय न था, परन्तु हम समय के साथ न बदले। हमारी नियति लोहे के समान कठोर थी कि कड़ी आँच खाकर भी वह मुलायम न हुई। हम ऐसे उद्धत, असहिष्णु और अविवेकी थे कि हमने यह भी न देखा कि जिन्हें हम घृणा की दृष्टि से देखते थे, वे ही हमारी रक्षा कर रहे थे। जिस विपत्ति और संकट में दूसरे निस्तेज हो जाते हैं, उसी में हमारी जाति कठोरता और दृढ़ता सम्पन्न थी। मनुष्य की विचार-शक्ति जितना काम करती है, उससे उस समय हमारा नाश हो सकता था, परन्तु इसी कारण हम नष्ट होने से बचे।

इसी कारण हमारे विपक्षी झुके। उनको यह विश्वास हो गया था कि जब तक एक भी अंग्रेज जीवित रहेगा तब तक वह भारत में अपना राज्य स्थापित न कर सकेंगे। हमारी कमजोरी की हालत में भी हमें उनकी इसी भावना ने खड़ा रखा।''

एक और अफसर ने मेरठ से लिखा था कि ''गोरी सेना जब कानपुर होकर गई तब जिसको भी उसने देखा उसी को मारा था।''

एक अफसर ने और भी लिखा था :—''हमारी सेना जब दिल्ली में घुसेगी तब सब दिल्ली वाले मारे जाएँगे। कोई भी अफसर इस हत्या को न रोकेगा।'' सर जॉन लारेंस ने कहा था—''भारतवासियों से सहायता न पाने के कारण अर्थात् प्रबल गर्मी में नौकरों के अभाव के कारण यूरोपियन रोज मर रहे हैं।'' सेवा करने वाले भारतीय नौकरों को गोरे कभी संगीन से और कभी गोलियों से मार डालते थे। उस समय सेनापति विलसन ने आज्ञा प्रचारित की थी—''सेना में बहुत से नौकर गोरों की गोली और संगीनों से मारे गए। ऐसी बेरहमी से सेना के सारे नियम टूट जाएँगे। नौकरों में भय फैलेगा, वे काम छोड़कर भाग जाएँगे। बहुत से भागने का इरादा भी कर रहे हैं।'' क्रोध और उत्तेजना के कारण उस समय अंग्रेजों में भला-बुरा सोचने की शक्ति न थी। एक अधीन जाति को अपने विरुद्ध उठते हुए देखकर वे ऐसे क्रोधित हुए थे कि अपनी सेवा करने वाले नौकरों की जान ले लेते थे। परन्तु अंग्रेजों की ऐसी क्रूरता और ऐसे निर्दयतापूर्ण व्यवहार के अवसर पर भी भारतवासी अपने कर्त्तव्य से न हटे। उन्होंने अपने दया-धर्म का त्याग न किया। मनुष्य-घातक कठोर प्रवृत्ति के प्रति भी सदैव कोमल प्रवृत्ति का उदय हुआ था। अंग्रेज जिन भारतीयों को नष्ट करना चाहते थे, उन भारतीयों की दया का ऐसे विषम समय में भी कोई ठिकाना न था।

दिल्ली पर कब्जा और कत्ले आम

अपने ही 'विभीषणों' की कृपा से दिल्ली पर अंग्रेजी राज्य फिर प्रतिष्ठित हुआ। सिपाही अपनी मूर्खता के कारण हारकर उत्साहहीन हुए। अब अंग्रेजी सैनिकों को अपनी हिंसा पूरी करने का पूर्ण अवसर मिल गया। जहाँ एक दिन अंग्रेज मारे गए थे, जहाँ अनेक असहाय स्त्रियों और बच्चों का खून बहा था, वहीं के शासक फिर अंग्रेज बने। लड़ाई तो समाप्त हुई, अब बदला प्रारम्भ हुआ। अंग्रेज सैनिकों ने दिल्ली में फिर कत्ले आम का दृश्य उत्पन्न किया। जो सामने पड़ता वही उनकी गोली का निशाना बनता। दिल्ली-निवासियों की सम्पत्ति लूटना और उन्हें संगीनें भोंककर मारना इनका काम हो गया। जिन्होंने अंग्रेजों का खून किया था, या उन्हें हानि पहुँचाई थी, उनके साथ तो इस व्यवहार को बदला कहा जा सकता है; किन्तु जो शान्त रहे थे, जिन्हें सिपाहियों ने भी सताया था, उन निरीह निवासियों को मारना तो निःसन्देह नीचतापूर्ण कृत्य था। इसमें बहुत से नगरवासी मारे गए। शहर के व्यापारी और शान्त व्यवसायी तक गोरों की तलवारों और संगीनों तथा बन्दूकों के शिकार हुए। उस समय दिल्ली की चहारदिवारी के भीतर जो भी थे वे सब अंग्रेजों के

दुश्मन माने गए और इस कारण उन पर किसी भी प्रकार की दया दिखाना अन्याय हो गया। शान्त-अशान्त, भले-बुरे, छोटे-बड़े सबको एक-सी ही सजा दी जा रही थी। दिल्ली पर कब्जा होने के कुछ दिन तक इसी प्रकार लोग अन्धाधुन्ध मारे गए। वीर अंग्रेज सेनापतियों ने भी इसका अनुमोदन किया। लड़ाई में जो घायल हो गए थे या जिनके हाथ-पैर कट गए, उन पर भी दया न की गई। भारतीय सिपाही लगभग एक सौ बीमारों और घायलों को एक स्थान पर छोड़ गए थे, गोरों न इन पर दया न की और संगीनों से मार डाला। एक अंग्रेज इंजीनियर ने इस समय की घटना का इस प्रकार वर्णन किया है :—

"एक सिपाही के दोनों हाथ तलवार से कट गए थे। शरीर में गोली लगी थी, पेट में दो जगह संगीन घुसी थी, फिर भी वह जीवित था। इस प्रकार के असहाय और दुर्दशाग्रस्त प्राणी पर भी गोरे सैनिकों को दया न आई और उन्होंने उस सिपाही के सिर में गोली मार दी। यह देखकर मुझे बहुत दु:ख हुआ और लज्जा भी अनुभव हुई।"

बहादुरशाह की गिरफ्तारी

दिल्ली के वृद्ध और नेत्रहीन बादशाह को गिरफ्तार करते और उससे हथियार छीनते समय कप्तान हडसन ने इनके साथ जो अपमानजनक बर्ताव किया था, उसकी कई अंग्रेज लेखकों ने निन्दा की है। परन्तु उनके तीन शाहजादों की हडसन ने जिस निर्दयता से हत्या की थी, उसका वर्णन पढ़कर तो कठोर से कठोर हृदय को धक्का लगता है।

सम्राट् को दिल्ली के एक महल में नज़रबन्द कर दिया गया। हडसन उस समय पैशाचिक प्रतिहिंसा से पागल हो रहा था और अन्त में उसने उसके तीन निर्दोष शाहजादों मिर्जा मुगल, मिर्जा ख्वाजा सुलतान और अब्दुल बकर को ढूँढ़कर दिल्ली की खास सड़क पर, दिल्ली वालों की निगाहों के सामने, उनकी नाक के नीचे, गोली का निशाना बनाया। मुट्ठीभर सैनिकों की छाया में खड़े हुए हडसन के इस दानवीय कृत्य को देखकर भी हजारों की संख्या में उपस्थित दिल्ली के निवासियों ने चूँ तक नहीं की। नृशंसता यहीं पर समाप्त नहीं हुई; निरीह शाहजादों की लाशों को प्रतिहिंसा से पागल हुए अंग्रेज अफसरों ने कोतवाली के सामने ले जाकर लटका दिया। जो आता, देखकर चला जाता, चुपचाप आँसू बहाता हुआ।

निर्वासन-दण्ड

बन्दी बहादुरशाह को निर्वासन-दण्ड की आज्ञा सुनाई गई। बहादुरशाह ने आज्ञा सुनी। कलेजा मुँह को आता था; किन्तु वह लाचार था, चुप। अन्त में वह मनहूस दिन भी आ पहुँचा जब बहादुरशाह को दिल्ली छोड़ देने के लिए तैयार होना पड़ा। वही दिल्ली, जिसकी जलवायु उसकी रग-रग में समाई हुई थी। वही दिल्ली जो शताब्दियों तक उसके वंश की गौरव-मर्यादा रही थी जहाँ उसके पूर्वजों ने जन्म लिया था और मर गए थे। जहाँ का जर्रा-जर्रा उसकी शौको-तमन्ना की दुनिया में सैर करता था।

बहादुशाह की सवारी दिल्ली से गुजर रही थी। सड़क पर अपार भीड़ थी। दिल्ली की हर गली और कूचा सूना हो गया था। हजारों आँखें सम्राट् के जर्द मुख पर जमी थीं। एक-एक आँख से हजार-हजार आँसू निकल रहे थे। हजार-हजार आँखों के आँसू उसकी—बहादुरशाह की एक-एक आँख में भरे थे। धूल-धूसरित मुख पर खिंची हुई वेदना की काली रेखाएँ चारों ओर शोरो-मातम बरपा कर रही थीं। दिल्ली रो रही थी। दिल्ली के लोग रो रहे थे और बहादुरशाह, उजड़ी हुई राजधानी का बन्दी बादशाह सदा के लिए चला जा रहा था अपनी जननी जन्मभूमि से दूर, जहाँ उसका अपना कोई न था।

अँधेरी कोठरी में

रंगून में वह एक जगह तंग अँधेरी कोठरी में डाल दिया गया था। वह दिनभर अपनी कोठरी में पड़ा-पड़ा हुक्का गुड़गुड़ाया करता था। न वह किसी से बोलता था और न कोई उससे बोलता था। जब कभी वह अन्दर पड़ा-पड़ा ऊब जाता था तो दो-चार पहर के लिए कोठरी से बाहर निकल पड़ता था या अपने शैरों को गुनगुनाया करता था जिनके एक-एक शब्द में उदासी भरी पड़ी है, जिनमें भग्न हृदय की व्यथा मचलती मालूम पड़ती है, जिनमें रंजोगम का एक आलम आबाद है, जिनमें दिलो-दिमाग को रंगीन करने वाली ऐशो-इशरत की आवाजें नहीं, किन्तु दिल के टुकड़े-टुकड़े कर देने वाली सर्द आहें भरी हैं।

बेबस सम्राट् यदि रोना भी चाहता था, तो रो नहीं पाता था। दिन-रात चिन्ता का भार अकेले ही ढोते-ढोते उसका शरीर सूखकर काँटा हो गया था। अन्त में 7 नवम्बर, सन् 1862 ई. को शक्तिशाली मुगल-वंश का टिमटिमाता दीपक अपनी दुःखभरी कहानी छोड़कर सदा के लिए बुझ गया।

कारागार के अहाते में, जहाँ उसने अपने अन्तिम दिन व्यतीत किए थे, उसे दफना दिया गया। इसी मज़ार पर रंगून में नेताजी सुभाष ने अब एक नया मकबरा बनवा दिया है। यहीं पर नेताजी ने, आजाद हिन्दुस्तान के उस पहले सुलतान ने, उस अन्तिम सम्राट् के मूक आह्वान को सुना था।

सन् 1857 की इस अमर क्रान्ति की छाया में पलती हुई हमारी राजनीति पर इसका प्रभाव बहुत ही क्रान्तिकारी सिद्ध हुआ है और देश ने अँगड़ाई ली है। जब तक हम इस क्रान्ति का पाठ अखण्ड रूप से न करने लगेंगे तब तक स्वतन्त्रता का स्वप्न केवल स्वप्न ही रहेगा। हमें तो सर्वदा बहादुरशाह के इस शेर को क्रियात्मक रूप देना है—

"गाज़ियों में बू रहेगी जब तलक ईमान की।
तख्ते लन्दन तक चलेगी तेग हिन्दुस्तान की॥"

2

राष्ट्रीय जागरण

सन् 1857 के विद्रोह से जब भारतीयों को पराधीनता का कटु अनुभव हुआ तो वे अपने आदर्श पर ध्यान रखते हुए तात्कालिक कठिनाइयों के निराकरण के लिए कटिबद्ध हो गए; परन्तु शासकों के प्रति अशिष्ट व्यवहार उनका कभी भी नहीं रहा। जो स्वतन्त्रता की अखण्ड लौ सन् सत्तावन में प्रज्वलित हुई थी, उसका प्रकाश देश में फैलना स्वाभाविक था। परिणामस्वरूप विशुद्ध अहिंसात्मक ढंग से अपने अधिकारों की सुरक्षा के लिए भारत के हितैषी नेताओं ने प्रयत्न भी प्रारम्भ कर दिए।

कांग्रेस की स्थापना

28 दिसम्बर, सन् 1885 ई. को दिन के बारह बजे 72 व्यक्तियों की एक टोली बम्बई में भारत की आजादी के प्रश्न पर विचार-विनिमय करने के लिए बैठी। यहीं भारतीय कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन था। इससे पूर्व 1884 ई. में कांग्रेस की स्थापना हो चुकी थी। ये 72 व्यक्ति भारत के गिने-चुने प्रतिनिधि थे। इनके साथ 30 व्यक्ति और थे जो सरकारी नौकर होने के कारण नियमित रूप से इस कार्रवाई में भाग नहीं ले सकते थे, किन्तु उनकी पूरी सहानुभूति इनके साथ थी। अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। कुल 9 प्रस्ताव इस सभा में विचारार्थ प्रस्तुत किये गए। पहले प्रस्ताव में तत्कालीन भारतीय शासन के लिए एक कमीशन की माँग की गई थी, दूसरे में भारत-सचिव की कौंसिल को उठा देने की माँग थी। तीसरे में लेजिस्लेटिव कौंसिलों का सुधार, चौथे में अन्यान्य विषयों की जाँच और पाँचवें में सैनिक-खर्चे में वृद्धि होने की कैफियत माँगी गई थी। छठे में बर्मा को मिलाने का विरोध, सातवें में इन प्रस्तावों की प्रतिलिपियों को राजनैतिक संस्थाओं के पास भेजने और आठवें में इस संस्था का प्रचार तथा नवें में कलकत्ता में अगामी कांग्रेस का अधिवेशन होने की बात थी। इस बैठक के विषय में श्री उमेशचन्द्र बनर्जी ने कहा था—"भारतवर्ष के इतिहास में समस्त वर्गों के प्रतिनिधि भारतीयों की ऐसी महत्त्वपूर्ण बैठक कभी नहीं हुई।"

दूसरा अधिवेशन

कांग्रेस का दूसरा अधिवेशन नियत समय पर कलकत्ता में हुआ। दादा भाई नौरोज़ी इस अधिवेशन के सभापति थे। इस अधिवेशन में पहले-पहल तमाम भारत में प्रतिनिधिक

संस्थाओं की स्थापना की माँग की गई थी। इस रुख को देखकर भारत सरकार की चिन्ता कुछ बढ़ने लगी। कुछ अधिकारी खुल्लमखुल्ला इसकी शिकायत करने लगे और धमकियाँ देने लगे। 1818 ई. में लार्ड डफरिन ने ब्रिटिश सरकार से गुप्त मन्त्रणा की कि यद्यपि बाहर से इस संस्था का विरोध किया जा रहा है तथापि इसकी कुल माँगों को शीघ्र स्वीकार कर लेना चाहिए। फलस्वरूप कौंसिलों के सुधार की माँग मंजूर कर ली गई और उसका परिणाम यह हुआ कि इस संस्था के सदस्यगण कुछ ठोस रचनात्मक कार्य करने के बजाय कौंसिलों का चुनाव लड़ने लगे। लार्ड डफरिन की नीति काम कर गई। बढ़ता हुआ आन्दोलन कुछ दिन के लिए शान्त हो गया और लार्ड लैंसडाउन और एलगिन के शासन काल में यह संस्था सोडावाटर की बोतल बन गई।

किन्तु यह संस्था मरने के लिए पैदा नहीं हुई थी। लार्ड कर्जन आए और उन्होंने इस निर्दयता से शासन करना प्रारम्भ किया कि भारतीयों में विद्रोह की भावना जागृत हो गई। सारे देश में एक सनसनी पैदा हो गई और लोगों का ध्यान फिर इस संस्था को बलवान बनाने की ओर गया। लोग समझने लगे कि केवल प्रस्ताव पास कर देने से ही काम न चलेगा। अत: पूरे देश ने मिलकर यह निश्चित किया कि ब्रिटिश माल का बहिष्कार किया जाए। प्रस्ताव तो पास हो गया किन्तु इसे क्रियात्मक रूप देने में नरमी दिखाई जाने लगी। अन्त में 1908 की कांग्रेस ने काशी में यह प्रस्ताव पास किया कि बंग-भंग के सिलसिले में विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार अवश्य किया जाए; किन्तु इसे अखिल भारतीय कांग्रेस की ओर से कोई सहायता न मिलेगी।

दूसरे वर्ष अर्थात् 1909 ई. में कांग्रेस का अधिवेशन होने वाला था। बंगाल की तरुणाई उग्र नीति को क्रियात्मक रूप देने के लिए छटपटा रही थी। उसने प्रस्ताव पास किया कि लोकमान्य तिलक इस अधिवेशन के सभापति बनाये जाएँ। बस, फिर क्या था ? तात्कालिक दक्षिणपक्षियों के कान खड़े हो गए और उन्होंने षड्यन्त्र करना प्रारम्भ किया कि लोकमान्य तिलक इस अधिवेशन के सभापति न होने पाएँ। उस समय ऐसा कोई दूसरा व्यक्ति नहीं था जो लोकमान्य के मुकाबले में डट सकता। अत: दक्षिणपक्षियों ने दादा भाई नौरोजी को येन-केन प्रकारेण इस अधिवेशन का सभापतित्व करने के लिए राजी कर लिया। उनकी इस चाल में उनकी तात्कालिक विजय तो अवश्य हो गई, किन्तु इसका परिणाम उलटा निकला। उन लोगों ने सोचा था कि दादा भाई नौरोजी नरम दल की तरफदारी करेंगे; किन्तु उनकी यह धारणा सर्वथा निर्मूल सिद्ध हुई और उन्होंने 'गरम दल' की ही नीति का आश्रय लिया। यहाँ से कांग्रेस में 'नरम दल' और 'गरम दल' नामक दो दल हो गए।

इस घटना के उपरान्त नरम और गरम दल में अन्तर दिन-प्रतिदिन बढ़ता गया और धीरे-धीरे यह खाई चौड़ी होती गई। परिणाम यह हुआ कि सूरत कांग्रेस के अवसर पर भयंकर फूट की आशंका उत्पन्न हो गई। सूरत के इस अधिवेशन के सभापति सर फिरोजशाह

मेहता थे। खुले अधिवेशन में उन पर जूता फेंका गया। इस अवांछनीय परिस्थिति से खिन्न होकर सभापति ने अधिवेशन बन्द कर दिया। उस समय ऐसा मालूम होता था कि इस अधिवेशन में कोई नीति स्थिर ही न हो सकेगी; किन्तु दूसरे ही दिन नरम दल वालों ने एक मसविदा तैयार किया, जिसमें भारत का उद्देश्य औपनिवेशिक स्वराज्य और वह भी वैधानिक तरीकों से घोषित किया गया। यह प्रस्ताव तो पास हो गया; किन्तु गरम दल वाले कांग्रेस से पृथक हो गए। उनका सहयोग करीब-करीब बन्द हो गया। किन्तु फिर सन् 1916 में लखनऊ की कांग्रेस में सब दल एक हो गए और कांग्रेस एक नीति पर चलने लगी।

सत्याग्रह की शुरुआत

महायुद्ध के शुरू होने पर भारतवर्ष ने सब बातों को भूलकर दिल खोलकर ब्रिटिश सरकार की सहायता की। गांधीजी ने स्वयं चंदा उगाहने और सैनिक भर्ती करने का काम प्रारम्भ कर दिया। तत्कालीन प्रधान मन्त्री लायड जार्ज ने खुले तौर पर घोषणा की कि भारत ने जो अमूल्य सेवाएँ की हैं, उन्हें ब्रिटिश सरकार भूल नहीं सकती और जिस समय शान्ति सम्मेलन सफलतापूर्वक समाप्त हो जाएगा, उस समय ही भारत की पूर्ण वैधानिक उन्नति के लिए प्रयत्न प्रारम्भ कर दिए जाएँगे। इधर तो यह आश्वासन दिया गया और उधर लड़ाई की समाप्ति पर भी रौलट एक्ट को चालू करने की योजना कौंसिल में पेश हुई। सारे भारत ने एक स्वर से इसका घोर विरोध किया; किन्तु सरकार ने एक न सुनी। यहाँ तक कि कांग्रेस के तत्कालीन सभापति सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी तक ने भी प्रार्थना की, परन्तु वह भी ठुकरा दी गई। इससे सारा जनमत क्षुब्ध हो गया। गांधीजी लड़ाई के लिए तैयार ही थे। सत्याग्रह शुरू हुआ। सत्याग्रह प्रारम्भ करने का पहला दिन आत्मशुद्धि-दिवस के रूप में मनाया गया। गांधीजी तथा उनके अनुयायियों और करोड़ों जनता ने 24 घण्टे का उपवास किया और उपवास का समय प्रार्थना में व्यतीत हुआ।

उस समय देश में जो जागृति दिखाई देती थी वह अभूतपूर्व थी। जिस वेग से आन्दोलन चला उसे देखकर मालूम होता था कि इसमें अप्रत्याशित सफलता मिलेगी; किन्तु गांधीजी की गिरफ्तारी और डा० किचलू तथा डा० सत्यपाल के देश-निर्वासन की बात से स्थिति और भी नाजुक हो गई। जनता का उत्साह तो कम हो ही गया, साथ ही अहमदाबाद और अमृतसर में जनसमूह ने हिंसावाद कर दिया। गांधीजी की आत्मा को इससे बहुत ठेस पहुँची और उन्होंने बिना तैयारी के आन्दोलन प्रारम्भ करने की अपनी गलती को महसूस किया तथा सत्याग्रह तुरन्त बन्द कर दिया।

जलियाँवाला काण्ड

डाक्टर सत्यपाल और डाक्टर किचलू की गिरफ्तारी के कारण पंजाब में आन्दोलन का श्रीगणेश हुआ और वहीं घोर दमन-चक्र चलना प्रारम्भ हो गया। इसी समय महात्मा गांधी को भी जो पंजाब की ओर जा रहे थे, दिल्ली के समीपवर्ती एक स्टेशन पर गिरफ्तार

करके बम्बई भेज दिया गया। आपकी गिरफ्तारी के समाचार से तो देश में और भी विद्रोह की भीषण लहर दौड़ गई और कलकत्ता तथा बम्बई आदि कई स्थानों में आन्दोलन हो गया। 13 अप्रैल, सन् 1919 को वैशाखी का दिन था। उस दिन अमृतसर के जलियाँवाला बाग में एक सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया था। इस दिन अमृतसर में नौकरशाही का असली रूप प्रकट हो गया। जलियाँवाला बाग में जुटी हुई निरीह जनता को तितर-बितर हो जाने की आज्ञा दिए बिना ही, उस पर जनरल डायर ने गोलियाँ दागने की आज्ञा दे दी। दस मिनट के अन्दर ही 1650 गोलियाँ दागी गईं। कमीशन के सामने अपना बयान देते हुए जनरल डायर ने कहा था कि यदि उसके पास और गोलियाँ होतीं तो वह बिना किसी हिचक के और भी गोलियाँ चलाता। इतना ही नहीं, उसने यहाँ तक कहने की हिम्मत की थी कि यदि उसे यह सुविधा होती कि जलियाँवाला बाग में मशीनगनें लाई जा सकें तो वह लाता और उन्हें प्रयुक्त भी करता।

असभ्य देशों की बात तो हम नहीं कह सकते किन्तु सबसे प्राचीन देश, इस भारतवर्ष में ऐसा भीषण अत्याचार निरीह जनता पर कभी नहीं हुआ था, जैसा सन् 1919 के अप्रैल मास की 13 तारीख को पंजाब की जनता पर सभ्य बनने वाली अंग्रेज जाति के कुछ अफसरों ने किया। ऐसा घोर अत्याचार तो कभी 'नादिरशाह' से भी नहीं हो सका था। पंजाब के अत्याचार राक्षसी अत्याचार थे और कई प्रमाणों तथा कई अत्याचारियों के ही मुख से यह बात सिद्ध हो गई है कि वे जनता में आतंक फैलाने के लिए और जातीय पक्षपात के वशीभूत होकर किये गए थे। 1919 के अप्रैल में हमारे पंजाबी भाइयों पर क्या-क्या अत्याचार नहीं किये गए ? इस समय हमारे प्रतिष्ठित से प्रतिष्ठित नेता भी अपमानित किए जाने के लिए पकड़ लिये गए, जिन्होंने यथाशक्ति देश को उपद्रव करने से रोका था। अनेक प्रतिष्ठित पुरुषों को अकारण पकड़कर हथकड़ियाँ पहनाकर बीच बाजार से पैदल निकाला गया। लोग लोहे के बने पिंजरों के भीतर बन्द किये गए। खुले आम सड़कों पर कितने ही व्यक्तियों को नंगा करके, उनके चूतड़ों पर बड़ी निर्दयतापूर्वक बेंत लगाये गए। बेंत की मार से बेहोश होने पर लोगों को पानी पिला-पिलाकर पीटा गया। भारतवासियों से जबरदस्ती गोरों को सलाम कराया गया। सलाम न करने पर उन्हें बेंत लगाये गए, लोगों से जमीन में माथा टिकवाया गया। हमारी बहनों, बेटियों और माताओं का घोर अपमान किया गया। उनके घूँघट हटाकर उनकी लज्जा हरी गई। उनके मुँह पर थूका गया, और उन्हें भद्दी-भद्दी गालियाँ सुनाई गईं। निरीह जनता पर हवाई जहाजों से बम बरसाये गए। लोगों को पेट के बल रेंगने के लिए लाचार किया गया। और यहाँ तक कि कितनों ही से नाक से लकीरें खिंचवाई गईं। इसके अतिरिक्त और भी कितने ही प्रकार के राक्षसी अत्याचार निरीह जनता पर किये गए और आश्चर्य तो यह है कि ये अत्याचार बीसवीं शताब्दी के स्वतन्त्रता और स्वभाग्य-निर्णय के काल में तथा संसार से दासत्व की प्रथा का मूलोच्छेद कर देने का दावा करने वाली अंग्रेज जाति के शासन-काल में किये गए।

जुल्म की कहानी, जालिम की जबानी

जलियाँवाला बाग के इस रोमांचक काण्ड के सम्बन्ध में जाँच करने से जिन बातों का पता चला था उनसे चारों ओर खलबली मच गई। इस काण्ड की जाँच करने के लिए एक कमीशन नियुक्त किया गया। उस कमीशन के सामने अत्याचारी जनरल डायर ने जो बयान दिए थे, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं :—

प्रश्न—फायर करने से क्या तुम्हारा उद्देश्य भीड़ को तितर-बितर करना था ?

उत्तर—नहीं साहब, जब तक भीड़ तितर-बितर न हो ले, तब तक फायर जारी रखने का मेरा विचार था।

प्रश्न—जैसे ही तुमने फायर प्रारम्भ किए थे, वैसे ही भीड़ तितर-बितर होने लगी थी क्या ?

उत्तर—तुरन्त ही।

प्रश्न—तुमने फायर जारी ही रखे ?

उत्तर—हाँ।

प्रश्न—जब भीड़ तितर-बितर होने लगी थी, तुमने फायर क्यों नहीं बन्द किए ?

उत्तर—मैंने अपना कर्त्तव्य समझा कि जब तक भीड़ तीतर-बितर न हो जाए, तब तक मैं फायर जारी रखूँ। यदि मैंने थोड़ी ही देर फायरिंग की होती तो वह मेरी भूल होती।

इसके अनन्तर अनेक प्रश्नों के उत्तर में जनरल डायर ने कहा कि "मैंने कोई दस मिनट तक फायर जारी रखे। मुझे इस प्रकार के सैनिक उपाय से काम ले भीड़ को तितर-बितर करने का कुछ भी अनुभव न था। और शायद बिना फायर किए ही मैं लोगों को तितर-बितर कर सकता था। परन्तु मैंने फायर किए; क्योंकि यदि मैं ऐसा न करता तो भीड़ के पुनः लौट आने की आशंका थी।"

फायर करने के कारण बताते हुए उसने एक दूसरे प्रश्न के उत्तर में कहा, "मैंने सोचा कि भीड़ मुझ पर और मेरे सैनिकों पर आक्रमण करने का प्रयत्न कर रही है। इस सबसे पता चलता था कि वह बहुत दूर तक फैली हुई लहर है, जो अमृतसर तक ही सीमाबद्ध नहीं है और स्थिति नाजुक है।"

जनरल डायर ने 1650 गोलियाँ चलाई थीं। उसने यह भी स्वीकार किया कि यदि मशीनगन और तोपें मैं बाग के भीतर ले जा सकता तो ले जाकर उन्हीं से अग्निवर्षा प्रारम्भ कर देता और मैंने तब गोलियाँ चलानी बन्द कीं जब सब गोलियाँ ख़त्म हो गईं। भीड़ बहुत थी, मैंने घायलों को सहायता देने या उठाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। उस समय सहायता

करना मेरा कर्त्तव्य नहीं था। यह डाक्टरी प्रश्न था। फायर बन्द करते ही मैं वापस लौट गया। बीच में मैं अपने फायर बन्द कर देता और ऐसे स्थानों पर फायर करता जहाँ भीड़ सबसे अधिक होती। ऐसा मैंने इसलिए किया कि भीड़ जल्दी नहीं छँट रही थी, बल्कि इसीलिए मैंने यह दृढ़ निश्चय कर लिया था कि इकट्ठा होने की सजा भीड़ को दी जाए।''

शाबाश ऊधमसिंह

बाद में पंजाब के उसी अत्याचारी, जलियाँवाला बाग के राक्षस को भारत के एक मोहम्मदसिंह 'आजाद' नामक तरुण ने सन् 1941 के किसी मास में इंग्लैंड के कैवस्टन हॉल में मौत के घाट उतार दिया। उनके साथ ही भारत-मन्त्री जैटलैंड भी घायल हो गए। जनरल डायर की मृत्यु पर जर्मन-रेडियो ने टिप्पणी कसी-''क्षुब्ध राष्ट्र गोलियों से बात करता है।''

जनरल डायर को मौत के घाट उतारने वाले यह मुहम्मदसिंह 'आजाद' नामक व्यक्ति 'ऊमधसिंह' नाम के कोई सिख नौजवान थे, जो करीब पन्द्रह वर्ष से इंग्लैंड में डायर के खून के प्यासे होकर घूम रहे थे। उन्हें फाँसी पर चढ़ा दिया गया। परन्तु इससे क्या ? भारत का इतिहास लिखते समय कम से कम यह तो नहीं लिखा जाएगा कि जलियाँवाला बाग का बदला भारतीय नहीं ले सके।

नया कदम

जलियाँवाला बाग की घटना के सम्बन्ध में जाँच करने से जिन बातों का पता चला, उनसे चारों ओर खलबली मच गई थी। शासन-सुधारों की घोषणा ने जले पर नमक छिड़कने का कार्य किया। भारत को अपार धन और जन के बलिदान के उपरान्त जो तथ्यहीन शासन-सुधार मिले, वे बहुत ही अपमानजनक प्रतीत हुए; किन्तु गांधीजी तथा अन्य उदारदलीय नेताओं के आग्रह से कांग्रेस ने इन शासन-सुधारों को क्रियात्मक रूप देने का प्रस्ताव स्वीकार किया। किन्तु, गोरी नौकरशाही की तबियत तो बदली नहीं थी; अत: दूसरे वर्ष यानी 1920 ई. में राष्ट्र को नया कदम उठाना पड़ा। पंजाब-काण्ड के अपराधियों के साथ कोई सख्त कार्रवाई नहीं की गई। खून के हज्म न होने पर भी खूनी बेदाग छोड़ दिये गए। इससे चारों ओर असन्तोष बढ़ गया। मुसलमानों के क्षुब्ध होने का एक और कारण पैदा हो गया। तुर्की और इस्लाम के बादशाहों के सम्बन्ध में प्रधान मन्त्री ने जो वायदे किए थे, वे पूरे होते न दीख पड़े। इस अवसर पर गांधीजी ने राष्ट्र की नब्ज पहचान ली और असहयोग का शंखनाद कर दिया।

असहयोग की घोषणा

गांधीजी ने असहयोग की घोषणा कर दी। जनता ने अपूर्व उत्साह और उमंग के साथ गांधीजी की इस घोषणा का स्वागत किया। असहयोग के कारणों का उल्लेख करते

हुए उस समय गांधीजी ने कहा था, "मुसलमानों के साथ ब्रिटिश सरकार ने तुर्की और खिलाफत के मामले में विश्वासघात किया है। इसने पंजाब का अपमान किया है। सरकार जनता की इच्छा के विरुद्ध उस पर जबरदस्ती हुकूमत स्थापित करना चाहती है और पंजाब में अपने किये गए कुकर्मों पर पश्चात्ताप का नाम भी नहीं लेना चाहती।" असहयोग के बाद लोग सत्याग्रह तथा लगानबन्दी के लिए आन्दोलन करने लगे। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने प्रान्तीय कांग्रेस-कमेटियों को अधिकार दिया कि वे सामूहिक या वैयक्तिक सत्याग्रह छेड़ सकती हैं, बशर्ते कि उनके यहाँ इसके लिए उचित तैयारी हो। गुजरात प्रान्त ने इसमें आगे कदम उठाया। बारडोली में गांधाजी के नेतृत्व में सत्याग्रह प्रारम्भ करने की बात निश्चित हुई। 23 नवम्बर, सन् 1920 को सत्याग्रह छिड़ने वाला था। किन्तु 17 नवम्बर को प्रिंस ऑफ वेल्स के भारत-आगमन पर सारे देश में जो हड़ताल मनाई जा रही थी, उस सम्बन्ध में बम्बई में एक दुर्घटना हो गई। गांधीजी ने इसके लिए हार्दिक दु:ख प्रकट किया और उपवास तथा प्रार्थनाएँ कीं।

इस परिस्थिति से सरकार कुछ घबरा गई थी। सबसे अधिक उसकी घबराहट बढ़ी राजकुमार के आगमन के समय हड़ताल की सफलता देखकर। बस, उसने दमन करने की ठानी। खिलाफत और कांग्रेस-कार्य के लिए की जाने वाली सभाएँ ग़ैरकानूनी घोषित कर दी गईं। इस घोषणा के कारण बहुत सी गिरफ्तारियाँ हुईं। देशबन्धु चितरंजन दास भी गिरफ्तार कर लिये गए। वे ही कांग्रेस अधिवेशन के सभापति होने वाले थे। सरकार के इस रुख से हतोत्साहित न होकर कांग्रेस कमेटी ने सारे देश में स्वयंसेवकों की भर्ती प्रारम्भ कर दी और ब्रिटिश सरकार की चुनौती का जवाब देने की तैयारियाँ होने लगीं। अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति ने गांधीजी को अपना सर्वाधिकारी चुनने के साथ कांग्रेस की बागडोर उनके हाथों में ही सौंप दी।

फरवरी, 1922 ई० में गांधीजी ने वायसराय को इस आशय का पत्र लिखा कि यदि सात दिन के अन्दर-अन्दर सरकार ने अपनी नीति में कोई परिवर्तन करने की घोषणा न की तो बारडोली में सामूहिक सत्याग्रह प्रारम्भ किया जाएगा। यह पत्र वायसराय के पास पहुँचने भी न पाया था कि चौराचौरी की ऐतिहासिक घटना हुई। शीघ्र ही कार्यसमिति की एक असाधारण बैठक बुलाई गई और सत्याग्रह को अनिश्चित समय के लिए स्थगित करने का निश्चय किया गया। साथ ही यह भी तय हुआ कि कांग्रेस विशेषत: रचनात्मक कार्य में ही अपना समय लगाए। कांग्रेस के कम से कम एक करोड़ सदस्य बनाये जाएँ और चर्खे तथा स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार किया जाए। अस्पृश्यता-निवारण, साम्प्रदायिक एकता, राष्ट्रीय पाठशालाओं का संगठन तथा झगड़ों के निपटाने के लिए ग्राम पंचायतों के निर्माण की योजना तैयार की गई। रचनात्मक योजना के प्रारम्भ करते समय लोगों के जोश ठंडे पड़ गए थे। इसके अतिरिक्त सरकार ने गांधीजी को इसी समय एक लम्बी अवधि के लिए गिरफ्तार करके हवालात में डाल दिया। इससे कार्य की गति और भी मन्द पड़ गई।

तिलक और देशबन्धु का निधन

महात्मा गांधी के जेल में चले जाने के उपरान्त राष्ट्रीय नेताओं में कुछ विषयों को लेकर आपस में मतभेद उत्पन्न हो गया ; परन्तु महात्माजी के जेल से छूटने के पश्चात् यह मतभेद शीघ्र ही दूर कर दिया गया। इसी समय जबकि देश को और भी कर्मठ नेताओं की आवश्यकता थी, नागपुर-अधिवेशन के पूर्व ही कर्मवीर लोकमान्य बालगंगाधर तिलक अपने देशवासियों को 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' का पावन सन्देश देते हुए सदा के लिए भारत को रोता छोड़ गए। देश लोकमान्य के दारुण दु:ख की क्षति को भर भी नहीं पाया था कि अकस्मात् 16 जून, 1925 ई० को देशबन्धु चितरंजनदास स्वर्गवासी हो गए।

साइमन कमीशन का विरोध

सन् 1927 में कांग्रेस की राजनीति में एक भारी परिवर्तन हुआ। इस वर्ष मद्रास में कांग्रेस की बैठक हुई। इस बैठक में पहले पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव पेश हुआ और पास भी हो गया। इससे पूर्व के अधिवेशनों में भी स्वाधीनता का प्रस्ताव पेश हुआ था, परन्तु अस्वीकार कर दिया गया था। कारण यह था कि कांग्रेसियों को अब तक विश्वास था कि ब्रिटिश सरकार के अन्तर्गत रहते हुए भी भारतवर्ष पूर्ण स्वतन्त्रता का उपभोग कर सकता है। अतएव अधिकांश कांग्रेसी उस समय औपनिवेशिक स्वराज्य से ही सन्तुष्ट थे, किन्तु उनकी इस धारणा को साइमन कमीशन की नियुक्ति से ठेस पहुँची। इस कमीशन की घोषणा करते समय इसके उद्देश्य के सम्बन्ध में यह कहा गया था कि यह कमीशन भारतीय शासन-व्यवस्था की जाँच करेगा कि भारत के शासन में क्या-क्या सुधार किये जाएँ और भारत को कहाँ तक राजनीतिक अधिकार दिये जाएँ। इस प्रकार के महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए जिस कमीशन की नियुक्ति हुई, उसमें एक भी भारतीय का न रहना भारत के अपमान तथा चिन्ता का विषय हो गया। अतएव कांग्रेस महासमिति ने यह निश्चय किया कि समस्त देश में इस कमीशन का विरोध किया जाए और भारत का उद्देश्य पूर्ण स्वाधीनता रहे। परिणामस्वरूप 3 फरवरी, सन् 1928 को कमीशन भारत में आया और समस्त देश में उसका घोर विरोध किया गया।

जब साइमन कमीशन लाहौर में पहुँचा तो पंजाब केसरी लाला लाजपतराय के नेतृत्व में कमीशन का विरोध करने के लिए विराट् आयोजन किया गया। काले झंडों का प्रदर्शन और 'साइमन कमीशन वापस जाओ' के नारों द्वारा इसका विरोध करने का निश्चय किया गया। पुलिस वालों ने इस अवसर पर निरीह जनता पर आक्रमण करके लाठियों और डंडों का खुला प्रयोग किया। परिणाम यह हुआ कि पंजाब केसरी भी पुलिस के इस अत्याचार से न बच सके। इसमें उनको गहरी चोट लगी थी, जिससे उनका देहावसान हो गया।

नेहरू रिपोर्ट

मद्रास कांग्रेस के निर्णय के अनुसार कांग्रेस कार्यसमिति ने एक 'सर्व दलीय

सम्मेलन' करने का आयोजन किया और उसमें शासन-विधान की योजना बनाने की बात निश्चित की गई। उसी में एक उपसमिति का भी निर्माण किया गया, जिसके अध्यक्ष श्री मोतीलाल नेहरू बनाये गए। इस कमेटी ने सन् 1928 के अगस्त मास में अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की, जो भारतीय राजनीति के इतिहास में 'नेहरू रिपोर्ट' के नाम से विख्यात है। मद्रास-कांग्रेस में स्वीकृत पूर्ण स्वाधीनता के विरुद्ध भी 'नेहरू कमेटी' ने औपनिवेशिक स्वराज्य के आधार पर शासन-योजना तैयार की थी। उसके उपरान्त कलकत्ता में जब श्री मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन हुआ; तब इस आधार पर कि 'नेहरू कमेटी' की रिपोर्ट मद्रास-अधिवेशन में स्वीकृत पूर्ण स्वाधीनता के सिद्धान्त के प्रतिकूल तैयार की गई है, उसका विरोध किया गया। अपने पूज्य पिता की अध्यक्षता में तैयार की गई इस योजना के विरोधी नेता श्री जवाहरलाल नेहरू ही थे। बाप-बेटे की यह सैद्धान्तिक लड़ाई देखने ही योग्य थी। बहुमत पं० मोतीलाल नेहरू के ही पक्ष में था और कांग्रेस ने 'नेहरू रिपोर्ट' को मंजूर भी कर लिया, साथ में यह शर्त अवश्य रखी कि यह योजना 31 दिसम्बर, सन् 1929 तक अवश्य मंजूर कर ली जाए। साथ ही यह भी घोषणा की गई कि इस योजना के मंजूर न होने पर कांग्रेस असहयोग और सत्याग्रह की नीति अंगीकार करेगी।

ऐतिहासिक अधिवेशन

सन् 1929 के दिसम्बर मास में लाहौर में रावी के पुनीत तट पर कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन हुआ। भारतीय तरुणाई के बेताज बादशाह श्री जवाहरलाल नेहरू इस अधिवेशन के सभापति थे। देश ने काँटों का ताज बाप के सिर से उतारकर बेटे के सिर पर रखना ही उचित समझा। क्योंकि ब्रिटिश सरकार ने अधिवेशन के समय तक 'नेहरू रिपोर्ट' की योजना को स्वीकार नहीं किया था, अत: लाहौर कांग्रेस ने पूर्ण स्वाधीनता के प्रस्ताव को दोहराया। इधर ब्रिटिश सरकार की ओर से भारतीय समस्याओं को हल करने के लिए एक गोल-मेज-परिषद की तैयारी भी हो रही थी। वायसराय लार्ड इरविन कांग्रेस को इसमें भाग लेने के लिए फुसला रहे थे, कांग्रेस ने इसके बहिष्कार का प्रस्ताव पास किया और अपने दल के सभी केन्द्रीय तथा धारा सभाओं के सदस्यों को त्यागपत्र देने का आदेश दिया। अखिल भारतीय कांग्रेस की महासमिति को इसने अधिकार दिया कि जब आवश्यक समझे, यह समिति असहयोग तथा सत्याग्रह का आदेश दे सकती है। सन् 1930 की 26 जनवरी को सारे देश में 'स्वाधीनता दिवस' मनाने की अपील की गई और देश ने इस अपील का जो स्वागत किया, वह भारतीय स्वाधीनता के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा।

17 फरवरी को कार्यसमिति की बैठक हुई और उसने यह निश्चय किया कि अब सत्याग्रह करना ही होगा। साथ ही उसमें इस सत्याग्रह का सम्पूर्ण नेतृत्व करने का अधिकार महात्मा गांधी को दे दिया। 6 मार्च को गांधीजी ने एक पत्र वायसराय के पास भेजा जिसमें उन्होंने अपनी 11 शर्तें प्रस्तुत करके उनके पूरी होने की माँग की थी। नमक कानून तोड़ने

की अभिलाषा प्रकट करते हुए उन्होंने अपने पत्र में लिखा था, ''भद्र अवज्ञा शुरू करने और उन आपत्तियों का सामना करने, जिनसे मैं अभी तक डर रहा था, के पहले मैं चाहता हूँ कि आपके साथ कोई इस समस्या के सुलझने का मार्ग निकल आए। इस आन्दोलन के प्रारम्भ करते समय मेरे हृदय में जितना प्रेम, एक भारतीय के लिए है, उतना ही किसी अंग्रेज के लिए है। मैं आत्म-पीड़न से अंग्रेजों का हृदय परिवर्तन करना चाहता हूँ न कि उनका विनाश। आपको मालूम होना चाहिए कि मैं आप लोगों का कोई भी नुकसान करना नहीं चाहता, बल्कि मैं तो आप लोगों की सेवा करना चाहता हूँ।''

जब नौकरशाही ने महात्मा गांधी के उक्त पत्र पर कोई भी विचार नहीं किया और तत्कालीन वायसराय लार्ड इरविन ने साधारण-सा उत्तर भेज दिया कि,''भारत सरकार को गांधीजी के इस निर्णय से सख्त अफसोस है, क्योंकि इस नीति के अनुसरण से भारत में सार्वजनिक अशान्ति और असन्तोष ही फैलेगा।'' तो महात्मा गांधी ने रोटी की माँग के बदले पत्थर ही पाया और वे नमक-कानून तोड़ने के लिए तैयार हो गए।

डाँडी यात्रा

पत्र का उत्तर पाने के बाद गांधीजी ने अपने 79 साथियों सहित नमक-कानून तोड़ने के लिए 12 मार्च को डाँडी के लिए प्रयाण किया। मार्ग में भीड़ इकट्ठी होती और वे लोगों को विदेशी वस्त्र छोड़ने, नशा निषेध करने और भारत सरकार से असहयोग करने का उपदेश देते रहे। सबसे अधिक वे इस बात पर जोर देते कि सत्याग्रहियों को प्रत्येक अवस्था में अहिंसात्मक रहना आवश्यक है। देश की जनता पर गांधीजी की इस अपील का समुचित असर भी पड़ा और गाँवों के पटेल तथा सरकारी कर्मचारी धड़ाधड़ इस्तीफा देते गए। 24 दिन की लगातार यात्रा के बाद मुट्ठीभर अहिंसक सेना रण-स्थल पर पहुँची। 5 अप्रैल की रात को उपवास और प्रार्थना के बाद दूसरे दिन प्रात:काल गांधीजी समुद्र के किनारे गए। ठीक आठ बजे उन्होंने स्नान किया और समुद्र से मुट्ठीभर नमक छान लिया। मुट्ठीभर नमक बनाकर इतने बड़े साम्राज्य के साथ लड़ने की तैयारी का बहुत जगह उपहास किया गया। गांधीजी के नमक-कानून तोड़ते-तोड़ते सारे देश में नमक-कानून भंग करने की लहर दौड़ गई और हजारों व्यक्ति गिरफ्तार कर लिये गए। गांधीजी तथा नेहरू भी साथ-साथ गिरफ्तार कर लिये गए।

धरसना पर हमला

गांधीजी की गिरफ्तारी के बाद बड़ौदा के चीफ कोर्ट के भूतपूर्व प्रधान न्यायाधीश मौलाना अब्बास तैयब जी उनके उत्तराधिकारी हुए। वे भी गिरफ्तार कर लिये गए। उनके बाद श्रीमती सरोजिनी नायडू की बारी आई और वे भी गिरफ्तार कर ली गईं। इस प्रकार सब नेता क्रमश: गिरफ्तार होते गए और सत्याग्रह जोर पकड़ता गया। अन्त में इमाम साहब के नेतृत्व में 15000 स्वयंसेवकों ने धरसना नाम के नमक के डिपो पर हमला किया। केवल गिरफ्तारियों से काम चलता न देख सरकार ने इस समय लाठियाँ और गोलियाँ चलवा दीं।

धरसना के धावे से नमक तो न मिल सका, किन्तु लोगों में इससे नमक-कानून तोड़ने की अपार शक्ति पैदा हो गई।

ब्रिटेन की ऐतिहासिक यात्रा

इसके उपरान्त ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधान मन्त्री रैम्जे मैकाडानल्ड की घोषणा के आधार पर कार्य समिति के सब सदस्यों की रिहाई हो गई। जेल से मुक्त होने पर गांधीजी ने फिर वायसराय को पत्र लिखा, पीछे दोनों महानुभावों के बीच वार्तालाप भी हुआ। अन्त में 5 मार्च, सन् 1931 को समझौता होने के कारण कांग्रेस फिर वैधानिक संस्था घोषित कर दी गई तथा सभी राजबन्दी मुक्त कर दिये गए। इस वर्ष लन्दन में गोल-मेज-कान्फ्रेन्स हुई। कांग्रेस की ओर से महात्मा गांधी, महामना मालवीय और सरोजिनी नायडू ब्रिटिश सरकार के निमन्त्रण पर कान्फ्रेन्स में सम्मिलित होने के लिए लन्दन गए। आप लोगों ने अपने विचारों से सदस्यों को आगाह कराया; परन्तु साम्प्रदायिक वातावरण का बड़ा ही बुरा प्रभाव पड़ा और यह वार्ता असफल हो गई। ये लोग भारत में लौटे भी न थे कि भारत का राजनैतिक वातावरण फिर क्षुब्ध हो गया। इधर भारत के लिए गांधीजी के प्रस्थान करते ही तत्कालीन वायसराय लार्ड विलिंगडन ने नादिरशाही प्रारम्भ कर दी। गांधीजी अभी जहाज पर ही थे कि सीमान्त गांधी खाँ, अब्दुलगफ्फारखाँ हवालात में ठूँस दिये गए और उनके हजारों स्वयंसेवकों को जेल भेज दिया गया। यू०पी०, सीमान्त और बंगाल में एक साथ काले कानूनों की झड़ी लग गई। पं० जवाहरलाल नेहरू को बम्बई में उस समय गिरफ्तार कर लिया गया जब वे गांधीजी की अगवानी करने वहाँ गये हुए थे। गांधीजी इस स्थिति को देखकर अत्यन्त उद्विग्न तथा चिन्तित हुए। उन्होंने तुरन्त वायसराय को एक पत्र लिखा, जिसमें समझौतों की शर्तों को सरकार द्वारा भंग किए जाने का उल्लेख था।

फिर संघर्ष

गांधीजी के इस पत्र का कोई सन्तोषजनक उत्तर न मिला। गांधीजी जनता और सरकार की नब्ज पहचानने में देर नहीं करते थे। वे ताड़ गए कि विलिंगडन की सरकार स्वाधीनता आन्दोलन को कुचलने पर तुली हुई है। शीघ्र ही कार्य-समिति की बैठक बुलाई गई और उसमें सीमान्त तथा बंगाल में होने वाले अत्याचार के प्रति असन्तोष प्रकट किया गया। साथ ही यह भी निश्चय किया गया कि यदि भारत सरकार इस अस्वाभाविक अवस्था का अन्त नहीं करती, तो विवश होकर कांग्रेस को सन् 1930 के स्थगित सत्याग्रह को पुनः जारी करना पड़ेगा और इस प्रस्ताव की एक प्रति लार्ड विलिंगडन के पास भेज दी गई। विलिंगडन साहब तो पहले से ही तैयार बैठे थे। प्रस्तावों की पहुँच-मात्र की सूचना कार्य-समिति को भेज दी गई। इधर कार्य-समिति के सदस्य अपने-अपने मकानों को चले और उधर वायसराय भवन से सारे वारण्ट निकले। 4 जनवरी, सन् 1932 को गांधीजी तथा कांग्रेस के सभापति सरदार पटेल गिरफ्तार कर लिये गए और सदस्य भी ऐसे ही जहाँ पाये गए

वहीं पकड़ लिये गए। सारे देश की कांग्रेस कमेटियाँ गैरकानूनी संस्थाएँ घोषित कर दी गईं। आन्दोलन दबने की बजाय दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही गया और नौकरशाही अपनी इस असफलता से खीझकर पाशविकता की नीति का आचरण करने लगी। देहातों में स्वयंसेवकों पर लाठी-प्रहार होने लगा और लोगों की जायदादें नीलाम की जाने लगीं। सारांशत: दमन का कोई भी तरीका उठा न रखा गया और चारों ओर जुल्म का ताण्डव नृत्य होने लगा।

आमरण उपवास

गोल-मेज-परिषद् के समय महात्मा गांधी ने हरिजनों के लिए पृथक् निर्वाचन की माँग का घोर विरोध करने की चुनौती दे दी थी। इसी कारण उस विरोध में गांधीजी ने 28 सितम्बर, सन् 1932 को आमरण अनशन करने की घोषणा कर दी। पीछे दलित जातियों में समझौता होने पर उसके निर्णयानुसार संयुक्त निर्वाचन को स्वीकार कर लिया गया और महात्मा गांधी की अवस्था को देखकर सरकार ने उन्हें जेल से तुरन्त रिहा कर दिया। इसके उपरान्त महात्माजी ने हरिजन-सेवा की ओर विशेष ध्यान दिया।

नीति-परिवर्तन

जेल से निकलकर गांधीजी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह भी स्थगित कर दिया और केवल अपने ही जिम्मे इस अमोघ अस्त्र का प्रयोग रखा। इधर कांग्रेस में कुछ सुस्ती आ गई थी। इन सब परिस्थितियों पर विचार करने के लिए 1934 के मई मास में कांग्रेस महासमिति की बैठक बुलाई गई और यह निश्चय किया गया कि स्वराज्य पार्टी का पुन: संगठन किया जाए और इसी के संचालन में कौंसिल-प्रवेश की नीति क्रियात्मक रूप में प्रयुक्त की जाए। बहुत विरोध होने पर भी कौंसिल-प्रवेश की नीति कांग्रेस महासमिति में स्वीकार कर ली गई और बाद को बम्बई के खुले अधिवेशन ने इस पर अपनी मुहर भी लगा दी। पटना में कांग्रेस-महासमिति की बैठक के समय आचार्य श्री नरेन्द्रदेव की अध्यक्षता में प्रथम समाजवादी सम्मेलन की नींव पड़ी। इसके बाद अधिकांश कांग्रेसियों में वैधानिक प्रवृत्ति घर कर गई और चुनाव संग्राम की तैयारियाँ होने लगीं। पहले केन्द्रीय धारा सभा के सदस्यों का निर्वाचन हुआ, उसके बाद प्रान्तीय धारा सभाओं का। फिर 1937 में बिहार, बम्बई, यू०पी०, सी०पी०, उड़ीसा, मद्रास और आसाम में कांग्रेस मन्त्रिमण्डल संगठित किये गए। सन् 1939 में यूरोप में युद्ध छिड़ गया। कांग्रेस की ओर से ब्रिटिश सरकार से प्रश्न किया जाने लगा कि इस युद्ध का उद्देश्य क्या है ? इसका उद्देश्य यदि लोकतन्त्र की रक्षा करना है तो भारत के सम्बन्ध में स्पष्ट नीति की घोषणा होनी चाहिए। जब सरकार की ओर से इसका कोई उचित उत्तर प्राप्त न हुआ तो सभी प्रान्तों के कांग्रेसी मन्त्रियों ने अपने पदों से त्यागपत्र दे दिए। लोगों में पूर्ण उत्साह था। यूरोपीय युद्ध से किसी न किसी रूप में भारत का भी सम्बन्ध बढ़ने लगा। अपने उद्देश्य को असफल होते देख जनता सत्याग्रह की माँग करने लगी। अन्त में सरकार के सामने प्रस्ताव रखा गया कि यदि भारत को स्वतन्त्र राष्ट्र

घोषित कर दिया जाए और केन्द्र में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना कर दी जाए, तो भारत अपनी रक्षा के लिए ताकत लगा देगा। इस पर भी सरकार ने कुछ ध्यान नहीं दिया।

बोस का राष्ट्रपतित्व

सन् 1938 में कांग्रेस का अधिवेशन हरिपुरा में हुआ। देश में वैधानिक मनोवृत्ति जोर पकड़ती जा रही थी। वायसराय इस प्रयत्न में थे कि किसी प्रकार संघ-शासन की समस्या को सुलझाया जाए और कांग्रेस को माया-जाल में फँसाया जाए। बहुतों को तो ऐसी आशा हो गई थी कि प्रान्तीय मन्त्रिमण्डलों का स्वाद चख लेने के बाद कांग्रेसी अवश्य ही संघ शासन को कुछ सुधारों के साथ स्वीकार कर लेंगे; किन्तु हरिपुरा अधिवेशन ने यह भ्रम दूर कर दिया और नियमपूर्वक यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया कि कांग्रेस संघ-योजना को इसके वर्तमान रूप में कदापि स्वीकार नहीं कर सकती। कांग्रेस-अधिवेशन में यह प्रस्ताव पास कर देने पर भी बहुतों की यह धारणा बनी रही कि कांग्रेस संघ योजना अवश्य स्वीकार करेगी। कारण यह था कि कार्यसमिति में, जिसके हाथों में ही कांग्रेस की बागडोर है, दक्षिणपन्थियों का बहुमत रहा। श्री सुभाषचन्द्र बोस इस स्थिति से सावधान रहे और इस बात का प्रचार करते रहे कि कांग्रेस किसी भी स्थिति में संघ-शासन को स्वीकार नहीं करेगी।

त्रिपुरी-अधिवेशन

ऐसे संघर्ष की अवस्था में 1939 में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। कांग्रेस के इतिहास में कार्यसमिति द्वारा नामजद सदस्य के विरुद्ध चुनाव लड़ने की आज तक किसी ने भी हिम्मत नहीं की थी; किन्तु श्री सुभाष बाबू ने यह उदाहरण पहले-पहल पेश किया। वास्तव में इनको तथा वामपन्थियों को इस बात का सन्देह हो गया था किसी दक्षिणपन्थी के राष्ट्रपति होने पर संघ योजना सहज ही स्वीकार कर ली जाएगी। इसी आधार पर त्रिपुरी-अधिवेशन के सभापति के प्रश्न पर लड़ाई हुई और लोगों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब सुभाष बाबू डाक्टर पट्टाभि को हराकर राष्ट्रपति हो गए। किन्तु यह सुभाष बाबू और डाक्टर पट्टाभि की विजय और पराजय का प्रश्न नहीं, यह तो नीति का प्रश्न था। फलस्वरूप इस समय गांधीजी ने मौन-भंग किया और इस चुनाव से अपनी असहमति प्रकट की। डाक्टर पट्टाभि की पराजय में महात्माजी ने अपनी नीति की पराजय देखी और इस आधार पर देश के नेतृत्व को बोस द्वारा वहन करने से सर्वथा इन्कार कर दिया। देश को यह स्थिति मान्य नहीं थी, किन्तु सुभाष बाबू को अन्ततः राष्ट्रपतित्व से त्यागपत्र देना पड़ा और उनके स्थान पर देशरत्न बाबू राजेन्द्रप्रसाद राष्ट्रपति बनाये गए।

व्यक्तिगत सत्याग्रह

युद्ध को सिर पर आया हुआ देखकर हिन्दुस्तान में बेचैनी बढ़ने लगी। लोग यह सोचने लगे कि गुलामी के तौक को तोड़ फेंकने के लिए इससे अच्छा अवसर और नहीं मिल सकता। देश की इस मनोवृत्ति को गांधीजी ने भी समझा और समझौते की बातें होने

लगीं। वायसराय ने कई वक्तव्य प्रकाशित कराए, किन्तु किसी वक्तव्य में भी उन्होंने यह नहीं कहा कि सरकार सम्पूर्ण या उचित अधिकार भी भारतवर्ष को दे देगी। ऐसा लगा कि अब कोई समझौता नहीं हो सकेगा। सत्याग्रह प्रारम्भ हुआ। नेताओं की गिरफ्तारियाँ शुरू हुईं; परन्तु प्रशान्त में जापानियों ने युद्ध छेड़ दिया और उसी से प्रभावित होकर सरकार ने सभी कांग्रेसियों को जेल-मुक्त कर दिया।

क्रिप्स-योजना

इधर समर-क्षेत्र का कुछ और ही हाल था। फ्रांस के पतन के बाद इंग्लैण्ड में दिन गिने जा रहे थे। अमेरिका प्राय: तटस्थ था और रूस से हिटलर की सन्धि थी। अंग्रेज बड़े ही असमंजस में पड़े थे, किन्तु शीघ्र ही अमेरिका युद्ध में आ गया और जर्मनी से उसकी ठन गई। इसी बीच सिंगापुर में अंग्रेज जापानियों से हार गए और उसके बाद तो ऐसा प्रतीत हुआ कि अंग्रेज सरकार भारत में भी चार दिन की मेहमान है। ऐसी अवस्था में भारत को अप्रसन्न रखने के काम को खतरनाक जानकर चर्चिल सरकार ने सर स्टैफर्ड क्रिप्स को हिन्दुस्तान की आजादी की एक आयोजना लेकर भारत में भेजा। गांधीजी के शब्दों में 'क्रिस-योजना' उस बैंक की हुण्डी थी, जिसका दिवाला निकलने जा रहा था। अंग्रेज आसानी से भारत को आजाद करने को तैयार नहीं थे। केवल वायदों के बल पर ही वे अपनी नाव को खेकर किसी प्रकार पार लगाना चाहते थे। कहा जाता है कि तब भी कांग्रेस के नेता उस योजना को कुछ फेर-फार के बाद स्वीकार कर लेना चाहते थे; किन्तु इसी बीच चर्चिल ने क्रिप्स को वापस बुला लिया और समझौते की चिड़िया हिन्दुस्तान के हाथ में आते-आते 'फुर्र' से उड़ गई।

क्रिप्स-योजना की विफलता

क्रिप्स-योजना की विफलता का कारण यह था कि देश के अधिकांश नेता उसमें निर्दिष्ट सुविधाओं से असन्तुष्ट थे। उस योजना का सारांश संक्षेप में यह था कि युद्धोपरान्त विधान-निर्मातृ-परिषद् में भारत के निर्वाचित सदस्यों को विधान तैयार करने का अधिकार होगा। समस्त भारत का एक संघ होगा जिसमें देशी रजवाड़े भी सम्मिलित रहेंगे। परन्तु संघ में सम्मिलित होने के लिए किसी भी प्रान्त या देशी राज्य को अपना विधान बनाने का अधिकार प्राप्त होगा। वायसराय-कौंसिल को मन्त्रिमण्डल के स्वरूप में परिवर्तित नहीं किया जाएगा। तात्पर्य यह है कि वर्तमान व्यवस्था पूर्ववत् रहेगी। इन सब बातों पर विचार करने से देखा गया कि इस योजना में देश के विभाजन और पाकिस्तानी माँग के समर्थन की काफी गुजांइश थी। यह सब कुछ होते हुए भी युद्धकालीन व्यवस्था के सम्बन्ध में यदि सन्तोषजनक सुझाव होते, तो उसे स्वीकार करने में किसी को कुछ भी आपत्ति न होती, परन्तु कांग्रेस ने इस पर शुरू से आखिर तक विचार कर देखा तो इसे बिल्कुल अनुपयुक्त, अनुचित एवं अमान्य बतला दिया और संघर्ष की नींव पड़ गई।

3

अगस्त-क्रान्ति

क्रिप्स-योजना के असफल होते ही समग्र देश में विद्रोह एवं असन्तोष की एक भीषण लहर दौड़ गई। परिणामस्वरूप गांधीजी ने इस विषय में गम्भीरतापूर्वक सोचा और उन्होंने अपने विचार 26 अप्रैल, सन् 1942 के 'हरिजन' में व्यक्त किए। उनके इसी लेख में सर्वप्रथम 'भारत छोड़ो' का नारा लगाया गया था। उन्होंने इस लेख में भारत की रक्षा के लिए भारत में विदेशी सैनिकों के आगमन की घटना पर खेद प्रकट करते हुए लिखा था : ''यदि अंग्रेज भारत को उसके भाग्य के भरोसे सिंगापुर की भाँति छोड़ दें तो अहिंसक भारत को इससे कुछ हानि न होगी और सम्भवत: जापान इसे कुछ भी न कहेगा, भारतवर्ष के लिए चाहे इसका कुछ भी परिणाम क्यों न हो, अब तो भारत और ब्रिटेन का वास्तविक हित इसी में है कि अंग्रेज सुरक्षापूर्वक भारत को छोड़ जाएँ।''

गांधीजी के 'भारत छोड़ो' नारे की महत्ता पूरे देश ने एक स्वर से स्वीकार की। इस सम्बन्ध में विस्तृत रूप से विचार करने के लिए अप्रैल के अन्तिम सप्ताह में इलाहाबाद में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक बुलाई गई। उसमें ब्रिटिश सत्ता के अविलम्ब भारत छोड़कर चले जाने और गांधीजी तथा समस्त देश की माँग के वास्तविक अभिप्राय पर अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक विचार किया गया। इसके उपरान्त 14 जुलाई, 1942 को वर्धा में फिर सब कांग्रेसी नेता एकत्रित हुए और सबने 'भारत छोड़ो' का प्रस्ताव एक स्वर से स्वीकार कर लिया। साथ ही यह भी निश्चय किया गया कि ब्रिटिश सरकार हमारी इस माँग को यदि स्वीकार न करे तो समस्त देश में सविनय अवज्ञा आन्दोलन किया जाए।

कांग्रेस कार्यसमिति की प्रयाग और वर्धा में होने वाली बैठकों से पूर्व 5 जून, 1942 के 'हरिजन' में गांधीजी का जो लेख प्रकाशित हुआ था, उससे तो और भी देश को एक नया संग्राम छेड़ने की आशा हो चली थी। उन्होंने लिखा था : ''यह एक ऐसा आन्दोलन होगा, जिसको सारा संसार अनुभव करेगा। सम्भव है यह ब्रिटिश सेना की हलचलों में बाधा न पहुँचा सके, परन्तु यह तो सर्वथा निश्चित है कि इसकी ओर अंग्रेजों का ध्यान आकृष्ट होकर रहेगा।''

उन्होंने आगे लिखा था : ''मैंने प्रतीक्षा की और तब तक प्रतीक्षा की, जब तक कि देश

में विदेशी दासता के जुए को उतार फेंकने के लिए आवश्यक अहिंसात्मक शक्ति न पनप जाए। किन्तु मेरे दृष्टिकोण में परिवर्तन हो गया है। मैं अनुभव करता हूँ कि अब मैं प्रतीक्षा नहीं कर सकता, यदि मैंने प्रतीक्षा जारी रखी तो मुझे प्रलय के दिन तक प्रतीक्षा करनी होगी। जिस तैयारी के लिए मैं प्रार्थना तथा प्रयत्न करता रहा हूँ उसका अवसर शायद कभी न आए और इसी बीच मुझे वे ज्वालाएँ घेर लें और निगल जाएँ जो हम सबको भयभीत कर रही हैं। इसी कारण मैंने निश्चय किया है कि कुछ खतरे सिर पर उठाकर भी, जो कि अनिवार्यतः आएँगे ही, मुझे जनता को दासत्व का प्रतिरोध करने के लिए अवश्य कहना चाहिए।''

प्रयाग का प्रस्ताव

गांधीजी के 'भारत छोड़ो' नारे के सम्बन्ध में 1 मई, 1942 को प्रयाग में हुई अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने जो प्रस्ताव पास किया वह निम्न प्रकार है:—

'' भारत के सम्मुख आक्रमण का जो तात्कालिक खतरा है और सर स्टेफर्ड क्रिप्स द्वारा उपस्थित किये गए हाल के प्रस्तावों में ब्रिटिश सरकार का जो रुख प्रकट हुआ है, उसे देखते हुए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के लिए भारत की नीति को पुनः घोषित करना आवश्यक है कि निकट भविष्य में उत्पन्न होने वाले आपात्कालों में वह क्या करे।

'' ब्रिटिश सरकार के प्रस्ताव और बाद में सर स्टेफर्ड क्रिप्स द्वारा किये गए उनके स्पष्टीकरण से इस सरकार के विरुद्ध अधिक कटु भावना और अविश्वास उत्पन्न हो गया है और ब्रिटेन के साथ असहयोग करने का भाव बढ़ गया है। उन्होंने दिखा दिया है कि इस समय भी जब केवल भारत के लिए ही नहीं वरन् मित्रराष्ट्रों के लक्ष्य के लिए भी संकटकाल है, ब्रिटिश सरकार एक साम्राज्यवादी सरकार के तौर पर कार्य कर रही है और उसने भारत की स्वतन्त्रता को स्वीकार करने अथवा कोई भी सच्चा अधिकार देने से इन्कार कर दिया है।

'' युद्ध में भारत का सम्मिलित होना एक बिल्कुल अनुपयुक्त कार्य है, जिसे भारतीय जनता के ऊपर उसके प्रतिनिधियों की स्वीकृति लिए बिना ही लाद दिया गया है। भारत का किसी भी देश के लोगों से कोई झगड़ा नहीं है, फिर भी उसने साम्राज्यवाद के समान ही नाजीवाद और फासिस्टवाद के प्रति अपना विरोध बारम्बार प्रकट किया है। यदि भारत स्वतन्त्र होता तो वह अपनी नीति स्वयं निर्धारित करता और शायद युद्ध से अलग रहता, यद्यपि उसकी सहानुभूति प्रत्येक दशा में आक्रमण के शिकार हुए राष्ट्रों के साथ होती। यदि परिस्थितियों से विवश होकर उसे युद्ध में सम्मिलित होना ही पड़ता तो वह स्वतन्त्रता के लिए लड़ने वाले एक स्वतन्त्र देश के रूप में सम्मिलित होता और उसकी रक्षा-व्यवस्था का संगठन राष्ट्रीय नियन्त्रण और नेतृत्व में राष्ट्रीय सेना द्वारा तथा जनता से घनिष्ठ सम्पर्क रखते हुए एक लोकप्रिय आधार पर किया जाता। किसी आक्रमणकारी का आक्रमण होने

की दशा में स्वतन्त्र भारत अपनी रक्षा स्वयं कर सकेगा। वर्तमान भारतीय सेना ब्रिटिश सेना की एक शाखा मात्र है और अभी तक उसका प्रयोग भारत को पराधीन बनाए रखने के लिए ही किया गया है। साधारण जनता से उसे बिल्कुल अलग रखा गया है। इसलिए जनता उसे अपनी सेना नहीं मान सकती।

" रक्षा के विषय में साम्राज्यवादी और लोकप्रिय दृष्टिकोणों में जो महत्त्वपूर्ण अन्तर है वह इसी बात से प्रकट हो जाता है कि जहाँ विदेशी सेनाओं को रक्षा के लिए भारत में बुलाया जा रहा है वहाँ भारत की विशाल जनशक्ति का इस कार्य के लिए उपयोग नहीं किया जाता। भारत पिछले अनुभवों से सीख चुका है कि विदेशी सेनाओं का लाया जाना उसके हित के लिए हानिकारक और उसकी स्वतन्त्रता के लिए भयावह है। यह बात अत्यन्त उल्लेखनीय और असाधारण है कि जब भारत अपनी भूमि अथवा सीमा पर लड़ने वाली विदेशी सेनाओं को रणस्थली बन रहा हो तो भी उसकी अनन्त जनशक्ति का उपयोग न किया जाए और उसकी रक्षा का प्रश्न जनता द्वारा नियन्त्रण के योग्य विषय न माना जाए। विदेशी सत्ता द्वारा निपटा दी जाने वाली जड़ वस्तुओं के समान अपने निवासियों के साथ व्यवहार किए जाने पर भारत रोष प्रकट करता है।

" अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी को दृढ़ विश्वास है कि भारत अपने बलबूते पर ही स्वतन्त्रता प्राप्त करेगा और इसी प्रकार रक्षा कर सकेगा। वर्तमान संकट और सर स्टेफर्ड क्रिप्स से की गई वार्ता के अनुभव से कांग्रेस के लिए किसी भी ऐसी योजना अथवा प्रस्ताव पर विचार करना असम्भव हो गया है, जिससे चाहे आंशिक रूप में ही क्यों न हो, भारत में ब्रिटिश की सुरक्षा और विश्वशान्ति एवं स्वतन्त्रता की भी यह माँग है कि ब्रिटेन को भारत से अपना अधिकार अवश्य हटा लेना चाहिए। केवल स्वतन्त्रता के आधार पर ही भारत ब्रिटेन अथवा अन्य राष्ट्रों के साथ व्यवहार कर सकता है।

" किसी भी विदेशी राष्ट्र के हस्तक्षेप अथवा आक्रमण द्वारा भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त होने की घोषणा का कमेटी खण्डन करती है चाहे उस राष्ट्र के कैसे ही उद्देश्य क्यों न हों। यदि आक्रमण हो ही जाए तो उसका विरोध अवश्य करना चाहिए। यह विरोध केवल अहिंसात्मक असहयोग का रूप ही धारण कर सकता है। क्योंकि ब्रिटिश सरकार ने किसी भी अन्य प्रकार से जनता द्वारा राष्ट्रीय रक्षा का संगठन असम्भव बना दिया है, इसलिए कमेटी भारतीय जनता से आक्रमणकारी सेनाओं से अहिंसात्मक असहयोग करने और उन्हें कोई सहायता न देने की आशा करेगी। हम आक्रमणकारी के आगे घुटने नहीं टेकेंगे और न उसकी आज्ञाओं का पालन करेंगे। हम न उसकी कृपा की अभिलाषा करेंगे, और न उसकी फुसलाहट के शिकार होंगे। यदि वह हमारे घरों और हमारे खेतों पर अधिकार करना चाहेगा, तो उन्हें छोड़ने से इन्कार कर देंगे। फिर चाहे विरोध करने के प्रयत्न में हमारी जान ही क्यों न चली जाए। जिन स्थानों पर ब्रिटिश और आक्रमणकारी सेनाएँ लड़ती होंगी वहाँ हमारा

असहयोग करना निरर्थक और अनावश्यक होगा। ब्रिटिश सेनाओं के मार्ग में कोई बाधा न डालना ही बहुधा एक मात्र उपाय होगा। ब्रिटिश सरकार के रुख से प्रकट होता है कि वह हमसे हस्तक्षेप न करने से अधिक और कोई सहायता नहीं लेना चाहती।

" आक्रमणकारी के प्रति असहयोग और अहिंसात्मक विरोध करने की इस नीति की सफलता अधिकांशत: कांग्रेस के रचनात्मक कार्यक्रम और विशेषत: देश के समस्त भागों में आत्मनिर्भरता तथा आत्मरक्षा के कार्यक्रम को जोरों से चलाने पर ही निर्भर रहेगी। "

वर्धा का निश्चय

प्रयाग की कांग्रेस-कार्यसमिति के अधिवेशन के उपरान्त 14 जुलाई को फिर वर्धा में इसी सम्बन्ध में विचार करने के लिए सभी नेता एकत्रित हुए। वर्धा कार्यसमिति द्वारा पास किया गया प्रस्ताव निम्न प्रकार है :—

" जो घटनाएँ प्रतिदिन घट रही हैं और भारतवासियों को जो-जो अनुभव हो रहे हैं उनसे कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं की यह धारणा पुष्ट होती जा रही है कि भारत में ब्रिटिश शासन का अन्त अति शीघ्र होना चाहिए। यह केवल इसलिए नहीं कि विदेशी सत्ता अच्छी से अच्छी होते हुए भी स्वयं एक दूषण है और परतन्त्र जनता के लिए अनिष्ट का अबाध स्रोत है, बल्कि इसलिए कि दासत्व की शृंखला में जकड़ा हुआ भारत अपनी ही रक्षा के काम में और मानवता का विध्वंस करने वाले युद्ध के भाग्यचक्र को प्रभावित करने में पूरा-पूरा भाग नहीं ले सकता। इस प्रकार भारत की स्वतन्त्रता न केवल भारत के हित में आवश्यक है बल्कि संसार की सुरक्षा के लिए और नाजीवाद, फासिस्टवाद, सैनिकवाद और अन्य प्रकार के साम्राज्यवादों एवं एक राष्ट्र पर दूसरे राष्ट्र के आक्रमण का अन्त करने के लिए भी। संसारव्यापी युद्ध के छिड़ने के बाद से कांग्रेस ने यत्नपूर्वक परेशान न करने वाली नीति को ग्रहण किया है। सत्याग्रह के प्रभावहीन हो जाने का खतरा उठाते हुए भी कांग्रेस ने इसे जान-बूझकर सांकेतिक स्वरूप दिया और यह इस आशा से कि परेशान न करने वाली इस नीति के यौक्तिक पराकाष्ठा तक पहुँचने पर इसका यथोचित समादर किया जाएगा और वास्तविक सत्ता लोकप्रिय प्रतिनिधियों को सौंप दी जाएगी जिससे कि राष्ट्र विश्वभर में मानव स्वतन्त्रता, जिसके कुचल दिए जाने का खतरा उपस्थित है, प्राप्त करने के कार्य में अपना पूरा सहयोग देने में समर्थ हो सके। इसने यह आशा भी कर रखी थी कि ऐसा कोई भी कार्य नहीं किया जाएगा जिससे भारत पर ब्रिटेन के आधिपत्य के और भी दृढ़ होने की सम्भावना हो।

" किन्तु इन आशाओं को चकनाचूर कर डाला गया है। क्रिप्स की निष्फल योजना ने स्पष्ट रूप से दिखला दिया है कि भारत के प्रति ब्रिटिश सरकार की मनोवृत्ति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है और भारत पर अंग्रेजों का प्रभुत्व किसी प्रकार शिथिल न होने दिया

जाएगा। सर स्टेफर्ड क्रिप्स के साथ वार्ता करने में कांग्रेस प्रतिनिधियों ने राष्ट्रीय माँग के अनुरूप कम से कम अधिकार प्राप्त करने का जी तोड़ प्रयत्न किया, किन्तु सफलता न मिली। इस असफलता के परिणामस्वरूप ब्रिटेन के विरुद्ध भावना में शीघ्रता के साथ और व्यापक रूप से वृद्धि हुई है और जापानियों की सैनिक सफलता से विशेष सन्तोष प्राप्त हुआ है।

" कार्यसमिति इस स्थिति को घोर आशंका की दृष्टि से देखती है, क्योंकि यदि इसका प्रतिशोध न किया गया तो, अनिवार्य रूप से इसका परिणाम आक्रमण को निष्क्रिय भाव से सहन करना होगा। समिति की धारणा है कि सब प्रकार के आक्रमणों का प्रतिरोध होना ही चाहिए, क्योंकि इसके आगे झुक जाने का अर्थ अवश्य ही भारतीयों का पतन और उनकी परतन्त्रता का जारी रहना होगा। कांग्रेस नहीं चाहती कि मलाया, सिंगापुर और बर्मा पर जो बीती है वही भारत पर भी बीते, इसलिए वह चाहती है कि भारत पर जापान या किसी अन्य विदेशी सत्ता की चढ़ाई या आक्रमण के विरुद्ध प्रतिरोध-शक्ति का संगठन करे। ब्रिटेन के विरुद्ध जो विद्वेष-भावना विद्यमान है उसे कांग्रेस सद्भावना के रूप में परिणत कर देगी और भारत को, संसारभर के राष्ट्रों और अधिवासियों के लिए स्वतन्त्रता प्राप्त करने के संयुक्त उद्योग और इसके फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले कष्ट और क्लेशों में स्वेच्छापूर्वक भाग लेने को प्रेरित करेगी। यह केवल उसी अवस्था में सम्भव है जब भारत स्वतन्त्रता के आलोक का अनुभव करे।

" कांग्रेस प्रतिनिधियों ने साम्प्रदायिक समस्या को सुलझाने का शक्तिभर प्रयत्न किया है। किन्तु विदेशी सत्ता की उपस्थिति में यह काम असम्भव हो गया है और वर्तमान अवास्तविकता के स्थान पर वास्तविकता की स्थापना तभी हो सकती है जब विदेशी प्रभुता और हस्तक्षेप का अन्त कर दिया जाए और भारतीय जन, जिनमें सब दलों और समुदायों के व्यक्ति होंगे, भारतीय समस्याओं का सामना करें और पारस्परिक समझौते के आधार पर उनका हल ढूँढ़ निकालें।

" तब सम्भवत: वर्तमान राजनीतिक दल जो प्रधानत: ब्रिटिश सत्ता को अपनी ओर आकृष्ट करने और उसे प्रभावित करने के उद्देश्य से संगठित हुए हैं, अपनी कार्रवाई बन्द कर देंगे। भारत के इतिहास से, फिर यह बात पहले-पहल अनुभव की जाएगी कि भारतीय नरेश, जागीरदार और सम्पत्तिवान तथा धनिक वर्ग उन श्रमजीवियों से अपना धन और सम्पत्ति प्राप्त करते हैं जो खेत-खलिहानों, कारखानों और दूसरे स्थानों पर काम करते हैं और जो वास्तव में शक्ति एवं सत्ता के अधिकारी हैं। भारत से ब्रिटिश शासन के हटा लिए जाने पर देश के जिम्मेदार स्त्री-पुरुष एक साथ मिलकर एक अस्थायी सरकार का निर्माण करेंगे जो भारत के समस्त महत्त्वपूर्ण वर्गों का प्रतिनिधित्व करेगी और बाद में ऐसी योजना को जन्म देगी जिससे विधान निर्मातृ-परिषद् की रचना हो सकेगी, जो राष्ट्र के सब वर्गों

को स्वीकार करने योग्य भारतीय शासन विधान का निर्माण करेगी। स्वतन्त्र भारत के प्रतिनिधि और ब्रिटेन के प्रतिनिधि दोनों देशों के सहयोग और भावी सम्बन्ध को स्थिर करने के लिए, आक्रमण का सामना करने के सामूहिक कार्य में सहयोगियों के रूप में, परस्पर वार्तालाप करेंगे।

" इसलिए जापानियों के या किसी और के आक्रमण को दूर रखने या उसका प्रतिरोध करने के लिए तथा चीन की रक्षा और सहायता के लिए कांग्रेस भारत में मित्रराष्ट्रों की सशस्त्र सेनाओं को टिकाने के लिए, यदि उनकी ऐसी इच्छा हो, राजी है। भारत से ब्रिटिश सत्ता के हटा लिए जाने के प्रस्ताव का उद्देश्य यह कभी नहीं था कि भारत से सारे अंग्रेज और निश्चय ही वे अंग्रेज विदा हो जाएँ जो भारत को अपना घर बनाकर वहाँ दूसरों के साथ नागरिक और समानाधिकारी बनकर रहना चाहते हैं। यदि इस प्रकार का हटना सद्भावनापूर्वक सम्पन्न हो तो इसके परिणामस्वरूप भारत में स्थायी शासन की स्थापना और आक्रमण का प्रतिरोध करने तथा चीन को सहायता देने में इस सरकार तथा संयुक्त राष्ट्रों के मध्य सहयोग हो सकता है। कांग्रेस इस बात को समझती है कि ऐसा मार्ग ग्रहण करने में खतरे भी उपस्थित हो सकते हैं किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए और खासकर वर्तमान संकटापन्न स्थिति में देश एवं संसारभर में कहीं अधिक खतरों और विपदाओं से घिरे हुए स्वतन्त्रता के विशालतम आदर्श को बचाने के लिए किसी भी देश को ऐसे खतरों का सामना करना ही पड़ता है। अस्तु, जबकि कांग्रेस राष्ट्रीय उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अधीर है, वह जल्दबाजी में कोई काम करना नहीं चाहती और न ऐसा मार्ग ग्रहण करना चाहती है जिससे मित्रराष्ट्रों को परेशानी हो। इसलिए यदि ब्रिटिश सरकार इस अत्यन्त यौक्तिक और उचित प्रस्ताव को स्वीकार कर लेगी, जो न केवल भारत के बल्कि ब्रिटेन में और उस स्वतन्त्रता के हित में है जिससे मित्रराष्ट्र अपने को संश्लिष्ट घोषित करते हैं, तो कांग्रेस को ब्रिटिश सरकार के इस कार्य से प्रसन्नता होगी। अतएव, यदि यह अपील व्यर्थ की गई तो कांग्रेस वर्तमान स्थिति के स्थायित्व को, जिससे परिस्थिति धीरे-धीरे बिगड़ना और भारत के आक्रमण-विरोधी शक्ति और इच्छा का दुर्बल होना स्वाभाविक है, घोर आशंका की दृष्टि से देखेगी। उस स्थिति में कांग्रेस को अपनी समस्त अहिंसात्मक शक्ति का, जो सन् 1920, जबकि इसने राजनीतिक अधिकारों और स्वाधीनता के समर्थन के लिए अहिंसा को अपनी नीति के एक अंग के रूप में स्वीकार किया, के बाद संचित की गई है, अनिच्छापूर्वक उपयोग करने को बाध्य होना पड़ेगा। इस प्रकार के व्यापक संघर्ष का नेतृत्व अनिवार्य रूप से महात्मा गांधी करेंगे। चूँकि जो प्रश्न यहाँ उठाये गए हैं वे भारतीय जनता एवं मित्रराष्ट्रों की जनता के लिए सुदूरव्यापी तथा अत्यन्त महत्त्व के हैं, इसलिए कार्यसमिति अन्तिम निर्णय के लिए इन्हें अखिल भारतीय कांग्रेस के सुपुर्द करती है। इस कार्य के लिए 7 अगस्त, 1942 को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक होगी। "

वर्धा से बम्बई

वर्धा की कांग्रेस-कार्यकारिणी की बैठक के बाद सभी राष्ट्रीय नेता यथाशीघ्र स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए उद्विग्न हो गए और उन्होंने 'भारत छोड़ो' का नारा बुलन्द किया। इस सम्बन्ध के प्रस्ताव को पास करने के लिए अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति की एक विशेष बैठक बम्बई में बुलाई गई और 8 अगस्त, सन् 1942 की रात में यह प्रस्ताव उत्साहपूर्वक पास किया गया कि यदि अंग्रेज भारत को शीघ्र ही स्वतन्त्र नहीं कर देते तो भारत को अपनी आजादी का अन्तिम संघर्ष अभी ही प्रारम्भ कर देना चाहिए। प्रस्ताव में यह गुंजाइश रखी गई थी कि गांधीजी मित्रराष्ट्रों के नायकों से पत्र-व्यवहार करके उचित शर्तों पर समझौता कर सकें तो संघर्ष प्रारम्भ न किया जाए। मगर ब्रिटिश नौकरशाही पिछले चार मास की जागृति से काफी घबरा गई थी और वह कांग्रेस को इतना अवसर नहीं देना चाहती थी कि उसे इस संघर्ष की तैयारी के लिए पूर्ण अवसर मिल जाए।

अगस्त-प्रस्ताव

जिस महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव के कारण देश में विद्रोह की एक भीषण अग्नि भड़क उठी थी, वह स्वतन्त्रता के युद्ध का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। उसकी ऐतिहासिकता का परिचय आगे की पंक्तियों से भली प्रकार मिलेगा। वह इस प्रकार है :—

" अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने कार्यसमिति के 14 जुलाई, 1942 के प्रस्ताव के विषयों पर जो कार्यसमिति द्वारा प्रस्तुत किये गए थे, और बाद की घटनाओं पर, जिनमें युद्ध की घटनावली ब्रिटिश सरकार के जिम्मेदार वक्ताओं के भाषण और भारत तथा विदेशों में की गई आलोचनाएँ सम्मिलित हैं, अत्यन्त सावधानी के साथ विचार किया है। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी उस प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए उसका समर्थन करती है और उसकी राय है कि बाद की घटनाओं ने इसे और भी औचित्य प्रदान कर दिया है और इस बात को स्पष्ट कर दिखाया है कि भारत में ब्रिटिश शासन का तात्कालिक अन्त, भारत के लिए और मित्रराष्टों के आदर्श की पूर्ति के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इस शासन का स्थायित्व भारत की प्रतिष्ठा को घटाता और उसे दुर्बल बनाता है और अपनी रक्षा करने तथा विश्वस्वातन्त्र्य के आदर्श की पूर्ति में सहयोग देने की उसकी शक्ति में क्रमिक ह्रास उत्पन्न करता है।

" अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने रूसी और चीनी मोर्चों पर स्थिति के बिगड़ने को निराशा के साथ देखा है और वह रूसियों और चीनियों की उस वीरता की भूरि-भूरि प्रशंसा करती है जो उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने में प्रदर्शित की है। जो लोग स्वतन्त्रता के लिए प्रयत्न कर रहे हैं और आक्रमण के शिकार हुए व्यक्तियों से सहानुभूति रखते हैं उन सबको नित्य बढ़ता जाने वाला खतरा उस नीति की परीक्षा करने के लिए बाध्य करता है जिसका मित्रराष्ट्रों ने अभी तक अवलम्बन किया है और जिसके कारण बारम्बार

भीषण असफलताएँ हुई हैं। ऐसे उद्देश्यों, नीतियों और प्रणालियों पर आरूढ़ बने रहने से असफलता सफलता में परिणत नहीं की जा सकती, क्योंकि पिछले अनुभव से प्रकट हो चुका है कि असफलता इन नीतियों में निहित है। ये नीतियाँ स्वतन्त्रता पर इतनी आधारित नहीं की गई हैं जितनी कि अधीन और औपनिवेशिक देशों पर आधिपत्य बनाए रखने और साम्राज्यवादी परम्पराओं तथा प्रणालियों को अक्षुण बनाए रखने के प्रयत्नों पर। साम्राज्य को अधिकार में रखना शासन-सत्ता की शक्ति बढ़ाने के बजाय एक भार और शाप बन गया है, आधुनिक साम्राज्यावाद की सर्वोत्कृष्ट क्रीड़ाभूमि भारत इस प्रश्न की कसौटी बन गया है, क्योंकि भारत की स्वतन्त्रता से ही ब्रिटेन और मित्रराष्ट्रों की परीक्षा होगी और एशिया तथा अफ्रीका की जातियों में आशा और उत्साह भर जाएगा।

" इस प्रकार इस देश में ब्रिटिश शासन के अन्त होने की अतीव और तत्काल ही आवश्यकता है। इसी के ऊपर युद्ध का भविष्य और स्वतन्त्रता तथा प्रजातन्त्र की सफलता निर्भर है। स्वतन्त्र भारत अपने समस्त विशाल साधनों को स्वतन्त्रता के पक्ष में और नाजीवाद, फासिस्टवाद और साम्राज्यवाद के विरुद्ध लगाकर इस सफलता को सुनिश्चित कर देगा। इससे केवल युद्ध की स्थिति पर ही पर्याप्त प्रभाव नहीं पड़ेगा, वरन् समस्त पराधीन और पीड़ित मानव-समाज भी मित्रराष्ट्रों के पक्ष में हो जाएगा और भारत जिन राष्ट्रों का मित्र होगा उनके हाथों में विश्व का नैतिक और आत्मिक नेतृत्व भी आ जाएगा। बन्धनों में जकड़ा हुआ भारत ब्रिटिश साम्राज्यवाद का मूर्तिमान स्वरूप बना रहेगा और उस साम्राज्यवाद का कलंक समस्त मित्रों के सौभाग्य को दूषित करता रहेगा।

" इसलिए आज के खतरे को देखते हुए भारत को स्वतन्त्र कर देने और ब्रिटिश आधिपत्य को समाप्त कर देने की आवश्यकता है। भविष्य के लिए किसी भी प्रकार की प्रतिज्ञाओं और गारंटियों से वर्तमान परिस्थिति में सुधार नहीं हो सकता और न उसका मुकाबला किया जा सकता है। इनसे जन-समुदाय के मस्तिष्क पर वह मनोवैज्ञानिक प्रभाव नहीं हो सकता और न उसका मुकाबला किया जा सकता है जो तत्काल ही युद्ध के रूप को बदल देगा।

" इसलिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पूरे आग्रह के साथ भारत से ब्रिटिश-सत्ता को हटा लेने की माँग को दुहराती है। भारत की स्वतन्त्रता की घोषणा हो जाने पर एक अस्थायी सरकार स्थापित कर दी जाएगी और स्वतन्त्र भारत मित्रराष्ट्रों का मित्र बन जाएगा और स्वातन्त्र्य संग्राम के सम्मिलित प्रयत्न की परीक्षाओं और दु:ख-सुख में हाथ बटाएगा। अस्थायी सरकार देश के मुख्य दलों और वर्गों के सहयोग से ही बनाई जा सकती है। इस प्रकार यह एक मिली-जुली सरकार होगी जिसमें भारतीयों के समस्त महत्त्वपूर्ण वर्गों का प्रतिनिधित्व होगा। उसका प्रथम कर्त्तव्य अपनी समस्त सशस्त्र तथा अहिंसात्मक शक्तियों द्वारा मित्रराष्ट्रों से मिलकर भारत की रक्षा करना, आक्रमण का विरोध करना, और

खेतों, कारखानों तथा अन्य स्थानों में काम करने वाले उन श्रमजीवियों का कल्याण और उन्नति करना होगा जो निश्चय ही समस्त शक्ति और अधिकार के वास्तविक पात्र हैं। अस्थायी सरकार एक विधान निर्मातृ परिषद् की योजना बनाएगी और यह परिषद् भारत सरकार के लिए एक ऐसा विधान तैयार करेगी जो जनता के समस्त वर्गों को स्वीकार होगा। कांग्रेस के मत से यह विधान संघ विषयक होना चाहिए जिसके अन्तर्गत संघ में सम्मिलित होने वाले प्रान्तों को शासन के अधिकतम अधिकार प्राप्त होंगे। भारत और मित्रराष्ट्रों के भावी सम्बन्ध इन समस्त स्वतन्त्र देशों के प्रतिनिधियों द्वारा निश्चित कर दिए जाएँगे जो अपने पारस्परिक लाभ तथा आक्रमण का प्रतिरोध करने के सामान्य कार्य में सहयोग देने के लिए परस्पर वार्तालाप करेंगे। स्वतन्त्रता भारत को अपनी जनता की सम्मिलित इच्छा और शक्ति के बल पर आक्रमण का कारगर ढंग से विरोध करने में समर्थ बना देगी।

" भारत की स्वतन्त्रता विदेशी आधिपत्य से अन्य एशियाई राष्ट्रों की मुक्ति का प्रतीक और प्रारम्भ होगी। बर्मा, मलाया, हिन्द चीन, डच द्वीप समूह, ईरान और ईराक को भी पूर्ण स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। यह स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि इस समय जापानी नियन्त्रण में जो देश हैं उन्हें बाद को किसी औपनिवेशिक सत्ता के अधीन नहीं रखा जाएगा।

" इस संकट काल में यद्यपि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी को प्रधानत: भारत की स्वाधीनता और रक्षा से सम्बन्ध रखना चाहिए तथापि कमेटी का मत है कि संसार की भावी शान्ति, सुरक्षा और व्यवस्थित उन्नति के लिए स्वतन्त्र राष्ट्रों का एक विश्वसंघ बनाने की आवश्यकता है। अन्य किसी बात को आधार बनाकर आधुनिक संसार की समस्या नहीं सुलझाई जा सकती। इस प्रकार के विश्वसंघ से उसमें सम्मिलित होने वाले राष्ट्रों की स्वतन्त्रता, एक राष्ट्र द्वारा दूसरे राष्ट्र पर आक्रमण और शोषण को रोकना, राष्ट्रीय अल्प-संख्यकों का संरक्षण, पिछड़े हुए समस्त क्षेत्रों और लोगों की उन्नति और सबके सामान्य हित के लिए विश्वसाधनों का एकत्रीकरण किया जाना निश्चित हो जाएगा। इस प्रकार का विश्वसंघ स्थापित हो जाने पर समस्त देशों में नि:शस्त्रीकरण हो सकेगा, राष्ट्रीय सेनाओं, नौसेनाओं और वायुसेनाओं की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी और विश्वसंघ-रक्षक सेना विश्व में शान्ति रखेगी और आक्रमण को रोकेगी।

" स्वतन्त्र भारत ऐसे विश्वसंघ में प्रसन्नतापूर्वक सम्मिलित होगा और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याएँ सुलझाने में अन्य देशों के साथ समान आधार पर सहयोग देगा।

" ऐसे संघ का द्वार उसके आधारभूत सिद्धान्तों का पालन करने वाले समस्त राष्ट्रों के लिए खुला रहना चाहिए। युद्ध के कारण यह संघ आरम्भ में केवल मित्रराष्ट्रों तक ही सीमित रहेगा। यदि यह कार्य अभी प्रारम्भ कर दिया जाए तो युद्ध पर, धुरीराष्ट्रों की जनता पर, और आगामी शान्ति पर इसका बहुत ज़ोरदार प्रभाव पड़ेगा।'

" परन्तु कमेटी खेदपूर्वक अनुभव करती है कि युद्ध की दु:खद और व्याकुल कर

देने वाली शिक्षाएँ प्राप्त कर लेने के पश्चात् और विश्व पर संकट के बादलों के घिरे होने पर भी कुछ ही देशों की सरकारें विश्वसंघ बनाने की ओर कदम उठाने को तैयार हैं। ब्रिटिश सरकार की प्रतिक्रिया और विदेशी पत्रों की भ्रमपूर्ण आलोचनाओं से स्पष्ट हो गया है कि भारतीय स्वतन्त्रता की स्पष्ट माँग का भी विरोध किया जा रहा है। यद्यपि यह वर्तमान खतरे का सामना करने और अपनी रक्षा तथा इस आवश्यक घड़ी में चीन और रूस की सहायता कर सकने के लिए की गई है। चीन और रूस की स्वतन्त्रता बड़ी मूल्यवान है और उसकी रक्षा होनी चाहिए, इसलिए कमेटी इस बात के लिए उत्सुक है कि उसमें किसी प्रकार की बाधा न पड़े और मित्रराष्टों की रक्षा करने की शक्ति में कोई विघ्न न होने पाए। परन्तु भारत और इन राष्ट्रों के लिए खतरा नित्य बढ़ता ही जा रहा है और इस समय विदेशी शासन प्रणाली के आगे सिर झुकाने से भारत का पतन होता जा रहा है। स्वयं आत्मरक्षा करने तथा आक्रमण का विरोध करने की उसकी शक्ति घटती जा रही है। इस दशा में न तो नित्य बढ़ते जाने वाले खतरों का कोई प्रतिकार ही किया जा सकता है और न मित्रराष्ट्रों की जनता की कोई सेवा ही की जा सकती है। कार्यसमिति ने ब्रिटेन और मित्रराष्ट्रों से जो सच्ची अपील की थी उसका अभी तक कोई उत्तर नहीं मिला है। बहुत से विदेशी क्षेत्रों में की गई आलोचनाओं से प्रकट हो गया है कि भारत और विश्व की आवश्यकताओं के विषय में अज्ञानता फैली हुई है। कभी-कभी तो आधिपत्य बनाए रखने की भावना और जातिगत ऊँच-नीच का प्रतीक वह विरोध भी दिखाया गया है जिसे अपनी शक्ति और अपने उद्देश्य के औचित्य का ज्ञान रखने वाली कोई भी अभिमानी जाति सहन नहीं कर सकती।

" इस अन्तिम क्षण में विश्व-स्वातन्त्र्य का ध्यान रखते हुए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी फिर ब्रिटेन और मित्रराष्ट्रों से अपील करना चाहती है। परन्तु वह यह भी अनुभव करती है कि उसे अब राष्ट्र को एक-जैसी साम्राज्यवादी और शासनप्रिय सरकार के विरुद्ध अपनी इच्छा प्रदर्शित करने से रोकने का कोई अधिकार नहीं है जो उस पर आधिपत्य जमाती है और जो उसे अपने तथा मानव-समाज के हित का ध्यान रखते हुए काम करने से रोकती है। इसलिए कमेटी भारत के स्वतन्त्रता और स्वाधीनता के अविच्छेद अधिकार का समर्थन करने के उद्देश्य से अहिंसात्मक प्रणाली से और अधिक से अधिक विस्तृत परिणाम पर एक विशाल संग्राम चालू करने की स्वीकृति देने का निश्चय करती है, जिससे देश गत 22 वर्षों के शान्तिपूर्ण संग्राम में संचित की गई समस्त अहिंसात्मक शक्ति का प्रयोग कर सके। यह संग्राम निश्चय ही गांधीजी के नेतृत्व में होगा और उनसे नेतृत्व करने और प्रस्तावित कार्रवाइयों में राष्ट्र का पथ प्रदर्शन करने का निवेदन करती है।

" कमेटी भारतीयों से उन खतरों और कठिनाइयों का, जो उनके ऊपर आएँगे, साहस और दृढ़तापूर्वक सामना करने तथा गांधीजी के नेतृत्व में एक बने रहकर भारतीय स्वतन्त्रता के अनुशासित सैनिकों के समान उनके निर्देशों का पालन करने की अपील करती है। उन्हें

यह अवश्य याद रखना चाहिए कि अहिंसा इस आन्दोलन का आधार है। ऐसा समय आ सकता है जब निर्देश देना अथवा निर्देशों का हमारी जनता तक पहुँचना सम्भव न होगा और जब कोई भी कांग्रेस समिति कार्य नहीं कर सकेगी। ऐसा होने पर इस आन्दोलन में भाग लेने वाले प्रत्येक नर-नारी को सामान्य निर्देशों की सीमा में रहते हुए अपने-आप काम करना चाहिए। स्वतन्त्रता की कामना और उसके लिए प्रयत्न करने वाले प्रत्येक भारतीय को स्वयं अपना पथप्रदर्शक बनकर उस कठिन मार्ग पर अग्रसर होते जाना चाहिए जहाँ विश्राम का कोई स्थान नहीं है और जो अन्त में भारत की स्वतन्त्रता और मुक्ति पर जाकर समाप्त होता है।

" अन्त में यह बताना है कि यद्यपि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने स्वतन्त्र भारत की भावी सरकार के विषय में अपना विचार प्रकट कर दिया है, तथापि कमेटी समस्त सम्बद्ध लोगों के लिए यह बिलकुल स्पष्ट कर देना चाहती है कि विशाल संग्राम आरम्भ करके वह कांग्रेस के लिए कोई सत्ता प्राप्त करने की इच्छुक नहीं है। सत्ता जब मिलेगी तो उस पर समस्त भारतीयों का अधिकार होगा। "

प्रस्ताव की महत्ता

अगस्त-प्रस्ताव बड़ा विस्तृत था; यह उसकी ऊपर दी हुई पंक्तियों से भली प्रकार विदित होता है। इसमें भारत की राष्ट्रीय आत्मा स्पष्ट रूप से बोल रही थी। यह प्रस्ताव देश की अभिलाषा और मन:स्थिति का स्पष्ट प्रतीक था। हमने विगत महायुद्ध को, जिसका हाल ही में अन्त हुआ है, साम्राज्यवादी युद्ध समझ लिया था; क्योंकि यह युद्ध साम्राज्यवाद के लिए हो रहा था। हमारा यह सदा से विश्वास रहा है कि दुनिया से साम्राज्यवाद का अन्त हुए बिना शान्ति स्थापित नहीं हो सकती। हम तो ऐसी व्यवस्था के पक्षपाती रहे हैं कि जिसमें भविष्य में युद्ध की आशंका बिलकुल भी न हो। इसीलिए कांग्रेस ने 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव के रूप में अपना मार्ग निश्चित किया था। आज भी यह 'अगस्त-प्रस्ताव' 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव का सन्देशवाहक है और हमारा यह मार्ग आज भी वही निश्चित है और यह मार्ग हमारा तब तक रहेगा, जब तक कि अंग्रेज हमारे देश में हमारे शासक के रूप में मौजूद हैं।

उक्त प्रस्ताव ने दर्पण की भाँति हमारा मार्ग स्पष्ट कर दिया। इसमें ब्रिटेन को धमकी नहीं थी; प्रत्युत यह निवेदन किया गया था कि अंग्रेज साम्राज्यवादी नीति को छोड़कर भारत को बन्धन-मुक्त कर दें और ऐसा करते हुए वे विश्व-कल्याण और विश्व-शान्ति के साधन बनें। अगस्त-प्रस्ताव में भारतीयों की इसी स्थिति का स्पष्टीकरण और अपने संकल्प पर दृढ़ रहने की चुनौती थी और उसे ठुकराए जाने पर अपनी सम्पूर्ण शक्ति से संघर्ष करने की अटल प्रतिज्ञा।

गिरफ्तारियाँ और दमन

इस प्रस्ताव के प्रस्तुत होते ही ब्रिटिश-सत्ता का सिंहासन हिल गया और उसने इस

प्रस्ताव को ठुकराकर 8 अगस्त, 1942 को रात के 12 बजे बाद और 9 अगस्त के सूर्योदय से पूर्व कुछ ही घड़ियों में जो कुछ किया, उसके सामने 'पर्ल हार्बर' के जापानी कृत्य भी फीके पड़ जाते हैं। बात ही बात में गांधीजी और कार्यसमिति के सभी सदस्य गिरफ्तार करके किसी अज्ञात स्थान को भेज दिये गए और साथ ही सारे देश में गिरफ्तारियाँ शुरू हो गईं। ऐसा करके सरकार ने जान-बूझकर जनता के रोष को उभारा। 8 अगस्त, सन् 1942 को गांधीजी ने 'करो या मरो' का सन्देश दिया था और 9 अगस्त के प्रात:काल वे देशवासियों के बीच में नहीं रहे। उनका यह सन्देश ब्रिटिश नौकरशाही के इस कृत्य के कारण भीषण दावानल की तरह देश के कोने-कोने में फैल गया। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक विद्रोह की आग भड़क उठी। नेताओं की अनुपस्थिति में जनता ने नेतृत्व की बागडोर अपने हाथ में ले ली और सारे देश में तोड़-फोड़ के कार्य प्रारम्भ हो गए। 'करो या मरो' की लहर देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक व्याप्त हो गई। जगह-जगह रेल की पटरियाँ उखाड़ दी गईं, टेलीफोन के तार काट डाले गए, थाने और पुलिस की चौकियाँ जला दी गईं। इस प्रकार जनता ने अहिंसात्मक ढंग से शासन को पंगु एवं निष्क्रिय बनाने का जोरदार प्रयत्न किया।

सरकार ने जनता के रोष को उभाकर दमन की शरण ली। सारे देश में घोर दमन का दौर-दौरा हुआ। पुलिस और फौज को दमन और ज्यादती करने के मनमाने असीम अधिकार दे दिये गए। देश में सैकड़ों जगहों पर जलियाँवाला बाग से भी बढ़कर भीषण घटनाएँ हुईं। लोगों पर बेहद गोलियाँ चलाई गईं, कहीं-कहीं हवाई जहाजों से भी बम गिराये गए, घरों में आग लगाई गई, गाँव के गाँव जला डाले गए और स्त्रियाँ अपमानित की गईं। यही नहीं, जनता की स्वाधीनता-भावना को दबाने के लिए साधारण कानूनी शासन का अन्त हो गया और सैकड़ों आर्डिनेंस निकाले गए। इस घोर दमन और अत्याचारों के बावजूद भी जनता ने किसी-किसी प्रान्त में सरकार को कुछ काल के लिए पंगु बनाकर अपना सुव्यवस्थित और सुसंगठित लोकतन्त्र शासन स्थापित कर लिया था। जनता के इस क्षणिक शासन की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उसके शासन-काल में चोरी, डकैती आदि ऐसे अपराध कदापि नहीं हुए। सरकार ने दमन में किसी भी प्रकार कमी न होने दी और विद्रोह की सबसे बड़ी ज्वाला मिदनापुर, बलिया, आष्टी-चिमूर और पूरे बिहार में बड़े जोर से फैली और सरकारी अत्याचारों का लोमहर्षक दृश्य भी वहीं देखने को मिला। इन स्थानों में जनता के साथ जैसा अमानुषिक व्यवहार किया गया वह नि:सन्देह बहुत ही बर्बर था। परन्तु इससे क्या ? जनता ने अपने उत्साह को कम नहीं होने दिया और सब कुछ धैर्यपूर्वक सहन किया।

4

संघर्ष का प्रारम्भ

गांधीजी और समस्त कार्यसमिति की गिरफ्तारी ने देश को खुली बगावत करने का आमन्त्रण दिया। देहातों में यह समाचार पहुँचने में कुछ समय लगा। परन्तु केवल इतना सा सन्देश कि महात्माजी जेल के सींखचों में बन्द कर दिये गए हैं और उनके साथ सारी कार्यसमिति के सदस्य भी पकड़ लिये गए हैं, रेडियो द्वारा भारत के समस्त कस्बों और शहरों में पहुँच गया। केवल यही सन्देश लोगों को यह बतलाने के लिए पर्याप्त था कि वे क्या करें ? उनके पास कोई निश्चित आदेश अभी तक नहीं पहुँच पाए थे। परन्तु विद्रोह का स्वर समस्त वातावरण में व्याप्त हो गया था। लोगों के मन तथा मस्तिष्क में भी यह चीज समा गई थी।

शहरों और कस्बों में अपने आप हड़तालें हो गईं और जहाँ यह समाचार पहुँच सका वहाँ गाँवों में भी। यह हड़ताल कोई साधारण एक दिन में समाप्त होने वाली नहीं थी। हड़तालों की अवधि प्रान्त-प्रान्त और शहर-शहर में भिन्न-भिन्न थी। अहमदाबाद इसमें सबसे आगे था, जहाँ पर कि अनिश्चित काल के लिए हड़ताल रही। बम्बई, दिल्ली, मद्रास, बंगलौर, मैसूर और अमृतसर जैसे शहरों में भी 7 से 15 दिन तक पूर्ण हड़ताल रही। सारे भारत में इतनी लम्बी हड़ताल कोई कम महत्त्व नहीं रखती ! इसका अर्थ यह था कि लोगों ने या साधारण जनता ने कांग्रेस और उसके उद्देश्यों का समर्थन किया। इससे यह भी प्रकट होता था कि लोग अपने देश को स्वतन्त्र करने के लिए हर तरह का त्याग और बलिदान करने को सर्वथा उद्यत थे।

हड़तालों के साथ भारत के प्रत्येक शहर और कस्बे में बहुत बड़े रूप में प्रदर्शन, सभाएँ और जुलूस निकाले गए। लोग हजारों की संख्या में इन प्रदर्शनों में सम्मिलित हुए। 9 अगस्त और उसके बाद के दिनों में लोगों ने अपने आपको सर्वथा स्वाधीन समझा और उसी रूप में कार्य किया। हमारे छात्रों ने आशा के अनुरूप इन प्रदर्शनों में प्रमुख भाग लिया। भारत के सभी प्रान्तों के विश्वविद्यालय, स्कूल एवं कालिज बिना किसी दबाव के एकदम बन्द हो गए। हजारों की संख्या में छात्र अपने-अपने स्कूलों एवं कालिजों से एकदम बाहर आ गए और प्रदर्शनों का आयोजन किया।

मिल मज़दूरों ने भी लगभग सभी जगह काम करना बन्द कर दिया था। अहमदाबाद, बम्बई, मद्रास, नागपुर, दिल्ली, जमशेदपुर, कानपुर, इन्दौर, बंगलौर, मैसूर तथा अन्य बड़े-बड़े शहरों के कारखाने बहुत दिनों तक बन्द रहे। सरकार की शासन-व्यवस्था को नष्ट करने के लिए औद्योगिक संकट पैदा करना भी कांग्रेस-कार्यक्रम का प्रमुख अंग था।

सरकारी आक्रमण का उत्तर

महात्मा गांधी तथा अन्य नेताओं की आकस्मिक गिरफ्तारी ने जनता को एकदम आश्चर्य में डाल दिया और वह किंकर्तव्यविमूढ़ थी कि क्या करे ? किन्तु शीघ्र ही वह सँभली तथा इस सरकारी आक्रमण का उसने उस शानदार तरीके से मुकाबला किया कि जिसको सरकार कुछ समय के लिए अपने सारे मुल्की और फौजी साधनों की सहायता से भी न दबा सकी। प्रत्येक स्थान पर हुए व्यापक प्रदर्शन वहाँ की शासनसत्ता की अवज्ञा में थे। साधारण जनता की कानून-भंग करने की प्रवृत्ति हो गई थी और कुछ समय के लिए ऐसा मालूम देता था कि जैसे सारी पुलिस को लकवा मार गया हो। लोगों की भीड़ ने सेक्रेटरियेट, अदालती इमारतों और अन्य सरकारी संस्थाओं पर बिना किसी रोक-टोक के तिरंगे झण्डे फहरा दिए। अनेक स्थानों पर कई-कई दिनों तक सड़कों पर कोई पुलिसमैन नज़र नहीं आया। बहुत से स्थानों पर प्रदर्शन के समय अश्रु गैस छोड़ी गई और लाठी चार्ज तथा गोलीकाण्ड भी हुए। सरकार को मालूम था कि जनता ने जो खुली बगावत आरम्भ की है वह बहुत गम्भीर है और बिना पाशविक बल प्रयुक्त किए उसे किसी भी प्रकार दबाया नहीं जा सकता। इसलिए पुलिस आँख मूँदकर हिंसा पर तुल गई। भारत के लोगों ने भारी उत्साह और हिम्मत के साथ पुलिस की इस हिंसा-प्रवृत्ति का सामना किया। भारत के प्रत्येक छोटे-बड़े कस्बे में उन स्त्री-पुरुषों और बच्चों की कहानियाँ सुनने को मिलेंगी, जिन्होंने गोलियों के सामने अपने सीने तान दिए और कानून तथा व्यवस्था की ताकतों को कमीना से कमीना व्यवहार करने की चुनौती दी। अगले पृष्ठों में हम इस उत्साह और वीरता का विस्तृत उल्लेख करेंगे।

आन्दोलन के प्रारम्भिक दिनों में हताहत होने वाले व्यक्तियों की संख्या बताना सर्वथा कठिन है। संघर्ष प्रारम्भ होने के लगभग एक पखवाड़े बाद ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में चर्चिल ने भारतीय स्थिति का विवेचन करते हुए यह बताया था कि इस आन्दोलन में 500 आदमी मरे हैं। श्री चर्चिल को यह भली भाँति मालूम था कि यह संख्या कोरी झूठ है। केवल बम्बई, कलकत्ता तथा दिल्ली में ही 600 से लेकर 800 जानें इस संघर्ष के प्रारम्भिक दिनों में ही चली गईं थीं।

जनता पर प्रतिक्रिया

पुलिस की हिंसा की प्रतिक्रिया जनता पर दो प्रकार से हुई। (1) और अधिक प्रदर्शनों के रूप में, और (2) तोड़-फोड़ के कामों में अत्याधिक उग्रता आ गई। यह जन-

विद्रोह बिलकुल स्वाभाविक था। ब्रिटिश शासन के प्रति तीव्र घृणा प्रकट करने को जब और स्रोत न मिल सके तब वह ब्रिटिश शासन को चलाने वाली मशीनरी को नष्ट-भ्रष्ट करने वाली वृत्तियों के रूप में फूट निकली। लोगों ने इस विश्वास के साथ पग उठाया कि अत्याचारी के हाथों को कमजोर कर देने वाली कोई भी कार्रवाई उचित तथा वैध है। इसमें मानव-जीवन की क्षति न होने का विचार अन्तर्हित अवश्य था। प्राइवेट सम्पत्तियों को हानि न पहुँचाने का भी विशेष ध्यान रखा गया, उन पर किसी भी प्रकार के आक्रमण नहीं किये गए; प्रत्युत शासन की क्षति करना ही आन्दोलनों का एकमात्र लक्ष्य था।

5

देहातों में बगावत

जैसा कि हम पिछले पृष्ठों में लिख चुके हैं कि गांधीजी एवं कांग्रेस-नेताओं की गिरफ्तारी तथा संघर्ष के प्रारम्भ होने का समाचार देहातों में देर से पहुँचा था। पहले सप्ताह में आन्दोलन केवल शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित था। बाद में वह बहुत तेजी से गाँवों में भी फैल गया। गाँवों में यह आन्दोलन हड़तालों या प्रदर्शनों का रूप नहीं ले सकता था और न ही यह लगान की अदायगी बन्द करने के रूप में था। उसके लिए भी अभी समय अनुकूल नहीं था। गाँव के लोगों ने भारत के अन्य कस्बों एवं शहरों में घटी घटनाओं से प्रेरणा ली। गांधीजी तथा कांग्रेस-नेताओं की गिरफ्तारी की खबर मिलने के बाद ही शान्तिपूर्ण मजमों पर भयानक लाठी-प्रहार और गोली-काण्डों के समाचार ने उनके दिलों में तीव्र क्षोभ और असन्तोष उत्पन्न कर दिया तथा प्रान्तों के विशाल क्षेत्रों में उन्होंने खुली बगावत कर दी। देहात के आन्दोलन ने यह रूप धारण किया—

1. एक गाँव से दूसरे गाँव में जाकर संगठन करना।
2. पुलिस थानों और चौकियों पर धावे बोलना।
3. टेलीग्राफ के तार काटना, रेल की पटरियाँ उखाड़ना, मालगाड़ियों तथा फौजी गाड़ियों को पटरियों से उतारना।
4. रेलवे स्टेशनों, रेलवे गोदामों, डाकखानों, हवाई अड्डों तथा पुलों पर अधिकार करना या उन्हें नष्ट करना।
5. पुलिस तथा फौज की हरकतों को रोकने की दृष्टि से सड़कों को काटना।

सामूहिक प्रदर्शन

हमारे विरोधियों को यह बात बार-बार दुहराने का बहुत शौक है कि अधिकांश भारतीय जनता कांग्रेस के साथ नहीं है। जब वे ऐसा कहते हैं तब उनका संकेत देहाती क्षेत्रों की ओर ही होता है। हमारे सभी आन्तरिक झगड़े मुख्यत: शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित हैं। वर्तमान राजनीतिक शासन के अन्तर्गत शहरी क्षेत्रों को धार्मिक उपद्रवों एवं संकीर्ण विचारों का बना दिया गया है। परन्तु यदि आप देहाती क्षेत्रों में जाएँ तो आपको मालूम होगा कि कांग्रेस ही एकमात्र ऐसी संस्था है, जिस पर उनकी पूरी श्रद्धा तथा विश्वास है। क्योंकि

एकमात्र कांग्रेस ने ही उनकी सेवा की है, कष्ट सहन किए हैं और उनके लिए अनेक विपत्तियों का सामना किया है। ग्रामीण भारत पर कांग्रेस के प्रभाव का प्रमाण लगभग सारे प्रान्तों में एक साथ हुए सामूहिक प्रदर्शनों से मिल जाता है। भारत के किसानों ने सबसे अधिक त्याग और बलिदान किया है। वे अनेक भारी बोझों के नीचे पिस रहे हैं, वे एक असन्तोष के ज्वालामुखी हैं, परन्तु बिखरे हुए होने के कारण वे कोई सामूहिक कार्रवाई कर सकने में असमर्थ हैं। गांधीजी और कांग्रेस में उनकी सामान्य श्रद्धा ही एकमात्र ऐसी शृंखला है, जो लाखों-करोड़ों ग्रामीणों को एक सूत्र में बाँधती है। इन करोड़ों व्यक्तियों ने एक व्यक्ति की भाँति, आगे कदम उठाया। जो भी चीज ब्रिटिश राज्य की समझी जा सकती थी, वही उनकी तीव्र घृणा और अविलम्ब विनाश का लक्ष्य बन गई। किसान लोग अनपढ़ अवश्य हैं ; परन्तु उनमें भी काफी समझ होती है। अपने कठोर और कटु अनुभव से वे यह जानते हैं कि विदेशी आततायी शासक किन-किन मोर्चों, नाकों पर काम करता है। वह चाहे पुलिस का थाना हो, अदालत हो, इन्कमटैक्स ऑफिस, डाक बंगला, पोस्ट ऑफिस या रेलवे स्टेशन हो, यह सब ब्रिटिश सरकार के हथियार एवं साधन हैं, अत: इनको नष्ट-भ्रष्ट किया जाए। अत: वे ब्रिटिश राज्य के इन चिन्हों को नष्ट करने के लिए आगे बढ़े; परन्तु जन-क्षति कम हो, इसका उन्होंने विशेष ध्यान रखा। फिर भी कुछ पुलिस के आदमी, फौजी सैनिक तथा कुछ सरकारी अफसर (सरकारी आँकड़ों के अनुसार 40 से 50 तक) लोगों के हाथों से मौत के मुँह में गए। इन मौतों को सरकारी हलकों में बहुत बढ़ा-चढ़ाकर दिखाया गया। हमें स्वयं इस बात का खेद है कि हमारी अहिंसात्मक क्रान्ति में इन लोगों की जानें गई हैं। परन्तु हमें इन सब चीजों पर उसी दृष्टिकोण और उसी विचारधारा से देखना एवं सोचना चाहिए कि चालीस कोटि भारतीयों का यह देश उस समय एक विदेशी सत्ता के विरुद्ध खुली बगावत कर रहा था। इस खुली बगावत को दबाने के लिए प्रत्येक प्रकार के अत्याचार और अमानुषिक ढंग काम में लाये गए, जो कि अंग्रेजों की राय में नाजियों और जापानियों की ही बपौती हो सकते हैं। यदि एक जंगली पुलिस-अफसर को एक शान्तिप्रिय निहत्थे समूह में एक के बाद दूसरे निर्दोष व्यक्ति का खून करते देखकर कभी जनता उत्तेजित हो उठे और वह उसका बदला ले तो केवल चर्चिल, एमरी, लिनलिथगो और मैक्स्वेल जैसे शरीफ तथा ईसा जैसी आत्मा रखने वाले उदार इस पर आश्चर्य कर सकते हैं; हमारे जैसे साधारण मानव नहीं। जहाँ-तहाँ होने वाली इन आकस्मिक हिंसात्मक घटनाओं के बावजूद भी हमारा यह संघर्ष पूर्णत: अहिंसात्मक ही बना रहा।

स्वाधीन सरकारें

देहाती क्षेत्रों के लोग एक बार उत्तेजित होने के बाद बहुत तेजी के साथ आगे बढ़े। गांधीजी की गिरफ्तारी से कोई 2-3 सप्ताह के बाद भी लोगों ने कई इलाकों में अपने आपको स्वाधीन घोषित कर दिया और सत्ता अपने हाथों में ले ली। बहुत से पुलिस थाने पुलिस

से खाली करा लिये गए और वे जनता के अधिकार में आ गए। अदालतों तथा अन्य सरकारी दफ्तरों का कार्य रुक गया। उनके सब रिकार्ड जला दिये गए या नष्ट कर दिये गए। बिहार, सी०पी०, आंध्र, यू०पी०, गुजरात, कर्नाटक और आसाम के अधिकांश जिलों में तथा बंगाल के भी कुछ भागों में सरकार बिलकुल उखड़ गई थी और जनता की स्वाधीन सरकारें कायम हो गईं थीं।

यातायात के सम्बन्ध टूट जाने के कारण फौजी हलचलें कुछ समय के लिए रुक गईं। कई स्थानों पर तो रेलवे तक पर जनता का अधिकार हो गया। इंजिनों पर तिरंगे झण्डे लगाये गए और रेलों के गार्ड एवं ड्राइवर विद्रोहियों की इच्छा पर ही चलते थे। गाड़ियों में उन दिनों जो यूरोपियन यात्रा करते थे, उनके साथ अत्यन्त शिष्टता का व्यवहार किया गया और उनको कोई हानि नहीं पहुँचाई गई। बहुत सी जगह रेलें पटरियों से उतारी गईं, किन्तु उनसे किसी भी व्यक्ति की जान नहीं गई। लोगों ने इस बात का विशेष ध्यान रखा कि केवल मालगाड़ियों को ही पटरियों से उतारा जाए, क्योंकि उस माल से उन फौजों का पोषण होता था, जो कि केवल जनता का दमन करने के काम में ही आती थीं।

देश के अनेक भागों में किसानों पर आतंक जमाया गया और उन्हें झुकने के लिए विवश किया गया।

6

छात्रों का कार्य

किसी भी बुद्धिजीवी वर्ग ने इस आन्दोलन में इतना सक्रिय एवं महत्त्वपूर्ण भाग नहीं लिया जितना कि विद्यार्थी वर्ग ने। इस संघर्ष के आह्वान ने विद्यार्थियों पर बहुत प्रभाव डाला। सन् 1930 और 32 के आन्दोलनों में विद्यार्थियों का भाग बहुत कम था। सन् 1940 के व्यक्तिगत सत्याग्रह में उनको बिलकुल ही अलग छोड़ दिया गया था; परन्तु हमारे इस वर्तमान संघर्ष ने उनको इतना उकसाया कि जितना पहले कभी नहीं हुआ था। गांधीजी की दार्शनिकता और उनकी उलझी हुई राजनीति कभी-कभी छात्रों की समझ से बाहर होती है। वे अधिकांशत: पश्चिमी विचारों एवं सिद्धान्तों के बहाव में ही बहते रहे हैं; परन्तु प्रगतिशील और क्रान्तिकारी गांधीजी उनके लिए विशेष आकर्षण की वस्तु हैं, एक सामूहिक और अन्तिम संग्राम के लिए गांधीजी की पुकार पर उनके दिलों में जोश उमड़ आया। संघर्ष शुरू होने से पूर्व भी छात्रों में पर्याप्त उत्साह था और जब वास्तविक संघर्ष प्रारम्भ हो गया तब उन्होंने तुरन्त कदम उठाया और अपने स्कूल एवं कालिजों से निकलकर लड़खड़ाती जनता का नेतृत्व किया। बम्बई, मद्रास, कलकत्ता, बनारस, दिल्ली, प्रयाग, लखनऊ, आगरा, पटना, कराची, अहमदाबाद, नागपुर, मैसूर और इन्दौर के समाचारों से यह साफ प्रकट था कि विद्यार्थियों ने संघर्ष के प्रथम पखवाड़े में जो प्रदर्शनात्मक कार्य किए वे लगभग एक जैसे ही थे। सरकार ने उन प्रदर्शनों का लाठी-प्रहारों एवं गोलीकाण्डों के रूप में जो उत्तर दिया उसमें बहुत से छात्र मारे गए और बहुत से जख्मी हुए। पुलिस और फौजों की बर्बरता का विस्तृत विवरण पाठक अगले पृष्ठों में पढ़ेंगे। यहाँ केवल इतना ही कह देना पर्याप्त है कि इन निर्दयतापूर्ण लाठी-प्रहारों तथा गोलीकाण्डों ने विद्यार्थियों को दबाने की अपेक्षा उनको 'करो या मरो' के अपने दृढ़ विश्वास में और उग्र बना दिया।

अनेक प्रतिबन्ध लगाए

सरकार ने यह देखा कि विद्यार्थी वर्ग समस्त शहरी क्षेत्रों में क्रान्ति का केन्द्रबिन्दु था, इसलिए उनको बहुत दृढ़ता के साथ दबाना चाहा। कई प्रान्तों में सरकारी विज्ञप्तियाँ जारी करके कालिज के अधिकारियों से विद्यार्थी वर्ग को संघर्ष में भाग न लेने की चेतावनी देने को कहा गया। इस चेतावनी की उपेक्षा करने वाले विद्यार्थी पर अनेक प्रतिबन्ध लगाने का सुझाव भी रखा गया। इस चेतावनी की सामान्यतया छात्रों द्वारा उपेक्षा की गई। यदि

सजा पर जोर दिया जाता तो सारे ही छात्रों को इस प्रतिबन्ध का शिकार होना पड़ता। केवल प्रिंसीपल और प्रोफेसर ही खाली बैंच और दीवारों को लेक्चर देने के लिए बचे रह जाते। अत: सरकारों ने इसका केवल एक ही इलाज सोचा; वह यह कि उसने सब कालिजों के अधिकारियों को अपने-अपने कालिज बन्द कर देने की आज्ञा दे दी। विद्यार्थियों के संगठन को विघटित करने के लिए ही यह कार्रवाई सोची गई थी। विद्यार्थियों को उनकी किलेबन्दी से निकालने के लिए अनेक उपाय किये गए। अनेक स्थानों पर होस्टलों को खाद्य-सामग्री देनी बन्द कर दी गई। कई जगह तो कालिज-होस्टलों पर फौजों ने कब्जा कर लिया, छात्रों को वहाँ से निकालकर उनके सामान को भी बाहर फेंक दिया गया और कालिजों के चारों ओर सशस्त्र पुलिस का पहरा बिठा दिया गया। कोचीन जैसे स्थानों पर सरकुलर जारी करके लड़कों के माता-पिताओं को नौकरी से बर्खास्त करने या ठेके रद्द करने की धमकी दी गई। उन्हें कहा गया कि वे अपने बच्चों को संघर्ष में भाग न लेने दें।

काशी-विश्वविद्यालय का कार्य

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का कार्य इस सम्बन्ध में विशेष उल्लेखनीय है। विश्वविद्यालय के वीर छात्रों एवं छात्राओं ने इन प्रदर्शनों और बनारस में हुई अन्य कार्रवाइयों में प्रमुख भाग लिया। सत्ता का कोई भी उपाय उनका दमन न कर सका। बल्कि उस उमन का प्रभाव बिलकुल उलटा हुआ। वाइयस-चांसलर ने स्थानीय अधिकारियों के संकेत पर लड़कों को विश्वविद्यालय खाली कर देने को कहा। उन दिनों रेल से यात्रा करना खतरे से खाली नहीं था; क्योंकि बनारस के इर्द-गिर्द यातायात-सम्बन्ध बिलकुल अस्त-व्यस्त थे। लगभग 100 विद्यार्थियों का एक जत्था अपने होस्टलों में ही डटा रहा। शीघ्र ही फौज आई और उसने लड़कों को पकड़-पकड़कर बाहर सड़कों पर फेंक दिया। विश्वविद्यालय के द्वार पर जो तिरंगा झण्डा फहरा रहा था उसे फौज ने उतारकर फेंक दिया और फाड़कर पैरों तले रौंद दिया। इसके बाद वह ब्रिटिश फौज विश्वविद्यालय की इमारत पर कब्जा करने के लिए आगे बढ़ी। दरवाजों के ताले 'गैस' से तोड़ दिए। इसके बाद ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा के लिए 200 गोरे तथा 300 भारतीय सिपाही विश्वविद्यालय में नियुक्त कर दिये गए और इंजीनियरिंग कालिज की सारी मशीनरी तथा सम्पत्ति तोड़-फोड़ दी गई।

सरकार ने शहरों और कस्बों में विद्यार्थियों के आन्दोलन को भंग करने के लिए इसी प्रकार की हरकतें कीं; परन्तु शहरों की अशान्ति गाँवों में जा पहुँची। विद्यार्थियों का कार्यक्षेत्र गाँव बन गए और अधिकांश विद्यार्थियों ने घूम-घूमकर कांग्रेस का सन्देश घर-घर पहुँचाया। जो छात्र शहरों में रह गए, वे भी हाथ पर हाथ रखकर नहीं बैठे। उन्होंने अपना संगठन तथा कार्य जारी रखा और बीच-बीच में सरकारी इमारतों के सामने धरना देकर प्रदर्शन करते रहे। समाचारपत्रों को आन्दोलन के समाचार छापने से रोक दिया गया, केवल सेंसर द्वारा प्राप्त खबरें ही छापने की अनुमति उन्हें दी गई।

7

औद्योगिक हड़तालें

वर्तमान संघर्ष के सामूहिक होने के कारण जनता के प्रत्येक वर्ग से इसमें सहयोग देन की आशा की गई और औद्योगिक मजदूरों से तो सबसे अधिक। मजदूरों से हड़ताल करने की अपील की गई, अपनी वेतन-वृद्धि या अन्य आर्थिक माँगों के आधार पर नहीं, प्रत्युत ब्रिटेन के साम्राज्यवादी पंजे से अपने देश को मुक्त करने वाली शक्तियों से कन्धे से कन्धा मिलाकर बगावत में हिस्सा लेने को। दूसरे शब्दों में उनसे राजनैतिक कारणों पर हड़ताल करने को कहा गया और नि:सन्देह सारी मिलों और फैक्टरियों के मजदूरों ने मिलकर इस अपील का पालन किया। पिछली सत्याग्रह की लड़ाइयों का भार मध्यम वर्ग एवं किसानों के कन्धों पर था; परन्तु वर्तमान संघर्ष में औद्योगिक मजदूरों को एक महत्त्वपूर्ण भाग अदा करना था। आजकल सारे उद्योग और व्यवसाय का उपयोग भारत के तथाकथित युद्ध-प्रयास की उन्नति के लिए किया जाता है तथा इस युद्ध-प्रयास का उपयोग इस देश में विदेशी शासन लादे रखना है। उद्योग एवं व्यवसाय के ठप होने से युद्ध-प्रयास को गहन क्षति पहुँची। यदि हमारा संघर्ष अत्यन्त तीव्र और अल्पकालिक होता तो ये औद्योगिक हड़तालें एक निर्णयात्मक कार्य करतीं। परन्तु ज्यों ही हड़तालें हुईं हमारा आन्दोलन भी लम्बा खिंच गया। मजदूर लोग अनिश्चित काल तक अपना सहयोग जारी न रख सके। यदि वे सहयोग जारी रखते तो उन्हें त्याग एवं बलिदान करना पड़ता।

सारे प्रयत्न निष्फल

यद्यपि अनिश्चित काल तक के लिए मजदूरों का सहयोग न मिला तथापि जितने काल तक वह रहा और जिस रूप में वह रहा, क्रान्ति की सफलता के लिए वह पर्याप्त था। अहमदाबाद तथा गुजरात के विभिन्न भागों में 100 से अधिक कपड़े की मिलों का तीन मास से भी अधिक काल तक बन्द रहना राजनैतिक संघर्षों और ट्रेडयूनियन आन्दोलनों के इतिहास में एक अभूतपूर्व घटना थी। सरकार द्वारा मिलों को चालू कराने के लिए किये गए सारे प्रयत्न निष्फल गए। मजदूरों को फोड़ने और मिल-मालिकों को गिरफ्तार करने तक के हथकण्डे काम में लाये गए। टाटा के कारखानों की हड़ताल भी विशेष उल्लेखनीय है। वायसराय द्वारा मि० एमरी को लिखे गए एक पत्र में निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण शब्द थे : ''सबसे प्रमुख घटना टाटा के कारखानों में खुले आम राजनैतिक हड़ताल की घोषणा

और महत्त्वपूर्ण युद्ध के उद्योग-धन्धों का रुक जाना है; जिसको कि हम जान-बूझकर प्रकाशित नहीं करना चाहते।'' सरकार ने भी उन दिनों इस हड़ताल को भंग करने का पूर्ण प्रयत्न किया। ''जब तक भारत में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना नहीं होगी या हमें गांधीजी, राष्ट्रपति या पण्डित जवाहरलाल नेहरू से आदेश प्राप्त नहीं हो जाते तब तक हम अपने काम पर नहीं लौटेंगे।'' इस घोषणा के साथ 'टाटा आयरन एण्ड स्टील वर्क्स' के मजदूरों ने अनिश्चित काल के लिए हड़ताल कर दी। परन्तु टाटा के कर्मचारियों का यह दृढ़ विश्वास ब्रिटिश साम्राज्य के लिए अपमान की वस्तु थी और उसका उचित बदला लिया जाना था। मजदूरों को उनके घरों से निकालकर लाने तथा उन्हें संगीन के आगे खड़ा करके काम कराने के उपाय काम में लाये गए। अनिच्छुक मजदूरों ने कुछ समय के लिए धीमी गति से कार्य करने की नीति अपनाई। संगीनें और बन्दूकें फिर चमकीं तथा प्रत्येक मजदूर के कार्य का परिमाण (कोटा) निश्चित किया गया। उसको वह पूरा करना पड़ता था, अन्यथा वह गोली का शिकार बना दिया जाता।

सरकारी रिपोर्ट

इन औद्योगिक हड़तालों से युद्ध-सहयोग को बहुत हानि पहुँची। इसका ज्वलन्त प्रमाण रसद विभाग से जारी की गई सरकारी रिपोर्ट का निम्नलिखित उद्धरण है :—

1. कांग्रेस आन्दोलन का कपड़े की मिलों पर और विशेषत: अहमदाबाद में, जहाँ से कि 90 प्रतिशत कातने वाले अपने घर चले गए हैं, बहुत बुरा प्रभाव पड़ा है। मद्रास में बकिंघम तथा कर्नाटक मिलों की हड़ताल, जो कि 25 अगस्त को प्रारम्भ हुई थी और अभी तक जारी है, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है; क्योंकि एक करोड़ गज खाकी कपड़े में से 45 लाख गज कपड़ा इन्हीं दोनों मिलों में तैयार होता था। बड़ौदा, इन्दौर, नागपुर तथा दिल्ली में भी भिन्न-भिन्न अरसों के लिए हड़तालें रहीं। हड़ताल के पहले महीने में लगभग ढाई करोड़ गज कपड़े की क्षति का अनुमान लगाया गया है। सरकारी क्लोंदिग फैक्टरी (सिलाई के कारखानों) पर इस हड़ताल का कोई प्रभाव नहीं हुआ, क्योंकि सिलाई का कार्य लगभग हो चुका था और सबके पास दो मास का रिजर्व स्टाक था। परन्तु सूती माल का स्टाक कठिनाई से दो सप्ताह का है और यह भी इस अव्यवस्थित रूप से बँटा हुआ है कि लाहौर जैसे महत्त्वपूर्ण केन्द्रों में बिलकुल भी स्टाक नहीं है इसलिए इस आन्दोलन की सबसे गम्भीर वस्तु 'अहमदाबाद कैलिको मिल्स' और 'मैसर्स हथीसिंह एण्ड कम्पनी' का बन्द हो जाना है, जो कि हमारे सिले हुए सूती माल के सबसे बढ़े उत्पादक हैं।

2. सिगरेट बनाने वाली सबसे बड़ी फर्म इम्पीरियल टैबाकू कम्पनी के कलकत्ता, बम्बई, बंगलौर और सहारनपुर के सब कारखानों से माल की डिलीवरी होने में काफी विलम्ब होने की सम्भावना है। उनकी मुंगेर फैक्टरी को, जहाँ से कि उनका सारा सिगरेट का कागज तथा अन्य सारा सामान आता है, भारी क्षति पहुँची है। फैक्टरी से अभी तक

भी कोई सम्पर्क स्थापित नहीं हो सका है।

3. जयपुर रियासत में, जहाँ पर कि स्थिति इतनी भयानक हो चुकी है कि जिससे जंगलाती कामों को रोकना पड़ा, लगभग एक लाख रेलवे-स्लीपर, एक लाख बीस हजार बम्बू जला दिये गए हैं।

4. कानपुर तथा अन्य चमड़ा उत्पादन करने वाले केन्द्रों में उपद्रव होने से 50 प्रतिशत उत्पादन कम हो गया।

5. गेहूँ और गेहूँ से तैयार होने वाली चीजों पर भी इस आन्दोलन का बहुत प्रभाव पड़ा है, गणेश फ्लोर मिल दिल्ली पर भी इसका विशेष प्रभाव पड़ा है, जहाँ पर कि इनकी सारी वर्कशापों के औजार उपद्रवी उठा ले गए बताए जाते हैं और कारखानों को भी काफी क्षति पहुँची है। उनकी 'बी' मिल तक बन्द है। स्टोरों में लूट-खसोट होने से 150 टन की क्षति और उत्पादन में 4000 टन की कमी का अनुमान लगाया गया है।

कार्य सराहनीय

इस लम्बी हड़ताल में हमारे मजदूरों को काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। जनता उनको जो भी सहायता दे सकती थी, दी गई। अहमदाबाद में सहायता-कार्य बहुत ही सराहनीय था। सारांश यह है कि हमें यह कहते हुए कोई संकोच नहीं होता कि हमारे औद्योगिक मजदूरों ने बहुत अधिक कार्य किया और आगामी समय में, जबकि दोबारा एक मनोवैज्ञानिक आन्दोलन होगा, मजदूर लोग पहले से भी अधिक सहयोग प्रदान करेंगे, इसमें हमें तनिक भी सन्देह नहीं।

8

एक नज़र में

अगस्त-क्रान्ति के दिनों में समस्त भारत बर्बरता का केन्द्र-स्थल बना हुआ था। जगह-जगह पर जो-जो भीषण अत्याचार निरीह भारतीयों पर किये गए, उनका वर्णन करना लेखनी से परे है। फिर भी उस समस्त विद्रोह पर प्रारम्भ में एक नज़र डालकर हम आगे विस्तार से उन लोमहर्षक भीषण अनाचारों का वर्णन करेंगे।

यू०पी० में तो साधारण कानूनी शासन की जगह हैलटशाही (जिसे दूसरे शब्दों नादिरशाही शासन कह सकते हैं) की स्थापना हो गई थी। सर मारिस हैलेट (यू०पी० के तत्कालीन गर्वनर) ने सन् 1942 के आन्दोलन को दबाने और कुचलने के लिए जो कुछ किया वह धीरे-धीरे प्रकाश में आ गया है। इलाहाबाद, बनारस, बलिया, गाज़ीपुर, आजमगढ़, गोरखपुर में उन्होंने जिस प्रकार दमन-चक्र चलाया, जिस प्रकार लोगों से युद्ध-चन्दा जबरदस्ती वसूल किया और निरपराध लोग जिस प्रकार सताये गए, वह घोर हृदयहीनता और बर्बरता का द्योतक है। सर मारिस हैलेट तो कांग्रेस और राष्ट्रीय आन्दोलन को कुचलकर उसका गला दबाने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ थे। उन्होंने खुले आम घोषणा की थी कि वे कांग्रेस-संगठन को नष्ट करके सदा के लिए उसे कुचल देंगे। कांग्रेस के अस्तित्व को मिटाने और लोगों की स्वातन्त्र्य-भावना को कुचलने में अपनी शक्तिभर उन्होंने कोई कसर उठा नहीं रखी थी। परन्तु वे कांग्रेस की कठोर शिला से अपना सिर टकराकर रह गए और अन्त में भारत से विदा हो गए। कांग्रेस आज भी दृढ़ खड़ी है। पर्वतराज हिमालय की भाँति अडिग-अटल प्रबल है। आज सर मारिस यह अवश्य अनुभव करते होंगे कि उनकी दृढ़ प्रतिज्ञा असफल हो गई और कांग्रेस उनके दमन की कठोर अग्नि-परीक्षा से अधिकाधिक शक्तिशाली, प्राणवान और लोकप्रिय निकली है।

हैलटशाही

सर मारिस का शासन-काल दमन और ज्यादती का काल था। उसके शासन-काल को, और विशेषत: पिछले तीन वर्षों के शासन-काल को, कभी भुलाया नहीं जा सकता। इन तीन वर्षों के भीतर प्रान्त में पूर्णतया सैनिक राज्य रहा, लोग सब प्रकार से आतंकित किये गए। तनिक सी ही उत्तेजना पर लोग गोलियों के शिकार बनाये गए। अनेक स्थानों पर महिलाओं को अपमानित किया गया। विद्यार्थी निर्दयता के साथ सताये गए। हर स्थान पर कांग्रेस-जनों पर आक्रमण किये गए। घरों में आग लगाई गई और गाँव जला दिये गए

तथा लूट लिये गए। हैलटशाही के जमाने के दमन का इतिहास बहुत लम्बा है और ऐसे दमन प्रान्त में सभी जगह हुए हैं। आगे की पंक्तियों में उन सभी अत्याचारों पर संक्षेप में प्रकाश डाला जाएगा।

बलिया की वीरता

बलिया में वहाँ के आन्दोलन और जन-स्वातन्त्र्य को दबाने के लिए हैलटशाही सरकार ने दमन और अत्याचार के अपने समस्त हथियारों का खुलकर प्रयोग किया। बलिया जिले के अनेक गाँव जला दिये गए। आदमी पकड़-पकड़कर पेड़ों पर उलटे लटका दिये गए, वहाँ ग्रमीणों को हाथियों के पैरों में कुचलवाया गया, उनकी पूँछ में बाँधकर उन्हें बुरी तरह घसीटा गया। बलिया की पुलिस चौकी पर झण्डा लगाने के प्रयत्न में 14 व्यक्ति पुलिस की गोली के शिकार हुए। बाँसडीह में महीनों निरन्तर सार्वजनिक रूप से लोगों पर कोड़ेबाजी होती रही। नवापुरा गाँव को 5 घण्टे तक जलाया गया। इतने दमन के बाद भी बलिया के लोगों ने दमन की सरकारी चक्की को बिलकुल बेकार करके अपने क्षेत्र में अपनी सुसंगठित और व्यवस्थित सरकार कायम कर ली थी। यह शासन इतना सुन्दर था कि उसके कार्यकाल में कहीं भी किसी प्रकार का अपराध नहीं हुआ। घनघोर दमन के मुकाबले में अनुपम बलिदान और अदम्य साहस का परिचय देकर बलिया के लोग स्वातन्त्र्य-भावना से अभी तक भरपूर हैं। इसी प्रकार हैलटशाही के घोर दमन आजमगढ़, गाजीपुर, इलाहाबाद, बनारस आदि में भी हुए। इतना होने पर भी जनता की स्वातन्त्र्य-भावना अक्षुण्ण बनी रही

बिहार का वैभव

अगस्त-क्रान्ति में बिहार का स्थान प्राय: सबसे आगे है। इस आन्दोलन में दूसरे आन्दोलन से भी बढ़कर बिहार ने अनुपम त्याग, कष्ट-सहिष्णुता और स्वातन्त्र्यप्रियता का परिचय दिया है। 24 दिसम्बर, सन् 1945 ई० को बिहार प्रान्तीय छात्र-सम्मेलन का उद्घाटन करने श्री नेहरू जी पटना गए थे, तो सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष श्री जगतनारायण लाल ने उनका स्वागत करते हुए कहा कि "बलिया और यू०पी० के पूर्वी ज़िलों में जो अत्याचार हुए उनके कारण आपकी आँखों से आँसुओं का बरबस बह निकलना स्वाभाविक है। परन्तु इस प्रान्त के नवयुवकों और जनता ने जिस साहस के साथ इस क्रान्ति में भाग लिया और विदेशी शासन को देश से जड़मूल उखाड़ फेंकने के लिए तैयार रहने के कारण जो अत्याचार सहे, उनका परिचय प्राप्त करना आपके लिए आवश्यक है।" इसका उत्तर देते हुए श्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा था : "किसी प्रान्त में तो कोई स्थान चुना जा सकता है परन्तु बिहार तो सारा का सारा ही क्रान्ति-भावना और विद्रोह से ओत-प्रोत था। यदि मैं बिहार का उल्लेख न करूँ तो इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि मैं बिहार के वैभव से अनभिज्ञ हूँ।" वास्तव में बिहार ने समग्र रूप से अगस्त-आन्दोलन में भाग लिया और अनुपम साहस, त्याग और कर्म-कौशल का परिचय दिया। बिहार में जो दमन और अत्याचार हुए वे रोमांचकारी हैं। अगस्त, 1942 की क्रान्ति के प्रारम्भ में नौकरशाही ने पटना सेक्रेटरिएट के सामने छात्रों को गोलियों का शिकार बनाया था।

पटना के अन्दर आने वाले सभी मार्गों पर रोक लगा दी गई थी। बिहार के देहातों में जो अत्याचार किये गए, उनका वर्णन करना सर्वथा कठिन है। वहाँ के समस्त देहातों में निहत्थे क्रांतिकारियों के कुचलने और आतंक फैलाने के लिए फौज फैल गई थी। किसी भी प्रकार का दमन या अत्याचार उन्हें कुचलने के लिए कम नहीं समझा गया। बहादुर देशभक्तों के गाँव तोप का निशाना बना दिये गए। बड़े-बड़े अफसरों के सामने मकान तोड़े गए, लूटे गए और उनमें आग लगाई गई। पटना के निकटवर्ती स्थान विक्रमपुर, बाढ़, मोकामा और बख्तियापुर के देशभक्त देशभक्ति का परिचय देने के अपराध में गोलियों के निशाने बनाये गए। सारे बिहार में एक छोर से दूसरे छोर तक दमन और अत्याचारों का भयंकर ताण्डव हुआ। पुलिस और फौज भूखे भेड़ियों की भाँति निरीह जनता पर टूट पड़ी और उसे निर्दयता के साथ लूटा, सताया और भयभीत किया गया। समस्त भारत में बिहार ही में केवल हवाई जहाज से गोले बरसाये गए। बिहार में कितने लोग शहीद हुए, कितने गोलियों के शिकार बने, इसकी तालिका अन्यत्र दी जा रही है। बिहार ने इस क्रान्ति में केवल गौरवपूर्ण भाग ही नहीं लिया, अपितु अनेक स्थानों में बलिया की भाँति अपना एक सुसंगठित लोकतन्त्र स्थापित भी कर लिया था, जो कई सप्ताह तक निर्बाध रूप से चलता रहा। इतने दमन और अत्याचार के बावजूद भी बिहार 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव को कार्यान्वित करने के लिए सब तरह तैयार था। जयप्रकाश बाबू ने बिहार की हजारीबाग जेल से भागकर ही देश के कोने-कोने में विद्रोह का भैरव-राग फूँका था।

मिदनापुर में खूँरेजी

बिहार और यू०पी० की ही भाँति भारत के अन्य स्थानों में भीषण अत्याचार और दमन किये गए। बंगाल का मिदनापुर जिला तो खूँखारों का राज्य ही बन गया था। अगस्त-क्रान्ति के समय वहाँ पर लूट, बलात्कार, खूँरेजी और पैशाचिकता का बोलबाला था। मिदनापुर जिले के तामलुक सब डिवीजन में अगस्त, 1942 से अगस्त, 1944 के बीच पुलिस और फौज के आदमियों ने 22 स्थानों पर गोलियाँ चलाईं, जिसके परिणामस्वरूप 44 व्यक्ति मरे, 194 सख्त और 142 थोड़े घायल हुए। इन्हीं दिनों 63 स्त्रियों से बलात्कार किया गया और 33 स्त्रियों से बलात्कार करने का प्रयत्न किया गया तथा 150 स्त्रियों पर आक्रमण किया गया। 1868 व्यक्ति गिरफ्तार किये गए और 5076 व्यक्ति गैरकानूनी तौर से नज़रबन्द किये गए। इस समय के बीच 124 स्थान जलाये गए, 49 मकान जब्त किये गए और 1044 मकानों से 2,12,795 रु. की सम्पत्ति लूटी गई। 5 यूनियनों पर 1,90,000 रुपये का जुर्माना किया गया। 19 संस्थाएँ गैरकानूनी घोषित की गईं। यहाँ के एक 'सुतादारा' नामक थाने पर अधिकार कर लेने पर जनता पर वायुयान से बम गिराये गए। 30 पुल तोड़े गए थे और अनेक सरकारी अफसर गिरफ्तार किये गए थे। 17 दिसम्बर, सन् 1942 को लोगों ने डिवीजन में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना कर ली थी, जिसका संचालन बहुत ही

सुन्दर रीति से होता था। मेदिनीपुर जिले के कोन्ताई सब डिवीजन में भी अगस्त-क्रान्ति के समय इसी प्रकार दमन हुआ; जिसका वर्णन विस्तार से किया जाएगा।

भारत के राष्ट्रीय जीवन के इन चार वर्षों का इतिहास उसके त्याग, बलिदान और साहस की रोमांचकारी घटनाओं से परिपूर्ण है। यू०पी० के तत्कालीन प्रान्तपति श्रीकृष्णदत्त पालीवाल ने मथुरा की एक विराट् सभा में भाषण देते हुए कहा था—"कांग्रेस किसी की दुश्मन नहीं है। वह अंग्रेजों की भी दुश्मन नहीं है। सन् 1942 का आन्दोलन नेताओं की आकस्मिक गिरफ्तारी पर जनता के रोष का परिणाम था। यदि वह एक संगठित आन्दोलन होता तो 14 दिन में हम ब्रिटिश सरकार का एक बार तो अन्त कर ही देते, फिर चाहे फौज और बमों से हम पर काबू कर लिया जाता। 1942 की क्रान्ति को गांधीजी तो अहिंसात्मक कह सकते हैं; परन्तु जिनकी हुकूमत हिंसा पर निर्भर है, वह सन् 1942 की क्रान्ति के मुकाबले में बच्चों का खेल जैसी थी, अतएव हमें इस संघर्ष पर गौरव है।" आगे चलकर पालीवाल जी ने अपने भाषण में कहा—"मि० चर्चिल, एमरी और लार्ड वेवल कहते थे कि 8 अगस्त का प्रस्ताव वापिस ले लेने पर ही कांग्रेस से समझौता हो सकेगा, लेकिन उसी सरकार को हार मानकर समझौते की बातें चलानी पड़ीं। प्रस्ताव वापिस नहीं लिया गया और 'भारत छोड़ो' का स्थान 'एशिया छोड़ो' ने ले लिया। यदि एक वर्ष में एशिया नहीं छोड़ा गया तो हमें 'दुनिया छोड़ो' का नारा बुलन्द करना होगा।"

देशी राज्य भी लपटों में

अगस्त की क्रान्ति ब्रिटिश भारत में ही नहीं हुई अपितु देशी राज्यों में भी इसकी लपटें पहुँचीं। उड़ीसा प्रान्तीय लोक परिषद् के मन्त्री श्री सारंगधरदास ने एक वक्तव्य में बतलाया था कि 1942 का संघर्ष देशी रियासतों में भी फैला और उस आन्दोलन को राजाओं ने अंग्रेजों की सहायता से तुरन्त कुचल दिया। धेनकानल, नीलगिरि और तालचर में गोलियाँ चलाई गईं। नीलगिरि और तालचर राज्यों में तो आकाश से गोलियाँ बरसाकर आन्दोलन को कुचला गया। सैकड़ों व्यक्ति बिना अभियोग चलाए ही जेलों में ठूँस दिये गए। अनेक कार्यकर्त्ताओं को लम्बी-लम्बी अवधि की सजाएँ दी गईं; 55 गाँवों के आदमी इतने आतंकित हुए कि वे एक समीपवर्ती 'मयूरभंज' नामक रियासत में पड़े दिन काटते रहे। इन लोगों पर 75 हजार रुपये से अधिक जुरमाना किया गया, जिसकी वसूलयाबी सामूहिक रूप से हुई। तालचर में घायलों की संख्या 500 से अधिक थी। बहुत से घरों को जला दिया गया और जमीनें ज़ब्त कर ली गईं। 27 दिसम्बर, 1945 को श्री बा० सम्पूर्णानन्द की अध्यक्षता में बनारस ज़िला कांग्रेस-कमेटी की बैठक में यह रिपोर्ट पेश की गई थी कि जिले में 15 स्थानों में गोली चलाई गई, जिसमें 27 मरे और 80 घायल हुए। 2 आदमियों के पैर और एक आदमी के हाथ गोली लग जाने से कट गए। गोली से आहतों और मृतों में बालक ही अधिक थे। लगभग 5000 व्यक्ति नज़रबन्द किये गए और 120 पर मुकदमा चला, जिनमें से 3 को फाँसी, 16 को आजीवन कारावास और 35 को विविध सजाएँ मिलीं। 18 व्यक्तियों को पेड़ से बाँधकर बेंत लगाये गए।

सतारा की सरकार

सतारा (बम्बई) में तो 1942 से लेकर 1945 ई० तक दमन चक्र चलता रहा। वहाँ की जनता ने एक समानान्तर सरकार की स्थापना कर ली थी। इस सरकार का एक गुप्तचर विभाग भी था, इसकी अपनी अदालत थी। सरकार ने वहाँ जो दमन किया, वह रोमांचकारी है। सन् 1945 तक वहाँ दमन होते रहे, परन्तु सरकार अपने उन पैशाचिक कार्यों को छिपाए रही।

1942 की, अगस्त-क्रान्ति देशव्यापी थी, इसलिए कम और अधिक सभी जगह अत्याचार हुए। परन्तु इस दमन की अग्नि-परीक्षा में तपकर हमारा राष्ट्र बहुत ही सबल और शक्तिशाली होकर निकला है। 1920, 1930, 1932, 1941 और 1942 ई० के संघर्षों से गुजरते और मोर्चे पर मोर्चे फतह करते हुए आज हम आजादी की अन्तिम मंजिल तक पहुँचे हैं। स्वतन्त्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार था, न्याय और सत्य हमारे साथ था, अहिंसा हमारा साधना-पथ था, महात्मा गांधी जैसे युगपुरुष हमारे पथ-प्रदर्शक थे, जयप्रकाश, अरुणा, लोहिया और अच्युत पटवर्धन-जैसे सेनानी हमारे सारथी थे; फिर क्यों न हमारी विजय होती।

कोल्हापुर की काशीबाई

वैसे तो सभी जगह अगस्त की क्रान्ति के दिनों में पुलिस द्वारा अत्याचार किये गए थे; किन्तु रियासत कोल्हापुर का एक ऐसा राक्षसी कारनामा हमारे सामने आया है, जिसे पढ़ एवं सुनकर आँखें शर्म से नीचे झुक जाती हैं, खून खौलने लगता है। 14 अक्तूबर, 1944 को पुलिस का एक दारोगा कुछ सिपाहियों के साथ चिरवानल नामक गाँव में जाकर वहाँ की काशीबाई हणबर नामक एक हिन्दू महिला को पकड़ लाया। पुलिस उसके पुत्र श्री मला हणबर को अगस्त-क्रान्ति के सिलसिले में पकड़ना चाहती थी; मगर वह तभी से फरार था। दारोगा ने काशीबाई से उसका पता पूछा और जब उसने बताने से सर्वथा इन्कार कर दिया तो उसे उसके पति और दो पुत्रों के सामने नंगा करके पीटा। यहाँ तक भी कहा जाता है कि उसके गुप्तांगों में मिर्च भर दी गईं, जिससे काशीबाई को असह्य कष्ट हुआ। काशीबाई ने जब इस घटना की रिपोर्ट राज्य के प्रधानमन्त्री के यहाँ की तो इसकी कोई जाँच नहीं की गई, प्रत्युत यह कहकर टाल दिया गया कि यह कोई गम्भीर बात नहीं है। बाद में बम्बई सरकार के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्री बी० जी० खेर की अध्यक्षता में जाँच करने के लिए एक कमेटी नियुक्त हुई। जिसने जाँच की और वहाँ के तत्कालीन पुलिस अधिकारियों ने भी इस घटना की सच्चाई को स्वीकार किया; किन्तु साथ में इस मामले को दबा देने की सिफारिश भी की। मालूम हुआ है कि राज्य ने उन अत्याचार करने वाले अफसरों को कोई भी दण्ड नहीं दिया था।

दूसरा भाग

क्रान्ति का विस्फोट और दमन

ज्वालामुखी फट गया अचानक,
रुद्र रूप हुंकार उठा।
सौ-सौ जानें बलिवेदी पर,
चढ़ जाने का ज्वार उठा॥

स्वेच्छाचार हुआ क्रन्दनमय,
ध्वस्त अनेकों ग्राम हुए।
जिससे विद्रोही जनता के,
स्मरण-योग्य थे काम हुए॥

महाराष्ट्र, बंगाल, उड़ीसा,
वर्धा, यू० पी० जाग गया।
बलिया के कोने-कोने से
उठा क्रान्ति का राग नया॥

'भारत छोड़ो' भेद खुला अब
हाट उठाओ मोहमयी।
पर्व जागरण का है आया,
गूँज उठी ध्वनि रोषमयी।

1

बम्बई से प्रारम्भ

9 अगस्त को बम्बई के गवालिया मैदान का दृश्य अभूतपूर्व था। अगस्त-क्रान्ति के इतिहास में इस स्थान का नाम अत्यन्त महत्त्व प्राप्त कर गया है। 9 अगस्त को प्रात:काल यह चर्चा सारे शहर में फैल गई थी कि जो नेता नेशनल वालन्टियर कोर का प्रदर्शन देखने आने वाले थे, वे सब प्रात:काल ही गिरफ्तार करके किसी अज्ञात स्थान को भेज दिये गए हैं। इससे जनता में एकदम जोश का ज्वालामुखी फट गया। सारे स्वयंसेवक एवं स्वयं-सेविकाएँ नारंगी रंग की पोशाक पहनकर पेरड के लिए उस मैदान में जमा हो गए। पुलिस तो पहले से ही वहाँ पर तैनात थी। भूलाभाई देसाई के सुपुत्र ने तिरंगा झण्डा अपने हाथ में ले लिया और वह उसे लेकर लहराने के लिए उद्यत हुए ही थे कि झपटकर एक यूरोपियन सार्जेन्ट ने उनसे कहा, "इस मैदान पर अब पुलिस और फौज का अधिकार हो गया है, इसलिए आप अपने स्वयंसेवकों को यहाँ से शीघ्र ही हटा लें, अन्यथा हम अश्रुगैस का प्रयोग करेंगे।"

अरुणा का भाषण

जब कोचीन रियासत प्रजामण्डल के प्रधान मि० नीलकण्ठ ऐयर को इस घटना का पता लगा तो उन्होंने गोरे सार्जेन्ट के पास जाकर कहा कि इस स्वयंसेवक दल का जिम्मेदार व्यक्ति मैं हूँ। आप मुझसे इस विषय में जो कहना हो, कहें। परन्तु सार्जेन्ट ने इस पर ध्यान नहीं दिया और एकदम पुलिस को अश्रुगैस प्रयुक्त करने का आदेश दे दिया। मि० ऐयर ने श्रीमती अरुणा आसफली के पास जाकर सारी बातें समझाईं और स्वयंसेवकों को न हटने पर भीषण रक्तपात होने की आशंका प्रकट की। सब स्वयंसेवक वहाँ से हटा दिये गए और अरुणा का ओजस्वी भाषण प्रारम्भ हुआ।

शीघ्र ही पुलिस और फौज ने उस विशाल मैदान पर कब्जा कर लिया। सभी सैनिक अश्रुगैस की सामग्री से पूर्णतया लैस थे। सिपाहियों ने गैस के छोटे थैले अपने हाथों में ले लिए और सार्जेन्ट के हुक्म देने पर दुबारा अश्रुगैस प्रयोग में लाई गई। जनता टस से मस नहीं हुई। श्रीमती अरुणा आसफअली ने भाषण समाप्त करके झण्डा फहरा दिया।

लाठीचार्ज और गिरफ्तारियाँ

जब भीड़ पर कोई प्रभाव नहीं हुआ तो गोरे सार्जेन्ट ने पुलिस को फिर धुआँधार अश्रुगैस छोड़ने का आदेश दिया। अश्रुगैस के प्रारम्भ होते ही भीड़ के नेता ने वहीं पर सबको लेट जाने की आज्ञा दी। दो मिनट तक लेटे रहने के बाद सारी भीड़ फिर खड़ी हो गई। पुलिस ने फिर अश्रुगैस का प्रयोग किया। इसका भी जब भीड़ पर कोई प्रभाव नहीं हुआ तो पुलिस ने लाठियाँ सँभालीं और भीड़ के कुछ नेता गिरफ्तार भी कर लिए। लाठीचार्ज शुरू हुआ और भीड़ भी छँटनी शुरू हो गई। श्री ऐयर अश्रुगैस का प्रहार होने के बाद अपनी आँखों को मल ही रहे थे कि उनके दोनों हाथों पर लाठियाँ आकर पड़ीं। सरदार पटेल की सुपुत्री कुमारी मणीबेन पटेल को भी कई लाठियाँ लगीं। इतना होते हुए भी उनका गिरफ्तार न होने का ही निश्चय था। उनकी यह निश्चित धारणा थी कि गिरफ्तारी से बचकर समस्त देश में आन्दोलन को संगठित करना ही अधिक श्रेयस्कर है।

पूर्ण हड़ताल

बम्बई की इस घटना का समाचार रेडियो द्वारा दो ही घण्टे में समस्त देश में फैल गया। बम्बई में लगभग 15 दिन पूर्व से ही नर-शार्दूल सरदार पटेल के ओजस्वी भाषणों से अपूर्व जागृति उत्पन्न हो गई थी। इसलिए बम्बई की जनता ने इन सब आक्रमणों का बड़ी वीरता से मुकाबला किया और वह हारी नहीं। सरदार ने अपने अन्तिम सन्देश में कहा था कि, "बीस वर्ष तक जो तालीम प्राप्त की है, उसका इस समय सदुपयोग करना होगा।" अपने सरदार का यही सन्देश बम्बई की जनता के कानों में गूँज रहा था। ऐसा सुयोग मिलने की प्रतीक्षा इस समय जनता को थी। अतएव नेताओं की गिरफ्तारी की प्रथम प्रतिक्रिया सारे नगर में पूर्ण हड़ताल के रूप में प्रारम्भ हुई।

तूफान बरपा हो गया

बम्बई की यह हड़ताल केवल बाजार तक ही सीमित न रहकर, समस्त नगर के छोटे-बड़े कारखानों में भी फैल गई। जब ट्राम और बस-सर्विस के कर्मचारियों ने इस हड़ताल में योग न दिया तो जनता में एक तूफान बरपा हो गया। फलस्वरूप अनेक बसें तथा ट्रामें जला दी गईं, यातायात बन्द कर दिया गया। तार और टेलीफोन के खम्भे उखाड़ दिये गए। सभी सरकारी इमारतों को हानि पहुँचाने का प्रयत्न किया गया। इस प्रकार नेताओं की गिरफ्तारी पर थोड़ी ही देर में बम्बई में विक्षोभ की अग्नि प्रज्वलित हो उठी।

गोली का शिकार

उक्त घटनाओं से ब्रिटिश नौकरशाही का तख्ता हिल गया और वह इनको दबाने के लिए सब तरह के साधन प्रयुक्त करने पर तुल गई। परिणामस्वरूप दोपहर के समय प्रार्थना समाज के पास गोली चली। एक नवयुवक उस गोली का शिकार हुआ। इससे जनता

और भी क्षोभित हो गई, तब जनता और पुलिस के बीच खुलकर संग्राम हुआ जिसमें 35 व्यक्ति गोलियों के शिकार हुए। इसके बाद नि:शस्त्र और असहाय जनता का पुलिस और फौज ने पूर्ण बर्बरता के साथ दमन किया। उस पर अनेक अत्याचार किये-कराये गए। बन्दूक के दबाव से जनता से कुत्सित से कुत्सित कार्य कराये गए। इन अत्याचारों से बच्चे और स्त्रियाँ तक भी नहीं बचीं। कई जगह पर तो महिलाओं से बहुत दुर्व्यवहार के भी कार्य किये गए।

अत्याचारों की जाँच

बम्बई की 'सिविल लिबर्टीज यूनियन' ने आन्दोलन के बाद इन अत्याचारों की जाँच करने के लिए एक कमेटी नियुक्त की थी। उक्त कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में कहा है : "हमें ऐसे अनेक उदाहरण मिले हैं, जहाँ अनुचित रूप से गोलियाँ चलाई गईं। भीड़ ही नहीं, प्रत्युत ऐसे व्यक्तियों पर भी गोलियाँ चलाई गईं जो भीड़ से सर्वथा दूर थे या एकदम नहीं थे।" बम्बई के बड़े हस्पताल और मेडिकल कालिज के प्रधान डाक्टर जीवराज मेहता ने अखबारों में छपवाया था कि किस प्रकार एक मासूम बच्चे को गोली का निशाना बनाया गया ! बच्चा भीड़ में नहीं था, उसका तो केवल यही अपराध था कि वह 'महात्मा गांधी की जय' बोल रहा था। लोगों को घसीट-घसीटकर उनके घरों से बाहर निकाला गया। ऐसे लोगों पर भी गोलियाँ बरसाई गईं, जो अपने घरों से बाहर निकले ही नहीं थे, उन पर अनेक प्रकार के अत्याचार किये गए।

छात्रों पर गोलियाँ चलाई गईं

कैरा जिले में कुछ विद्यार्थी जनता को सत्याग्रह का उपदेश देकर गाँव से वापस लौट रहे थे। वे समीपवर्ती जिस स्टेशन से गाड़ी में बैठना चाहते थे उसी ट्रेन से इन छात्रों का पीछा करने वाला एक पुलिस का दस्ता उतरा और उनकी ओर बढ़ा। छात्रों के मुखिया ने पुलिस पार्टी के प्रमुख व्यक्ति से कहा कि वे सत्याग्रही हैं और यदि पुलिस उन्हें गिरफ्तार करना चाहे तो गिरफ्तार कर सकती है; गिरफ्तारी का वे किसी भी रूप में विरोध न करेंगे। शान्तिपूर्वक गिरफ्तार होने की इच्छा प्रकट करने पर भी पुलिस ने उन सत्याग्रही छात्रों पर गोलियाँ चला दीं। इस घटना में 3 छात्र उसी समय मर गए और अनेक घायल हुए। इतना ही नहीं, गोली चलाने के उपरान्त घायलों को किसी प्रकार की सहायता नहीं मिलने दी। जब घायलों को प्यास लगी तो गाँव के लोगों ने उन्हें पानी देना चाहा; लेकिन पुलिस ने उन्हें रोक दिया। रेलवे स्टाफ को भी उनकी इस अवस्था पर दया आई; किन्तु वे भी पुलिस के आतंक के कारण प्यासे घायलों को पानी तक न पिला सके।

14 वर्ष का बालक शहीद

बम्बई के धूलिया जिले में नन्दरबर नामक एक छोटा-सा शहर है। 9 अगस्त को

जब विद्यार्थियों ने यह सुना कि देश के गणमान्य नेता बम्बई में गिरफ्तार कर लिये गए हैं, तो उन्होंने एक छोटा-सा जुलूस निकाला। जुलूस में 5 वर्ष से लेकर 15 वर्ष तक के छात्र थे। साथ में कुछ लड़कियाँ भी थीं। जिस समय उनका यह जुलूस बाजार में जा रहा था तो पुलिस इन्सपेक्टर को वहीं से एक ढेला आकर लगा। यह काम किसी इन्सपेक्टर के दुश्मन का था। परन्तु सब-इन्सपेक्टर ने उन मासूम बच्चों पर गोली चलाने की आज्ञा दे दी। बच्चे भागने लगे। एक 14 वर्ष का बच्चा उस जगह जाकर खड़ा हो गया, जहाँ पर कांग्रेस का झण्डा फहरा था। पुलिस ने उसको गिरफ्तार करने के बजाय गोली चला दी। गोली उसके पैरों में लगी; लेकिन पुलिस ने तब तक गोली बन्द नहीं की, जब तक कि उसके प्राण नहीं निकल गए। गोली चलने से जुलूस भंग हो गया था। बच्चे अपनी-अपनी रक्षा के लिए इधर-उधर भागने लगे थे; लेकिन उन भागते हुए बच्चों की पीठ में भी गोलियाँ लगीं और गोलियों के निशाने से जुलूस के 5 छात्र और शहीद हुए। इनके अतिरिक्त 12 घायल हुए, जिनमें एक लड़की भी थी।

इस प्रकार बम्बई के अनेक स्थानों में पुलिस ने जुल्म किए। पूना में बेकसूर स्त्रियों को गोली से भूना गया। यह घटना तब हुई जबकि वे न तो जुलूस में सम्मिलित हुई थीं और न किसी सभा में उन्होंने भाग लिया था। उनके घरों में घुस-घुसकर पुलिस ने अत्याचार किए।

आग फैलती ही गई

बम्बई से जो ज्वाला सुलगी थी, वह धीरे-धीरे समस्त देश में फैल गई और दूसरे प्रान्तों के कांग्रेसी नेताओं तथा कार्यकत्ताओं को भी गिरफ्तार कर लिया गया। इससे जनता विद्रोही हो उठी। उससे जो कुछ हुआ वह जग ज़ाहिर है। बम्बई का महात्मा गांधी का 'भारत छोड़ो' नारा समस्त देश का नारा हो गया और देश उनके मूल मन्त्र 'करो या मरो' को सार्थक करने में जी-जान से जुट गया।

2

गुजरात भी पीछे न रहा

जैसे भीषण दमन बम्बई में हुए उसी प्रकार के और उससे भी बढ़कर गुजरात में हमारे इस आन्दोलन को रोकने के लिए किये गए। परिणामस्वरूप गुजरात में भी आन्दोलन दबने के स्थान पर उल्टा जोर से चलने लगा। वहाँ के छात्रों और महिलाओं, किसानों, मजदूरों एवं सभी कांग्रेस कार्यकत्ताओं को सरकार ने गिरफ्तार करना प्रारम्भ किया। इन गिरफ्तारियों के साथ ही सब प्रकार की सभाओं तथा जुलूस निकालने पर रोक लगा दी गई। गुजरात के छोटे-बड़े अनेक शहरों में इन आज्ञाओं तथा प्रतिबन्धों को तोड़कर कार्य किया गया।

अत्याचारों की पराकाष्ठा

जनता के उत्साह को दबाने के लिए खेड़ा, सूरत और अहमदाबाद में पुलिस ने खुलकर अत्याचार किए। किन्तु इससे जनता का उत्साह दबने की बजाय बढ़ता ही गया। गाँवों की जनता को डराने के लिए अधिकाधिक जुरमाने किये गए; जिससे वह किसी भी ऐसे कार्य में सहायता न पहुँचावे। जुरमाने न देने पर संगीनों की नोक के बल पर वे वसूल किये गए। एक दिन सवेरे सशस्त्र पुलिस ने एक गाँव को घेर लिया और गाँव के किसी भी व्यक्ति को बाहर न जाने दिया। इसके बाद सशस्त्र पुलिस बल ने घर-घर जाकर लगान वसूल किया।

आम हड़ताल

गुजरात के आन्दोलन में प्रमुख घटना अहमदाबाद की मिलों का सर्वथा बन्द हो जाना था। वहाँ की मिलों की हड़ताल न टूटी। इस हड़ताल को सर्वथा सफल बनाने का एकमात्र श्रेय वहाँ के मजदूरों को है। उन्होंने मजदूरी की चिन्ता न करके देश के जीवन-मरण के क्षणों में उसके आन्दोलन को आगे बढ़ाया। हड़ताल के दिनों में जनता ने भी अभूतपूर्व अनुशासन का परिचय दिया।

छात्र सबसे आगे

अगस्त-क्रान्ति को सफल बनाने में छात्रों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। उन्होंने इस आन्दोलन में इतने शौर्य, साहस तथा धैर्य का परिचय दिया कि जिसका उदाहरण देखने को नहीं मिलता। उन्होंने कालिजों एवं स्कूलों में जाना बन्द कर दिया।

शहादत के मार्ग पर

अपने कार्य में छात्रों ने प्राणार्पण की बाजी लगा दी और कई छात्र देश की स्वतन्त्रता के लिए आयोजित इस महाक्रान्ति-यज्ञ में शहीद हो गए। श्री विनोद किनारीवाला राष्ट्रीय झण्डे की रक्षा करते हुए पुलिस की गोलियों का शिकार हो गया। श्री रसिक जानी, श्री पुष्पवदन, श्री गोवर्धन शाह और श्री हिम्मतलाल केडिया विदेशी सरकार के अत्याचारों का सामना करते हुए राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की ज्योति अमर बनाए रखने के लिए शहीद हो गए। इनके अतिरिक्त अनेक बालक और बालिकाएँ देश की स्वतन्त्रता के लिए शहादत के मार्ग के पथिक बने।

दो घटनाएँ

भड़ौंच जिले के खेड़ा और आडास की घटनाएँ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। इन दोनों गाँवों में छात्रों पर पुलिस ने जो अत्याचार किए, वह विस्मरणीय नहीं। घटना इस प्रकार है—लगभग 100 छात्रों का एक दल बड़ौदा से बम्बई जाने वाली रेल पर सवार हुआ। उसका कार्य प्रचार करना था। उसका इरादा था कि रेल के सभी डिब्बों पर नारे लिखे हुए पोस्टर चिपकाये जाएँ या नारे खड़िया से लिख दिये जाएँ। उन्हें अपनी गिरफ्तारी से पूर्व दिया हुआ गांधीजी का सन्देश बाँटना था। पुलिस ने जबरदस्ती उस दल को भड़ौंच स्टेशन पर उतार लिया। उन लोगों को ट्रेन से उतारने के लिए लगभग 100 कांस्टेबलों का एक दल तैयार था। उन्हें वहीं पर 24 घण्टे तक रोककर बाद में अपने-अपने घरों को लौटा दिया गया।

आडासा में 18 अगस्त

भड़ौंच की घटना के दो दिन बाद 34 छात्रों का एक दल बड़ौदा से उसी कार्य को करने के लिए आनन्द के लिए रवाना हुआ और अपना काम पूरा करके शाम को बड़ौदा वापस जाने के लिए शाम की गाड़ी पकड़ने के लिए आडासा स्टेशन की ओर तेजी से जा रहा था। स्टेशन के लिए यह दल एक तंग गली से जा रहा था, इतने में इन्हीं की खोज के लिए आए हुए रायफलों से लैस पुलिस के 6 कांस्टेबलों ने उन्हें रोका। पुलिस ने खुलकर गोली चलाई। गोली से 5 छात्र तो वहीं शहीद हो गए और 12 बुरी तरह घायल हुए।

विद्रोह भयंकर हो उठा

ऐसी एक नहीं अनेक घटनाएँ वहाँ घटीं। विद्यार्थियों पर अनेक प्रकार के अत्याचार किये गए। इससे जनता में विद्रोह और भी भयंकर हो उठा। जगह-जगह पर थाने, डाक बंगले, स्टेशन, तहसील की इमारतें जला दी गईं, खजाने लूट लिये गए, कई स्थानों पर भीड़ ने हमला किया। किन्तु यह स्मरणीय घटना है कि इन सब आक्रमणों में किसी भी व्यक्तिगत सम्पत्ति की हानि नहीं हुई।

3

सतारा की पत्री-सरकार

सतारा की पत्री-सरकार की स्थापना अगस्त-क्रान्ति की एक महत्त्वपूर्ण घटना है। उसके सम्बन्ध में भारत के एक प्रतिष्ठित नेता ने, जो काफी दिन तक फरार रहे थे, प्रकट होने पर निम्न विचार प्रकट किए थे :—

" ग्राम राज्य की स्थापना से पूर्व सतारा की क्या अवस्था थी यह हम पहले लिख चुके हैं। कांग्रेस सरकार आई है पर नीचे के अधिकारी पुराने ही चले आ रहे हैं और वे बदले नहीं गए हैं, अत: क्रान्तिकारियों का काम अभी समाप्त नहीं हुआ है।

" इन सब लोगों को लूट-पाट करने वालों ने आश्रय दिया। वे जंगलों, गुफाओं और खोहों में चले गए और वहाँ रहने वाले पुँहपोलगार उनके आश्रयदाता बने। जगह का प्रश्न जरूर मिट गया, मगर दूसरे हजारों प्रश्न उत्पन्न हो गए। भूमिगतों की बुद्धि कसौटी पर परखी गई। "

डाकुओं की सहायता से

बात यह हुई कि जिन लूट-पाट करने वालों ने उनको आश्रय दिया था वे कोई अन्य न थे। उनको मालूम था कि उनके आश्रय में आए लोग कांग्रेस के हैं और उनसे जनता की सहानुभूति है, इसका उन्होंने पूरा-पूरा लाभ उठाया। गांधी टोपी पहन, नाना पाटिल की जय-जयकार करते हुए दिन-रात अब वे लूट-पाट मचाने लगे और डाके डालने लगे। इस प्रकार उन्होंने भूमिगतों को जनता से मिलने वाले मान में शिथिलता उत्पन्न कर दी। भूमिगतों के सामर्थ्य का आधार उनमें निहित जनता का विश्वास था। जनता का विश्वास उनमें हो गया है, यह अधिकारियों ने तुरन्त देख लिया। सरकारी अधिकारियों ने कुछ डाका डालने वालों को अपनी ओर किया, उनका विश्वास सम्पादन किया, और उनको कांग्रेस पर अत्याचार करने के लिए उत्तेजित किया। डाकुओं की सहायता से उसने भूमिगतों को पकड़ने का प्रयत्न भी किया, मगर सतर्क और सावधान लोगों ने इसको सफल न होने दिया। एक बार ऐसा प्रसंग आया कि औंध रियासत की सीमा पर कुंडल के आस-पास भूमिगतों को भेंट करने के बहाने बुलाकर ब्रिटिश पुलिस के हवाले करने का एक डाकू ने प्रयत्न किया। पुलिस को यह कहकर बुलाया कि डाकू तुम पर हमला करने के लिए चले आ रहे हैं। रियासती पुलिस और ब्रिटिश-पुलिस ने अन्धकार में एक-दूसरे पर गोली चलाई

और भूमिगत आराम से बैठे रहे। सरकार ने इस घटना का वर्णन कहीं नहीं छपने दिया, मगर भूमिगतों के नाम से डाकुओं द्वारा किये गए अत्याचारों का वर्णन तड़क-भड़क के साथ छपवाया। इसके फोटो भी छापे गए और आवाज आने लगी, ओह ये अत्याचार, यह हिंसा शिव-शिव। जिस सत्ता का आधार लाठियों और बन्दूकों पर है, जिसके अधिकारी कड़ा बन्दोबस्त करने के लिए प्रजा से दूर रहते हैं उनका यह आक्रोश किसको सच्चा मालूम होगा ? मगर हममें से अनेक ने भ्रमपूर्ण धारणा बना ली और शान्ति-पाठ बोल दिया। कुछ काल के लिए सरकारी प्रचार सफल हुआ।

भूमिगतों की बुद्धि की इस बार परीक्षा थी। सरकार ने उनको चुनौती दी थी। सरकार ने पहले उनको जनता से दूर किया और फिर उनको बदनाम किया। उनके मनुष्यों को ही उनके विरुद्ध करके उनको फँसाने का दाँव डाला। सरकार की इस चुनौती का भूमिगतों ने करारा जवाब दिया। वे पुन: अपने आदमियों के बीच आ गए और ग्राम-राज्य की स्थापना की।

ग्राम राज्य एक दिन में स्थापित नहीं हुआ। ग्राम-राज्य या पत्री सरकार स्थापित करने का पहले उनका कोई इरादा नहीं था। उनका पहला काम लोगों का विश्वास प्राप्त करना था और भीतर से अशोभन नीति को दूर करना था और भय के मूल कारण को दूर करना था।

हथियार वापस लिए

उन्होंने सर्वप्रथम डाकुओं से हथियार ले लिए। डाकुओं ने पुलिस के आश्रय, गाँव के गुण्डों की मदद और गाँव वालों पर ज़ोर-ज़बरदस्ती से अपना स्थान दृढ़ कर लिया था। उन्होंने भूमिगतों से विश्वासघात किया था। कांग्रेस का नाम बदनाम किया था और लोगों पर जुल्म किया था। उनके साथ स्नेहभाव रखकर काम नहीं चल सकता था। वे केवल डण्डे की भाषा समझते थे। उनके अन्दर कुछ बुद्धिमान लोग थे। भूमिगतों ने उनसे अपना मेल बढ़ाया और उनको अपने साथ लेकर गाँव अपने संरक्षण में ले लिए और उन गाँवों में डाकू डाका न डालेंगे ऐसा करार किया। सार्वभौम ब्रिटिश सत्ता बन्दूकों के जोर पर जो पाठ उन्हें पढ़ाना चाहती थी, वह पाठ भूमिगतों से डाकुओं ने सीखा और सैंकड़ों गाँव उनके अत्याचार से मुक्त हो गए। साहूकार, किसान, गरीब और धनी सभी भूमिगतों के कृतज्ञ और ऋणी हो गए। ये मनुष्य अपने हैं, यह विश्वास उन्हें पुन: हो गया। उन सबने अब भूमिगतों का आनन्द और उल्लास से स्वागत किया। लूट-मार बन्द हो गई, खून होने और डाके पड़ने बन्द हो गए। लोगों को अपने जान-माल की रक्षा का विश्वास हो गया। बेकायदा दारू बनाने का धन्धा समाप्त हो गया, डाकू और गाँव के गुण्डे इसी पर पलते थे। हजारों घरों में शान्ति विराजमान हो गई। जनता निर्भय मन से इधर-उधर घूमने लगी।

ग्राम-पंचायत

डाकुओं का बन्दोबस्त हो गया, पर पुलिस गाँव के गुण्डों और भूमिगतों की शत्रु

हो गई। हजारों गुण्डे पुलिस को खबर देने वाले दूत बन गए। सैकड़ों की संख्या में पुलिस हाथ धोकर उनके पीछे पड़ गई। मगर जनता ने अब भूमिगतों का साथ दिया। फलतः उनको हाथ लगाने की पुलिस की हिम्मत नहीं होती थी। पुलिस और गुण्डों ने चिढ़कर गाँव वालों की खबर लेनी छोड़ दी। गाँवों के लोगों का संरक्षण करने की जवाबदारी सरकार पर थी, मगर जब सरकार ने उसको छोड़ दिया तब वह उत्तरदायित्व भूमिगतों ने ले लिया। इसको आप पत्री सरकार कहिए या अपने मान की रक्षा करने की स्वाभिमान की वृत्ति कहिए।

एक अनुभव से सयाने बने भूमिगत चुपचाप नहीं बैठ गए। जनहित के कार्यक्रम को हाथ में लेने पर जनता उसका स्वागत करती है और उसमें मदद देती है, यह बात उनकी समझ में आ गई थी। डाकुओं के संकट से प्रतिकार करने के लिए जब भूमिगत आगे आए तब सारे गाँव वाले उनके साथ हो गए और एक हो गए। इसका लाभ भूमिगतों ने लिया। गाँव वालों के सुख-दुःख के कारणों को उन्होंने समझा और गाँव वालों की दुर्दशा के निराकरण का निश्चय किया।

गुण्डा राज्य में बेकायदा दारू सर्वत्र बनाई जाती थी। डाकुओं के अन्त के साथ इस धन्धे का भी अन्त हुआ। स्त्रीविषयक अपराध गाँव-गाँव में बड़ी संख्या में होते थे। कर्जखोरी का परिमाण भी बढ़ा-चढ़ा था। खेतों की मेंड़ के टंटे; बाट के टंटे-झगड़े, भाईबन्द के दावे, आदि नाना कारणों से लोग अदालत जाते और वकीलों की जेबें भरते और एक-दूसरे से दूर होते जाते थे। भूमिगतों पर जिनको विश्वास हुआ उन्होंने अपनी यह सारी दयनीय स्थिति इनके सामने रखी, उनको न्याय देना जरूरी ही था। भूमिगतों ने गाँव-गाँव के समूह बनाए, उनकी जाँच की और प्रत्येक गाँव में पंचायत स्थापित की। सारा गाँव जमा होता और झगड़े का विचार होता और पंच सबकी सलाह से झगड़े को मिटाता। यह गाँव-गाँव होने लगा। उससे गाँव वालों के पैसे बचे और फिर न्याय मिलने लगा। एक जगह जमा होकर, पंचों की बात मानने की उनको आदत पड़ी। कर्राड की अदालत लगभग बन्द हो गई। मगर गाँव की पंचायतों के सामने सदा काम बढ़ता रहा। लोग अपने छोटे-छोटे झगड़े ग्राम के सामने लाने लगे। ये अपने आदमी हैं, अतः उनके सामने छोटी-छोटी बातें रखने में उनको संकोच नहीं रहा और इस प्रकार वह भूमिगतों की न्यायबुद्धि पर विश्वास करते थे। इन अदालतों का नियम था कि कोई भी झगड़ा हो, समझौते द्वारा उसको निपटाया जाए, वे अपना न्याय किसी पर जबर्दस्ती नहीं लादते थे। मगर सलाह माँगी गई और सबकी सलाह से वह दी गई तो वह मानी जानी चाहिए, यह उनका आग्रह था। न्याय दान और उस पर अमल करने का कार्य ये दोनों विभाग सर्वथा अलग-अलग थे। गाँव वालों के न्याय देने के बाद यदि सरलता से वह समझ में नहीं आता तो गाँव वाले भूमिगतों की सहायता लेते।

आत्मनिर्भर

इस प्रकार धीरे-धीरे ग्राम-राज्य की स्थापना की जा रही थी। सारे गाँव वाले गाँव

की दृष्टि से विचार करने लगे थे। उनके सामाजिक जीवन में भूमिगतों ने क्रान्ति उत्पन्न कर दी, लोग आपस में समझौता करने लगे, विवाह-खर्च में कमी की और गाँव के हित के काम, रास्ते दुरुस्त करने, बाँध बाँधने के काम गाँव वाले मिलकर करने लगे। सारे गाँव वालों ने यह बात समझ ली थी कि अपने हित की स्वत: रक्षा करनी चाहिए। लोकल बोर्डों, स्कूल बोर्डों, पुलिस, मामलेदारों की सहायता की उनको जरूरत नहीं। दूसरों की अंजलि से पानी पीने का घाटा उनको अपनी आँखों से स्पष्ट दीखने लगा। गाँव आत्मनिर्भर बन गए। गांधीजी के ग्राम-राज्य की कल्पना उनके सामने प्रत्यक्ष रूप में आ गई। इस काम में मेरे-जैसे हजारों किसान सम्मिलित थे। हमें राज्य-लोभ नहीं था; हमें धन-लोभ नहीं था, हमारा लक्ष्य एकमात्र एक साथ मिलकर सुख से रहने का था। हमने अपना मार्ग साफ कर दिया। विदेशी सरकार पर हम आश्रित नहीं रहे। इस प्रकार हमारा उद्धार हुआ और हमारी उन्नति का मार्ग खुला। इसका श्रेय किसी एक व्यक्ति को नहीं है, उस समूह को है, जिसको आप पत्री-सरकार कहते हैं। उसके पीछे मेरे सरीखे हजारों सतारा के लोग रहने वाले थे। हम में से प्रत्येक जन की स्वसामर्थ्य पर श्रद्धा ही पत्री-सरकार थी।

इसमें हमने क्या बुराई की ? अच्छे या बुरे हमारे किसी काम में जो बाधक हुआ इसको काँटे की तरह निकाल फेंकने की शिक्षा हमने अपने साहबों से पाई थी। वह शिक्षा सब्याज हमने उनको लौटा दी। इसको क्या आप चूक कहेंगे ?

अब संग्राम थम गया है। बम्बई में कांग्रेस सरकार स्थापित हो गई है। जंगल-वन में फिरने वाले हमारे तरुण नेतागण अपने घरों में वापस आ गए हैं। जेलों में बैठे नेता कौंसिलों में गए हैं। इस समय वास्तविक कानून अपने हाथ में लेने की जरूरत नहीं। मगर उपरली सरकार बदली है, नीचे के अधिकारी अभी तक वैसे ही बने हुए हैं। उनमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। शान्ति, सुव्यवस्था और कानून की जवाबदारी पुन: पुलिस और न्याय विभाग के पास चली गई है। अपराध पुन: बढ़ने लगे हैं। जनता की सरकार, कांग्रेस की सरकार इसका क्या बन्दोबस्त करती है, यह देखना है ?

4

बापू का वर्धा

बम्बई में समस्त नेताओं की गिरफ्तारी से वर्धा में विद्रोह फैल गया था। 11 अगस्त की शाम को गांधी चौक में एक सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया, जिसमें श्री दीनदयाल चूड़ीवाले, जो बम्बई से लौटे थे, अपने नेताओं के 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव का महत्त्वपूर्ण सन्देश जनता को देने वाले थे। अपने नेताओं का प्राणदायी सन्देश सुनने के लिए जनता चौक की ओर उमड़ी चली आ रही थी। सभा की खबर सुनकर पुलिस भी चौकन्नी हो गई थी और वह भी हथियारों से लैस होकर गांधी चौक में आ गई थी। श्री दीनदयाल चूड़ीवाले भाषण देने खड़े ही हुए थे कि उन्हें पुलिस अधिकारियों ने भाषण देने से रोक दिया। जनता इसे बर्दाश्त न कर सकी और उसने इसका घोर विरोध किया।

पुलिस अधिकारी इसे कब सहन करते, उन्होंने आव देखा न ताव, और गोलियाँ दागनी आरम्भ कर दीं। जनता में खलबली मच गई। उस भीड़ में एक युवक के गोली लगी, गोली मस्तक को चीरकर आर-पार हो गई थी। वह युवक अपने बाप का इकलौता बेटा था, दिनभर मजदूरी करता था और रात को उसी दिन की कमाई से पेट भरता था। उस युवक का नाम था जंगलू। जंगलू ने अपने देश की आजादी के लिए अपने प्राणों की अमर बलि दे दी।

दूसरे दिन उस वीर शहीद के शव का जुलूस निकला, दुर्गे वकील ने जुलूस का नेतृत्व किया। जंगलू केवल 38 वर्ष का नवयुवक था, उसके तीन बच्चे और बूढ़ा पिता था। उसके शहीद हो जाने के पश्चात् तीनों बच्चे भी उसी पथ के पथिक बने। बूढ़ा पिता उसकी याद में आँसू बहाता रहा।

गिरफ्तारियाँ

संत विनोबा भावे, दादा धर्माधिकारी, आचार्य आर्यनायकम्, के० शिवराज चूड़ी वाले आदि सभी नेताओं को वहाँ की पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया। जनता ने कार्य करना बन्द न किया और धीरे-धीरे सारे सी०पी० में वर्धा के शहीद की आर्त्तवाणी नवजीवन का सन्देश दे गई। सी०पी० की पुलिस ने आन्दोलन को दबाने के लिए जो-जो दमन किए, उन्हें सुनकर अब भी रोमांच हो आता है। जंगलू के बाद जबलपुर में श्री गुलाबसिंह शहीद हुए, उससे विद्रोह की आग और भी भड़क उठी।

गोलीकाण्ड

पुलिस की स्वेच्छाचारिता का प्रमाण बैतूल जिले के घोड़ा डोंगरी, प्रभात और नहियापट्टन नामक स्थानों के गोलीकाण्ड हैं। इन स्थानों पर शान्त भीड़ पर पुलिस ने खुलकर गोली चलाई। गोली चलाने तक से ही जब उसने सन्तोष अनुभव न किया तो आग लगा दी। गोलीकाण्ड में आहत एक वीर शाह गोंडल को मरने से पूर्व मध्यप्रान्त के गर्वनर ने बूट की ठोकर मारी। इस गोलीकाण्ड के फलस्वरूप 7 व्यक्ति और घायल हुए। इसके अतिरिक्त नरसिंहपुर, मंडला, सागर आदि स्थानों में भी पुलिस ने भीषण अत्याचार किए। 20 अगस्त, 1942 को बारसिवनी में गोली चलाई गई। गोलीकाण्ड से पहले लाठी चार्ज हुआ। परिणामस्वरूप कई घायल हुए और तत्क्षण एक व्यक्ति की मृत्यु भी हो गई।

5

: आष्टी और चिमूर

आष्टी और चिमूर मध्यप्रान्त के दो गाँव हैं। अगस्त-आन्दोलन के इतिहास में इनका नाम महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इन दोनों गाँवों की जनता पर ब्रिटिश नौकरशाही ने जो अत्याचार किए वे बड़े ही दर्दनाक एवं अमानुषिक थे। इन गाँवों में निरीह अबलाओं पर किये गए अत्याचारों का विस्तृत विवरण डाक्टर मुंजे की रिपोर्ट से मिलता है। इसके अतिरिक्त रमाबाई ताँबे ने भी एक रिपोर्ट इस सम्बन्ध में तैयार की थी। इस सम्बन्ध में उन्होंने यह रिपोर्ट प्रान्त के गवर्नर की सेवा में भेजकर उनसे उन अत्याचारों की निष्पक्ष जाँच कराने की प्रार्थना की थी, किन्तु यह रिपोर्ट निराधार और झूठी कहकर दबा दी गई।

देश की आँखें खुल गई थीं। वह इन अत्याचारों की निष्पक्ष जाँच चाहता था। फलस्वरूप इसके लिए आन्दोलन हुआ, जिससे नौकरशाही का दिल दहल उठा। अत्याचार और अनाचार इस हद तक पहुँचा कि समाचारपत्रों पर इस अत्याचार और अमानुषिकता का भण्डाफोड़ करने वाले समाचारों को छापने पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया गया। इसके विरोध में समस्त भारत के अखबारों ने हड़ताल की। प्रोफेसर भंसाली के अनशन ने तो देश में तहलका मचा दिया और अन्त में सरकार को झुकना पड़ा। वाइसराय की कौंसिल के तत्कालीन सदस्य माननीय अणे चिमूर गए और वहाँ की अवस्थाओं की दर्दभरी कहानी अपने कानों से सुनी और अन्त में उन्हें कहना पड़ा—"जो नहीं चाहिए था वह वहाँ हुआ। ईश्वर में विश्वास रखो, वह अवश्य इसका न्याय करेगा।"

भीषण आन्दोलन

चिमूर और आष्टी में 11 अगस्त के बाद से कांग्रेसी सभाएँ होनी प्रारम्भ हुईं, जिनमें जनता को संघर्ष करने के लिए तैयार किया गया। फलस्वरूप जनता विद्रोह कर उठी और भीषण आन्दोलन शुरू हो गया। आष्टी की घटना है; 12 अगस्त को जब वहाँ नेताओं की गिरफ्तारी का समाचार पहुँचा तो जनता ने एक विराट् जुलूस निकाला। सारी जनता तिरंगे झंडे की छाया में सीधी थाने की ओर चल पड़ी। थाने पर पहुँचकर जनता ने थाने पर झंडा लगाने का प्रयत्न किया। जुलूस में महिलाओं का जोश देखने योग्य था, वे जुलूस के आगे दुर्गा और भवानी का रूप धारण किये हुए चली जा रही थीं। जनता थाने के पास पहुँची तो पुलिस सतर्क हो गई।

गोली और लाठी की वर्षा

जब भीड़ बढ़ने ही लगी और थाने पर झंडा लगाने के लिए वह उतावली हो उठी तो पुलिस ने गोली चला दी। पुलिस वालों ने महिलाओं को गन्दी-गन्दी गालियाँ दीं और लाठियों की वर्षा आरम्भ कर दी। जनता फिर भी लाठियों और गोलियों के बीच थाने की इमारत की ओर बढ़ी ही जा रही थी किन्तु कब तक ऐसा होता।

छटपटाते घायल भाइयों के आर्त्तनाद ने युवकों के हृदय में प्रतिहिंसा की ज्वाला जगा दी। उनका धैर्य जाता रहा और वे भूखे शेर की तरह उन पुलिस के टुकड़खोर व्यक्तियों पर टूट पड़े। फलस्वरूप 6 ग्रामीण और 3 पुलिस वाले तुरन्त घटनास्थल पर मारे गए और सैकड़ों घायल हुए। पुलिस भाग निकली और 'महात्मा गांधी की जय' बोलकर सब इन्सपेक्टर ने अपनी टोपी फेंक दी ? फिर क्या था, तिरंगा झंडा शान से थाने की इमारत पर लहराने लगा।

गोरी फौज के अत्याचार

इसी रात गोरी फौज इस गाँव में आ धमकी और उसने मनमाने अत्याचार प्रारम्भ कर दिए। लोगों को बुरी तरह से पीटा गया। दूसरे दिन उन्हें बिना भोजन-पानी के धूप में खड़ा रखा गया और फिर रात को पशुओं की भाँति उन्हें एक छोटी-सी कोठरी में भर दिया गया। इसी सम्बन्ध में एक मास तक वहाँ जो नारकीय यन्त्रणाएँ जनता को भुगतनी पड़ीं, उनका ध्यान करके अब भी आँखों में खून उतर आता है। इस भीषण काण्ड में अनेक निरपराध व्यक्ति गिरफ्तार किये गए, जिनमें अधिकांश बच्चे ही थे। 52 व्यक्तियों को फाँसी की सजा हुई, जो बाद में श्रीमती अनसूया बाई काले के प्रयत्न से आजीवन कारावास के रूप में बदल गई।

चिमूर का जुलूस

चिमूर मध्यप्रान्त का एक छोटा-सा कस्बा है। इसकी आबादी लगभग 6000 की है। यह स्थान चाँदा जिले के वरौरा नामक स्थान से लगभग 30 मील दूर है। वरौरा से चिलूर तक सड़क जाती है। 16 अगस्त को नागपंचमी के दिन वहाँ की जनता ने प्रभात फेरियाँ निकालीं, और जुलूस भी निकाला। जुलूस में लगभग 400 स्त्रियाँ और लगभग 100 बच्चे थे। सभी व्यक्ति पूर्णत: अनुशासन में थे। गाँव के सभी प्रमुख मार्गों पर पुलिस-गोलियों की वर्षा हुई। लोग जहाँ के तहाँ बैठ गए। सारी जनता पूर्णत: अहिंसक थी; किन्तु फिर भी गोलियाँ चलाई गईं जिससे कई स्त्रियाँ और बच्चे घायल हुए।

उपद्रव का प्रारम्भ

गोलीकाण्ड से जनता का धैर्य जाता रहा। फिर उसने खुलकर उपद्रव प्रारम्भ किए और वीरतापूर्वक पुलिस का मुकाबला किया। अन्त में अत्याचारियों को मैदान छोड़कर

भागना पड़ा। जनता क्रोध से पागल हो रही थी; पुलिस वाले भी उसकी चपेट में आ गए और उन्हें अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। इसके बाद सड़क काट डाली गई, पेड़ गिराकर सभी रास्ते रोक दिये गए। बाद में वहाँ फौज पहुँची और उसने निहत्थी भीड़ पर ऐसे-ऐसे अत्याचार किए, जिन्हें सुनकर दिल काँप उठता है। फौज के वहाँ पहुँचने पर अधिकांश गाँव खाली हो गया था। गाँव में केवल बूढ़े, बच्चे और स्त्रियाँ ही रह गई थीं। तीसरे दिन इन सभी लोगों को कड़कती धूप में कई घण्टे खड़ा रखा गया। जरा सा भी इधर-उधर होने पर या पानी इत्यादि माँगने पर उन्हें फौजी बूटों की मार भी सहनी पड़ी।

ब्लैक हॉल की घटना

कलकत्ता के ब्लैक हॉल के विषय में तो पाठकों ने सुना होगा; भयंकर यातनाएँ अब की बार चिमूर और आष्टी में दी गईं। प्राय: कई दिन तक आन्दोलन के दिनों में भीड़ को पकड़कर पुलिस ने लगभग 15 फुट चौड़े और 25 फुट लम्बे एक कोठे में ठूँस दिया, जिन्हें कई दिनों तक बाहर नहीं निकाला और 'पानी-पानी' चिल्लाने पर भी पानी नहीं दिया, जिससे अनेक व्यक्ति बेहोश हो गए थे।

स्त्रियों पर बलात्कार

नौकरशाही को इतने से ही सन्तुष्टि नहीं मिली। उसने महिलाओं पर भी अनेक अत्याचार किए। गोरी फौज के सिपाही और पुलिस के कर्मचारी गाँव के निवासियों के घरों के ताले तोड़-तोड़कर उनके घरों में घुस गए और अबला महिलाओं पर ऐसे-ऐसे घोर अत्याचार किए, जिनसे रोमांच हो आता है। 12 वर्ष की बालिकाओं से लेकर 55 वर्ष की महिलाओं तक के साथ उन्होंने कुकृत्य करके अपनी वासना की तृप्ति की। अनेक छोटे-छोटे बच्चों को उल्टा पेड़ों से लटका दिया गया। पुलिस और फौज का यह भीषण दमन महीनों तक आष्टी और चिमूर में चलता रहा। वहाँ पर कितने ही लोग गोलियों के शिकार हुए, कितनी ही स्त्रियों ने लज्जावश आत्महत्या कर ली। इस सबके बावजूद भी न्याय का दम भरने वाली सरकार ने वहाँ की जनता पर मुकदमा चलाकर 70 से भी अधिक व्यक्तियों को फाँसी की सजा दी, जो बाद में जनता के प्रयत्न से आजीवन कारावास के रूप में बदल गई।

6

कर्नाटक में अत्याचारों की पराकाष्ठा

1857 के बाद जनता के असन्तोष ने इतना प्रबल और व्यापक रूप कभी नहीं लिया था। उन दिनों दिन-रात पुलिस तथा फौज का चक्कर गाँवों में रहता था। एक-एक फरार की गिरफ्तारी के लिए 5-5 हजार रुपये के इनाम की घोषणा की गई। कर्नाटक में भी अनेक अत्याचार किये गए।

हुबली में पुलिस की गोलियाँ खाकर एक लड़का मर गया और बेलगाँव में 7 आदमी बुरी तरह घायल हुए। भला इतने अत्याचारों को सहन करती हुई जनता कब तक आक्रमणात्मक वृत्ति से दूर रहती; फलस्वरूप डाकखाने जला दिये गए। सौराड हट्टी में एक बहुत बड़ी भीड़ ने जेल को घेर लिया और एक-एक कैदी को छोड़ देने को बाध्य किया।

15 दिसम्बर, 1942 को हुबली के निकटवर्ती 4 रेलवे स्टेशन जला दिये गए तथा दूसरी सरकारी इमारतों को भी नुकसान पहुँचाया। 15 रेलवे स्टेशन फूँक दिये गए। परिणाम यह हुआ कि दूर-दूर तक गाँवों में संगठित विध्वंसक फल दिखाई पड़ने लगा। सरकार एक बार फिर किंकर्तव्यविमूढ़ हो गई।

जनता के विद्रोह को दबाने के लिए पुलिस तथा फौज द्वारा अनेक अमानुषिक कार्य किये गए। फरारों को खोजने के लिए लोगों के घरों में घुस-घुसकर उनकी स्त्रियों के साथ बलात्कार किये गए।

7

सिन्ध का कार्य

अगस्त-विद्रोह की गूँज ने सिन्ध प्रान्त में भी अपना प्रभाव छोड़ा। वहाँ की जनता यद्यपि उत्तेजना में वैसा कोई विध्वंसक कार्य न कर सकी जैसा कि अन्य प्रान्तों में हुआ तथापि अत्याचार वहाँ भी उन दिनों कम नहीं हुए। नौकरशाही सरकार तो सम्पूर्ण भारत से ही बदला लेने पर तुली हुई थी। केवल विरोधी प्रदर्शन तथा हड़ताल को दबाने के लिए पुलिस और फौज ने ऐसे-ऐसे अमानुषिक कार्य किए, जो किसी भी सभ्य सरकार को शोभा नहीं देते।

'इण्डियन मर्चेण्ट्स चैम्बर 'तथा' वायर्स एण्ड सीपर्स चैम्बर' की रिपोर्ट में कहा गया कि, पुलिस द्वारा सताये गए अनेक व्यक्तियों की गवाही से हम इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि पुलिस जनता के साथ, विशेषत: 12 अगस्त, 1942 के दिन बड़ी बुरी तरह पेश आई और तथाकथित आन्दोलनकारियों को दबाने के लिए उसने आवश्यकता से अधिक बल का प्रयोग किया। उसने ऐसे आदमियों को भी चोटें पहुँचाईं जो किसी भी प्रदर्शन में भाग नहीं ले रहे थे।

शहीद हेमू कलानी

पुलिस ने केवल भीड़ को तितर-बितर करने के लिए लाठियों का प्रयोग नहीं किया प्रत्युत अपने आवश्यक कार्यों के लिए जाते हुए बेगुनाह पैदल साईकल पर सवार व्यक्तियों को भी अपना शिकार बनाया। उसने छोटे-छोटे बच्चों को खदेड़-खदेड़कर उनका पीछा किया और उन्हें लाठी से घायल किया। यह स्मरणीय घटना है कि इसी उपद्रव में एक स्कूल के बच्चे को, जिसकी आयु कठिनाई से 12 वर्ष होगी, गिरफ्तार करके फाँसी पर लटका दिया। उसका नाम हेमू कलानी था। हेमू कलानी पर पुलिस अफसर की हत्या करने का अभियोग लगाया गया था। इसके अतिरिक्त पुलिस द्वारा व्यभिचार करने तथा बेंत लगाने की अनेक घटनाएँ हैं। एक पुलिस वाला तो एक व्यक्ति की छाती पर बैठ गया था।

कराची में नौकरशाही के इन नमकहलालों का नग्न नृत्य यह देखने को पर्याप्त था कि गुलाम देश की पुलिस कितनी नीच प्रवृत्ति की होती है। गुलामी की भावना मनुष्य को कहाँ तक पतित कर सकती है ?

8

भारत की राजधानी में

पोस्टरों और दूसरे साधनों से दिल्ली के लोगों को गांधीजी तथा कांग्रेस नेताओं की गिरफ्तारियों की सचूना दी गई। 9 अगस्त को 10 बजे प्रात:काल तक समस्त शहर में पूर्ण हड़ताल हो गई। तीसरे पहर घंटाघर से एक विराट् जुलूस रवाना हुआ और गली-गली, कूचे-कूचे में घूमता हुआ शाम को 6 बजे के लगभग गांधी मैदान में पहुँचा। जुलूस और जलसे में लगभग 50 हजार लोगों के सम्मिलित होने का अनुमान किया जाता है।

विद्रोह का रूप

10 अगस्त को सवेरे से ही लोग घंटाधर पर एकत्रित होने शुरू हुए। यह जन-समूह नई दिल्ली को कूच करने की तैयारी में था कि इतने में पुलिस और फौजी लारियों से रोक लिया गया। परन्तु लोग जैसे-तैसे अजमेरी गेट से निकल गए और नई दिल्ली की ओर बढ़ने लगे। पुलिस ने सड़क के साथ कँटीले तारों की बाड़ लगा दी; जुलूस नीचे बैठ गया। जुलूस का एक भाग इन कँटीले तारों की बाड़ में से निकलकर इम्पीरियल सेक्रेटरियेट की ओर बढ़ता गया। एक पुलिस इन्स्पेक्टर ने इसे रोकना चाहा, परन्तु इसका कोई परिणाम न हुआ। नई दिल्ली की अधिकांश दुकानें बन्द हो गई थीं, जो थोड़ी-बहुत खुली थीं वे भी बन्द कर दी गईं। शाम को एक विराट् सभा हुई, जिसमें एक लाख से अधिक जनता एकत्रित हुई थी।

गोली और लाठी की वर्षा

11 अगस्त को जनता की भीड़ 8 बजे ही जमा होनी शुरू हो गई। इस बार पुलिस ने कई बार भीड़ पर लाठी प्रहार किया। इन लाठी-प्रहारों के बावजूद भी जुलूस कोतवाली की तरफ बढ़ता गया। जुलूस के नेता हकीम खलीलुलरहमान को, जो कि दिल्ली कांग्रेस कमेटी के सदस्य थे, गिरफ्तार कर लिया गया। भीड़ में से एक आदमी ने डिप्टी कमिश्नर मि० बेली पर एक बोतल फेंककर मारी, जिससे उसकी आँख पर चोट आई। इससे पुलिस को दनादन गोली चलाने का बहाना मिला तथा फौज ने भी इसमें पूर्ण सहयोग दिया। एक व्यक्ति घटनास्थल पर मारा गया और बहुत से ज़ख्मी हुए। जुलूस भंग कर दिया गया; परन्तु लोगों के उत्साह का दमन नहीं हुआ। जब एक आदमी को टेलीफोन का तार काटते हुए

गिरफ्तार किया गया तो लोगों की भीड़ ने उसे छुड़ा लिया। लोग कानून तथा व्यवस्था को भंग करते हुए सब तरफ फैल गए और खुले आम बिजली और फोन के तार काटने लगे। म्युनिस्पिल सेक्रेटरी ने अपना दफ्तर बन्द करने से इन्कार कर दिया था। एक फौजी लारी को भी जला दिया गया। पुलिस ने एक बार फिर गोली चलाई। लोगों ने इसके जवाब में आग बुझाने का इंजिन जला दिया। एक और आग बुझाने के इंजिन तथा मोटर साइकिल में आग लगा दी गई। नई तथा पुरानी दिल्ली के टेलीफोन का सम्बन्ध कट गया। गोरी फौज ने फतहपुरी की मसजिद के सामने एक भीड़ पर गोली चलाई, जिससे दो व्यक्ति मारे गए तथा कई घायल हुए।

पीली कोठी जली

उपद्रव तेजी के साथ अन्य इलाकों में और विशेषत: पीली कोठी तथा क्वींस रोड की ओर फैल गया। पैट्रोल के पम्प जला दिये गए और शहर की सबसे बड़ी इमारत रेलवे क्लीयरिंग अकाउण्ट्स आफिस (पीली कोठी) को जलाकर राख कर दिया गया। एक पुलिस इन्स्पेक्टर ने एक व्यक्ति को गोली से उड़ा दिया। लोगों ने जवाब में उस इन्स्पेक्टर को ही खत्म कर दिया। इन्कमटैक्स आफिस का भी यही हाल हुआ। पहाड़गंज के निकट की ब्रिटिश बैरकों पर हमला करके फौजियों का सामान बाहर फेंक दिया गया। फौजियों ने जान बचाकर भाग जाने में ही अपना कल्याण समझा। वे पास ही एक हिन्दुस्तानी के बंगले में घुस गए। शाम को 5 बजे के बीच लगभग एक दर्जन स्थानों पर आग लगा दी गई। लोगों का दमन करने के लिए फौज को कई बार गोली चलानी पड़ी। बिजली के सब तार कट जाने के कारण शहर में अँधेरा ही अँधेरा था। अगले दिन सवेरे लोगों ने उठते ही शहर को एक सशस्त्र रणभूमि के रूप में बदला हुआ पाया। हर जगह सशस्त्र पुलिस तथा फौज तैनात थी। तीसरे पहर पहाड़गंज के डाकखाने पर लोगों ने हमला किया और उसे जला दिया। पहाड़गंज के इलाके में गोरों ने भीड़ पर कई बार गोलियाँ चलाईं तथा बहुत से व्यक्ति हताहत हुए।

13 अगस्त तक कुल 150 व्यक्ति प्राण गँवा चुके थे। सरकारी संख्या केवल 44 थी, जो जान-बूझकर कम प्रकट की गई थी। इरविन अस्पताल के अधिकारियों ने गुप्त रूप से अधिकांश लाशें खत्म कर दीं। यहाँ इस बात का उल्लेख कर देना भी उचित होगा कि इरविन अस्पताल के अधिकारियों का इलाज के लिए दाखिल किये गए घायलों के प्रति बहुत बुरा सलूक था। उदाहरण के रूप में एक घायल व्यक्ति को खून का इंजैक्शन देने से इस कारण इन्कार किया गया कि विद्रोही ऐसे इलाज के योग्य नहीं समझे जाते। अब हम उन रिपोर्टों का सारांश देते हैं जो हमें प्राप्त हो सकी हैं।

क्लर्कों की हड़ताल

ए०जी०सी०आर० के 125 क्लर्कों ने त्यागपत्र दिया। सप्लाई डिपार्टमेण्ट, अकाउन्ट्स डिपार्टमेण्ट (जो कौंसिल हाउस में थे) के चैक सैक्शन को आंशिक रूप से 28 अगस्त को जला दिया गया। दिल्ली क्लाथ मिल के चीफ कैमिस्ट श्री एम. एम. शाह ने त्यागपत्र दे दिया; इन्हीं के साथ मिल के कई अन्य प्रमुख कार्यकत्ताओं ने भी काम छोड़ दिया। दिल्ली क्लाथ मिल तथा बिरला मिल में काम नहीं हुआ। दिल्ली के छात्र तथा छात्राओं ने इस संघर्ष में अत्यन्त उत्साह से भाग लिया। बुलेटिन भी नियमित रूप से जारी किये गए तथा बाँटे गए। लड़कियों ने असेम्बली के सदस्यों के मकानों पर धरना दिया। उन्होंने श्री एम. एम. अणे द्वारा आयोजित एक बड़ी पार्टी का मजा किरकिरा कर दिया, उसके सभी अतिथि चोर दरवाजे से खिसक गए।

14 सितम्बर से स्कूलों एवं कालिजों के लड़के-लड़कियों तथा कार्यकत्ताओं ने असेम्बली के दरवाजों पर पिकेटिंग किया। प्रदर्शनकारियों पर पुलिस ने निर्दयतापूर्वक लाठीचार्ज किया; परन्तु वे अपने-अपने स्थानों पर डटे रहे। 20 पुरुष सत्याग्रही गिरफ्तार कर लिये गए और उनको जबरदस्ती पुलिस लारी में बिठा दिया गया। लड़कियाँ और महिलाएँ फर्श पर लेट गईं तथा उन्होंने पुलिस की लारी में बैठने से इन्कार कर दिया।

गधों का जुलूस व जेल में लाठीचार्ज

पुरानी दिल्ली में 11 गधों का एक जुलूस निकाला गया, जो किं वायसराय की कौंसिल के 11 भारतीय सदस्यों के प्रतिनिधि थे, जिनका नेतृत्व मेक्स्वैल कर रहा था। इस जुलूस में सम्मिलित होने वाले कुछ लोग तथा यह 11 गधे पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिये गए। आन्दोलन के पहले पखवाड़े में अंग्रेजी, हिन्दी तथा उर्दू के बुलेटिन धड़ाधड़ छापे गए और साइकलोस्टाइल प्रेस ने पुलिस तथा सी०आई०डी० को खूब चकमा दिया। 15 सितम्बर से 30 सितम्बर तक 200 व्यक्ति बुलेटिन छापने, बाँटने, पिकेटिंक करने और धारा 144 तोड़ने के अभियोग में गिरफ्तार किये गए। 30 सितम्बर को दिल्ली जेल में राजनैतिक कैदियों पर लाठी प्रहार किया गया।

फरार घोषित व सम्पत्ति जब्त

दिल्ली की स्थानीय कांग्रेस कमेटी के प्रधान मन्त्री श्री जुगलकिशोर खन्ना, श्रीमती अरुणा आसफली और श्रीकृष्ण नायर स्पेशल आर्डिनेन्स के अन्तर्गत फरार घोषित कर दिये गए और उनकी सब सम्पत्ति जब्त कर ली गई।

स्टेशन जलाये गए

दिल्ली के निकट बिजवासन और गुड़गाँव स्टेशन के बीच बी० बी० एण्ड सी०आई० रेलवे की मालगाड़ी को पटरी से उतार दिया गया। एन०डब्ल्यू०आर० की दिल्ली- करनाल

दिल्ली- करनाल लाइन पर दिल्ली से लगभग 10 मील के फासले पर आधी रात के बाद बादली स्टेशन पर धावा बोल दिया और वहाँ के सब रिकार्ड जला दिये गए।

11 नवम्बर को चाँदनी चौक के रेलवे बुकिंग आफिस के पास बम फटा और एक व्यक्ति गिरफ्तार किया गया। 12 नवम्बर को एन०डब्ल्यू०आर० रोहतक लाइन पर दिल्ली से 12 मील दूर घेवड़ा स्टेशन पर हमला हुआ और यहाँ के सब रिकार्ड जला दिये गए। इसी दिन बिरला मिल में भी एक भारी विस्फोट हुआ।

9

स्वतन्त्र बलिया

ऊपर का शीर्षक सचमुच बलिया की वीरता का द्योतक है। देशपूज्य महात्मा गांधी के अन्तिम आदेश 'करो या मरो' का अक्षरश: पालन सचमुच बलिया ने ही किया। बलिया वास्तव में 'स्वतन्त्र' विशेषण का अधिकारी है; क्योंकि उसने अपनी जनप्रिय सरकार की स्थापना की और शासन-कार्य वीरतापूर्वक सँभाला। महात्माजी व अन्य नेताओं की गिरफ्तारी से बलिया के वीरों का रक्त खौल गया और वे इस चोट को सहन न कर सके।

10 अगस्त को समस्त शहर में व्यापक हड़ताल की गई और 11 को विद्यार्थियों के विराट् जुलूस ने वहाँ की कचहरी की इमारत पर धावा बोल दिया। सशस्त्र पुलिस ने वीर तरुणों की उस भीड़ को रोका; परन्तु भीड़ रुकने में न आती थी, वह आगे ही बढ़ती चली गई। परिणामस्वरूप पुलिस ने लाठियाँ बरसाकर भीड़ को तितर-बितर किया। उसी रात की निस्तब्धता में जब सभी लोग मीठी नींद ले रहे थे, लगभग 40 लड़के गिरफ्तार कर लिये गए। फिर क्या था, सवेरा होते ही पुन: सारे शहर में व्यापक हड़ताल हुई और हड़ताल को असफल बनाने का सतत प्रयत्न नौकरशाही की ओर से किया गया। आन्दोलन ने क्रान्ति का रूप धारण कर लिया; प्रदर्शन और हड़ताल की जगह जनता कचहरियों, थानों और सरकारी दफ्तरों पर कब्जा करने के लिए प्रयत्नशील हुई। गाँव-गाँव, कस्बे-कस्बे से उस जन-समूह ने सरकारी कुत्तों को दुत्कारकर खदेड़ दिया। प्रान्तीय सरकार या कमिश्नरी से सम्बन्ध स्थापित करने पर सहायता पाने के सारे साधन विनष्ट कर दिये गए और बलिया एक स्वतन्त्र टापू-सा रह गया।

तहसील और थाने पर कब्जा

जिले में स्थित पुलिस बराबर गोलियाँ चलाकर जनता के रोष को कम करने का प्रयत्न करती रही; परन्तु सारे प्रयत्न विफल हुए। 16 अगस्त, 1942 को जनता ने रसड़ा की तहसील और थाने पर कब्जा कर लिया और 18 को बांसडीह तहसील पर। फिर 16 और 18 अगस्त को आगे-पीछे ही सारे जिलों की चौकियों पर, थानों और दफ्तरों पर पूर्णतया प्रभुत्व हो गया और उन स्थानों पर जनता के निर्वाचित व्यक्ति ही पदारूढ़ हुए।

तत्कालीन डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट श्री जे० निगम 17 अगस्त को जेल के अन्दर गए

और उन्हें बलिया के प्रमुख नेता चित्तू पाण्डे और ठा० राधामोहनसिंह एम०एल०ए० से शान्ति और सुरक्षा-सम्बन्धी बातें करने के लिए बाध्य होना पड़ा। किन्तु जनता द्वारा नियुक्त प्रबन्ध-समिति के अधीन रहकर कार्य करने तथा सारा शासन उक्त समिति को हस्तान्तरित करके प्रान्तीय सरकार से पूर्णतया सम्बन्ध-विच्छेद कर लेने की शर्त ने उन्हें विचलित कर दिया और वे बाहर आकर पुनः स्थिति पर विचार करने लगे। जनता दिन-प्रतिदिन अत्यधिक उग्र होती जा रही थी।

प्रधान चित्तू पाण्डे

19 अगस्त को सूर्य निकलने से पूर्व अर्थात् 18 की आधी रात को ही बलिया से वास्तविक ब्रिटिश शासन उठ गया। जिलाधीश के पास जिले के कोने-कोने से कब्जा होने के समाचार आने लगे; और यह भी मालूम हुआ कि कल कलेक्ट्री, खजाना और जेल पर भी कब्जा होकर ही रहेगा। अस्तु, श्री निगम ने जाकर जेल का फाटक स्वयं खोल दिया और समस्त कांग्रेसजन स्वतन्त्र कर दिये गए। परिणामस्वरूप उनके हाथ में शासन-व्यवस्था सौंप दी गई। हनुमानगंज की कोठी में एक विराट् सभा करके नई जनता की सरकार का निर्माण किया गया। तत्काल ही व्यवस्था, शासन एवं सुरक्षा के लिए हजारों रुपये इकट्ठे हो गए।

नवनिर्मित सरकार के प्रधान श्री चित्तू पाण्डे बनाये गए और उन्हीं की देख-रेख में सब कार्य शुरू हुआ। सब ब्रिटिश सरकारी कर्मचारी पुलिस लाइन में नजरबन्द कर दिये गए। राष्ट्रीय सरकार ने जनता की जान व माल की रक्षा का भार अपने ऊपर ले लिया। अब बलिया पूर्ण स्वतन्त्र था। विश्व के इतिहास में ऐसी स्वतन्त्रता जिसके प्राप्त करने में या प्राप्त करने के बाद जान-माल की कोई हानि न हुई हो, कहीं नहीं मिलती। भावी इतिहास में बलिया के इस थोड़े काल की स्वतन्त्रता का गर्वपूर्ण स्थान होगा। वह सरकार शत-प्रतिशत जनतन्त्रात्मक थी और कोई भी विरोधी दल नहीं था।

पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट ने तारीफ की

समस्त बलिया की जनता ने स्वतन्त्र हवा में साँस ली और उसका हृदय अब अधिक हल्का था। उसे अनुभव होता था मानो बहुत दिनों के उपरान्त उसके सिर पर से एक बोझ उतार लिया गया हो। प्रत्येक व्यक्ति ने राष्ट्र के प्रति अपना कर्तव्य समझना प्रारम्भ किया और यह महसूस किया कि हमारी सुरक्षा एवं व्यवस्था का उत्तरदायित्व हम पर ही है। वहाँ का एक-एक आदमी वहाँ का पहरेदार था, सिपाही था। हर बुरे-भले काम का स्वयं जिम्मेदार था इसका प्रमाण कस्बा खेती की एक चोरी से मिलता है जिसका पता चोरी होने के 6-7 घंटे के अन्दर ही अन्दर लग गया। उसमें चुराई गई सब वस्तुएँ असली मालिक के पास पहुँच गईं। इसकी प्रशंसा ब्रिटिश सरकार के पुलिस-सुपरिण्टेण्डेण्ट श्री वुड ने भी की थी।

खेती का रण

जिस खेती कस्बे की चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं उसी खेती में सात दिन तक जनता का राज्य रहा। सात दिन बाद जब नेयरसोल, कैप्टन मूर और स्मिथ उसे ब्रिटिश शासन के अन्दर मिलाने आए तो पाशविक अत्याचार प्रारम्भ हुए। घर-घर जलियाँवाला बाग की घटनाएँ घटीं। खूब रक्त-धार बही। अनेक लालों को अपने अमूल्य प्राण देकर आजादी की कीमत चुकानी पड़ी। खेती कस्बे में भीषण रण हुआ और कैप्टन मूर ने सर्वप्रथम वहाँ जमुनाप्रसाद हलवाई को पकड़ा। उसे खूब ही पीटा गया; किन्तु वह साहसी भी अपनी प्रतिज्ञा पर हिमालय की भाँति अटल रहा और इन्कलाब का नारा ही लगाता रहा। खेती कस्बे के मुखिया का घर भी देखते-देखते अग्नि में भस्म हो गया। कांग्रेस के साथ सहानुभूति रखने वाले व्यक्ति बुरी तरह लूटे गए। कुल को कलंक लगाने वाले वहाँ के महापतित मुखिया ने फौज के लिए 90,000 रुपया खेती-निवासियों से बलपूर्वक वसूल किया था। अनेक व्यक्तियों ने चन्दा न देने पर उसके जूतों की ठोकरें खाईं। धनी निर्धन और निर्धन धनी हो गए।

हाजीपुर की बर्बरता

जन-क्रान्ति की जो भीषण लहर सारे देश में दौड़ गई थी, उससे बलिया का एक छोटा-सा गाँव हाजीपुर भी बचा न रह सका और देश के आह्वान पर इस गाँव के नवयुवकों ने अपने प्राणों की बाजी लगा दी। फलस्वरूप हाजीपुर सरकारी दमन का शिकार हुआ। जब फौज की टुकड़ियाँ जिले के विभिन्न स्थानों में अपनी बर्बरता से जन-आन्दोलन को कुचल रही थीं, उसी समय एक फौज की टुकड़ी 28 अगस्त को इस गाँव में भी आ गई। इस फौज ने गाँव को बुरी तरह से लूटा, फूँका और बहुत-सा सामान तोड़ भी डाला। लगातार एक सप्ताह बाद 7 सितम्बर को प्रातः 4 बजे और 100 या 150 पुलिस के सिपाहियों ने छापा मारा और 25 व्यक्तियों को गिरफ्तार किया। इसी प्रकार सामूहिक जुरमाने भी किये गए। इस गाँव पर 2200 रुपये जुरमाना किया गया, जो जबरदस्ती वसूल किया गया। हाजीपुर में सरकारी दमन की बर्बरता का बहुत दिनों तक आतंक रहा।

शहीद कौशल्याकुमार

खेती के अनाचारों तक ही बात सीमित नहीं थी। जगह-जगह पर पुलिस और फौज द्वारा अनेक भीषण अत्याचार किये गए। एक थाने पर झंडा लगाने का प्रयत्न करता हुआ एक बालक कौशल्याकुमार पुलिस की बर्बरता का निशाना बना। जब वह थानेदार के हाथ से झण्डा छीनकर थाने पर लगा रहा था तो तत्क्षण ही उसके पेट में संगीन घुसेड़ दी गई और उसे छत से नीचे फेंक दिया गया।

स्त्रियों की इज्जत लूटी गई

जिले भर में जो-जो भीषण अत्याचार किये गए उन सबका वर्णन कर सकना सर्वथा

असम्भव है। उन दिनों वहाँ चारों ओर मार-काट तथा लूट-मार का आतंक छाया हुआ था और यह आतंक काफी दिन तक बना रहा। कई गाँवों में पुलिस और फौज के व्यक्तियों ने यहाँ तक किया कि परिवार के सब व्यक्तियों को पकड़कर पेड़ से बाँध दिया और उनके सामने ही उनकी बहुओं तथा बेटियों के साथ कुकर्म किया। इन्हीं सब अपमानजनक घटनाओं के कारण बलिया की जनता विक्षुब्ध हो उठी और उसने खुलकर पुलिस और फौज का मुकाबला किया।

गांधी टोपी पहनना भी अपराध

वहाँ आतंक इतना बढ़ गया कि गांधी टोपी पहनना भी अपराध समझा जाता था। जिले पर 12 लाख रुपया सामूहिक जुरमाना किया गया था, लेकिन 29 लाख से भी अधिक जबरदस्ती वसूल किया गया। 46 व्यक्ति पुलिस और फौज की गोलियों के शिकार हुए, 105 जलाये गए और 100 मकान ध्वस्त कर दिये गए जिनसे लगभग 38 लाख रुपये की हानि का अनुमान किया जाता है।

10

जौनपुर और गाजीपुर भी

बलिया का ही प्रभाव जौनपुर और गाजीपुर में भी हुआ। वहाँ की जनता ने खुलकर नौकरशाही का सामना किया और बड़ी-बड़ी फौजों के छक्के छुड़ा दिए। पूरे सप्ताह-भर तक समस्त जौनपुर जिले में जनता का साम्राज्य रहा। इसके बाद प्रान्त के तत्कालीन गवर्नर जब दौरा करते हुए उधर से गुजरे तो उन्होंने पुलिस को खुले आम गोली चलाने का आदेश दे दिया। वहाँ के बख्शा नामक थाने में तो पुलिस ने तालाब में आत्मरक्षार्थ छिपी हुई जनता पर भी निर्दयतापूर्वक गोलियाँ चलाईं। औरतों के आभूषण तक उतार लिये गए। फरार क्रान्तिकारियों को अपने सामने लाने पर गवर्नर ने इनाम घोषित किया था। लोगों को पुंसत्वहीन करने के अनेक अमानुषिक तरीके काम में लाये गए।

गाजीपुर में श्री विक्रमादित्यसिंह नामक एक पत्रकार को भी बुरी तरह गाली दी गईं। वे 'आज' के कार्यालय की ओर से जिले की वास्तविक स्थिति का पता लगाने के लिए साइकिल से यात्रा कर रहे थे। पुलिस ने जिसको चाहा पीटा, जिसको चाहा गोली से उड़ा दिया। वहाँ पर कोई सुनने वाला न था। लोगों का घर-बार जला डालने के बाद जुरमाना वसूल किया गया और न देने की अवस्था में लोगों की बहू-बेटियों को सबके सामने नंगी करके उन्हें अपमानित किया गया।

11

त्रिवेणी के तट पर खून की होली

नेताओं की गिरफ्तारी का समाचार पाकर प्रयाग के विद्यार्थियों ने बड़े-बड़े लम्बे जुलूस निकाले और पुरुषोत्तमदास पार्क व मुहम्मदअली पार्क में विराट् सभाएँ कीं। 11 अगस्त को फिर यूनिवर्सिटी से एक विराट् जुलूस चला और वह भी निश्चित ध्येय तक निर्विघ्न पहुँच गया। इसके उपरान्त 12 अगस्त को प्रयाग में जो घटनाएँ घटीं वे अवर्णनीय हैं। यूनियन हॉल में टैगोर के 'जय हे, जय हे, भारत भाग्य विधाता' का मधुर गान गाया गया। हॉल ठसाठस भरा था, फिर सहस्रों कण्ठों ने एक स्वर में मिलकर झंडे का गीत गाया। जुलूस कचहरी की ओर चला और वह निर्विघ्न वहाँ पहुँच भी गया। लगभग 12 बजे का समय था, पुलिस सामने निशाना साधे खड़ी थी। जुलूस थोड़ा बढ़ा ही था कि पुलिस ने ईंटें बरसाईं। अचानक लाठियाँ बरसीं और फिर लाठी के बाद गोलियों की वर्षा प्रारम्भ हो गई। भीड़ भड़क गई और फिर त्रिवेणी के पट पर खून की होली मची। उसी गोलीकाण्ड में कालिज का एक युवक पद्मधर शहीद हुआ।

यौवन मचल उठा

इधर गोली का चलना था कि विद्यार्थियों का यौवन मचल उठा। छात्रों ने खूब दिल खोलकर कार्य किया। पुलिस ने नादिरशाही मचा दी थी। निहत्थी जनता पर, बच्चों और अबलाओं पर खूब लाठी तथा गोलियाँ बरसाई गईं। 13-14 अगस्त को समस्त शहर में कर्फ्यू आर्डर लग गया और सशस्त्र सैनिकों से भरी हुई लारियाँ सड़कों पर गश्त लगाने लगीं। इतने नियन्त्रण पर भी जनता ने अपना कार्य जारी रखा। पुलिस ने आन्दोलन के उत्साह को दबाने के लिए अनेक नृशंसतापूर्ण हत्याएँ कीं। पुलिस ने पुल पर से आते-जाते कई निर्दोष व्यक्यिों को गोली का निशाना बनाया। गांधी टोपी की रक्षा के लिए एक नवयुवक दशरथलाल जायसवाल को गोली से उड़ा दिया गया।

12

गोरखपुर और आजमगढ़

अगस्त-क्रान्ति में गोरखपुर और आजमगढ़ की भी प्रमुख देन है। गोरखपुर के सारे कांग्रेस-कार्यकर्त्ता 9, 10 तथा 11 अगस्त को गिरफ्तार कर लिये गए थे। गोरखपुर जिले की बाँसगाँव तहसील में इस समाचार के पहुँचते ही प्रलयंकर तूफान उमड़ आया। जनता ने अपनी नाराजगी का इजहार किया। विराट् जुलूस ने थाने और पोस्ट-आफिस पर तिरंगा झंडा फहराया। फलस्वरूप फौज की टुकड़ी तथा पुलिस ने मनमाने अत्याचार किए और परसा गाँव तथा अन्य गाँवों में आग लगा दी। साथ ही कई गाँवों में पुलिस के दल ने लूट-मार भी मचाई। मरची, बथुवा, खोयापार आदि गाँवों में यही अवस्था हुई। खोयापार गाँव के 'हिन्दी साहित्य विद्यालय' की इमारत पर पुलिस ने हमला बोलकर उसमें आग लगा दी। श्री रामलखन पाण्डेय व केदारनाथ पाण्डेय का घर लूट लिया गया। कोहड़ी के लाल श्री नारायणचंद के घर से पुलिस वाले 35000 रुपये की सम्पत्ति ले गए। इसके अतिरिक्त गोला, गोमापुर, ककरही और पंडौली नामक स्थानों पर भी हमला किया गया।

यहीं तक अन्त नहीं

नौकरशाही के अत्याचारों का अन्त यहीं तक नहीं था। मकान जलाने के बाद उसके मालिक को जेल में भेज दिया गया। मदरिया के श्री रामअलखसिंह के घर को पुलिस ने जलाकर भस्म कर दिया। इसके अतिरिक्त 1000 रु० का सामूहिक जुर्माना मदरिया के समीपवर्ती गाँवों पर किया। श्री रामअलखसिंह को 50 रु० जुर्माना और 10-10 बेंत की सजा भी दी गई। इसके अतिरिक्त उरूवा के बाजार के समीपर्ती ग्रामों में थानेदार ने जो अमानवीय कृत्य किए वे उल्लेखनीय हैं। वहाँ के प्रतिष्ठित लोगों को पकड़-पकड़कर जबरदस्ती जुर्माने वसूल किये गए। न देने की अवस्था में उन्हें बुरी तरह पीटा गया। साथ ही 4202 रु० कमदयाल के गाँव से वसूल किये गए। खोयापार, सई व भाटपार मालाबारी नामक स्थानों से भी क्रमशः 1150, 5000 रु० जुर्माने में वसूल किए और लाखों रुपयों की क्षति पहुँचाई। जनता इस व्यवहार के बावजूद भी पूर्ण अहिंसक रही।

आजमगढ़

आजमगढ़ में भी अन्य जिलों की भाँति कांग्रेस कमेटी के दफ्तर पर पुलिस ने अधिकार कर लिया और प्रमुख कांग्रेस कार्यकत्ताओं को गिरफ्तार करके उन्हें अनेक यातनाएँ

दी गई। जनता अपने नेताओं की गिरफ्तारी से उत्तेजित हो गई और उसने दोहरीघाट से लेकर मऊ शाहगंज तक रेलवे लाइनें बिल्कुल बेकार कर दीं। वहाँ की एक उल्लेखनीय घटना 'रामपुर की चौकी' पर कब्जा करने की है।

थानों पर आक्रमण

मधुवन थाने पर कब्जा करने को प्रस्थान करते समय भीड़ की संख्या लगभग 60-65 हजार थी। थाने पर जब जनता पहुँची तो उसकी खबर अधिकारियों को मिल गई। भीड़ के बढ़ते ही गोली चलने लगी। जनता ने गोली की कोई परवाह न की और बढ़ती ही गई। तुरन्त 34 व्यक्ति वीरगति को प्राप्त हो गए और अनेक घायल हो गए। गोलियों से इतने व्यक्ति जख्मी हुए थे कि 42 व्यक्ति एक सप्ताह के भीतर-भीतर मर गए। इसके अतिरिक्त महू, तरवा, महाराजगंज व कासा थानों में भी यही स्थिति हुई। जब पुलिस से जनता का जोश न दब सका तो गोरी फौज बुलाई गई और उसने वहाँ लंका-काण्ड मचा दिया।

जनता दमन से भी न दबी

पुलिस और फौज ने जब जनता को आतंकित कर दिया तो पुलिस ने समझा कि जनता का जोश ठण्डा हो गया किन्तु वह कब मानने वाली थी। नवम्बर, 42 में एकाएक जनता ने रात को खुरहर स्टेशन पर हमला बोल दिया और पूर्ण अधिकार कर लिया।

स्मरणीय घटना

आजमगढ़ के अमिला नामक स्थान में श्री अलगूराय शास्त्री की भावज ने जो वीरता दिखाई, वह अभूतपूर्व घटना है। जब सेना उनके मकान को फूँकने के लिए पहुँची तो वे मकान से फूँकने के लिए निकाले गए सामान पर बैठ गईं और उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा, "पहले मुझे फूँको, पीछे सामान फूँकना।" उनकी इस निर्भीकता से गोरों की सामान फूँकने की हिम्मत नहीं हुई और वे बिना सामान जलाए ही वापिस चले गए।

अपार क्षति

आजमगढ़ जिले की इस संग्राम में अपार क्षति हुई। 205 मकान फूँके गए, 3 लाख 52 हजार रुपये की लूटने और फूँकने से हानि हुई। एक लाख 60 हजार रुपये जुर्माना हुआ। 107 व्यक्ति मरे, घायलों की संख्या असंख्य है। 380 व्यक्तियों पर मुकदमा चला, जिनमें से 231 को 6 मास से लेकर काले पानी तक की सजाएँ दी गईं।

13

विश्वनाथपुरी में

9 अगस्त को विश्वनाथपुरी काशी में नेताओं की गिरफ्तारी का समाचार पहुँचते ही, सारा नगर विक्षुब्ध हो उठा, समस्त शहर में हड़ताल हो गई। शाम को काशी विश्वविद्यालय के छात्रों का जुलूस वहाँ से चलकर दशाश्वमेध घाट आया और वहाँ कांग्रेस के अन्य कार्यकत्ताओं के साथ नारे लगाता हुआ टाउनहाल पहुँचा। वहाँ पर विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डा० के० एन० गैरोला की अध्यक्षता में एक सार्वजनिक सभा हुई। सभा में 8 अगस्त वाला प्रस्ताव दुहराया गया और उसी के अनुकूल भावी आन्दोलन का कार्यक्रम तैयार किया गया।

लाठीचार्ज

फौजदारी अदालत के अहाते में 10 अगस्त को जब जुलूस पहुँचा तो पुलिस ने उसे लौटने को कहा; किन्तु पूर्ण अहिंसावादी वीरों ने लौटने से इन्कार कर दिया। फलस्वरूप लाठीचार्ज किया गया। इससे जनता उत्तेजित हो उठी और उसने इस लाठीचार्ज को चुनौती के रूप में स्वीकार किया। परिणामस्वरूप दूसरे दिन विश्वविद्यालय के छात्रों ने फिर जुलूस निकाला व अदालत की ओर चल दिए। जुलूस में लगभग दस हजार जन-समूह इकट्ठा चल रहा था। जुलूस ने निर्भीक रूप से जाकर दीवानी और फौजदारी अदालत की दोनों इमारतों पर तिरंगा झंडा फहराया। 12 अगस्त को फिर पुलिस ने लाठी और गोली चलाई, जिससे अनेकों घायल वे धराशायी हुए।

दशाश्वमेध काण्ड

13 अगस्त को पहले दिन के गोलीकाण्ड में घायल व मृत वीरों को बधाई देने के लिए टाउनहाल में एक सार्वजनिक सभा करने का निश्चय किया गया और दशाश्वमेध घाट से एक विराट् जुलूस चला। जुलूस बढ़ा ही था कि पुलिस आ धमकी। पहले तो लाठीचार्ज हुआ और आद में गोलियाँ चलीं। 26 राउंड गोलियों के चलने से धड़ाघड़ लाशें बिछने लगीं। पुलिस की निर्दयता से कार्यकत्ताओं का उत्साह और भी बढ़ गया तथा वे शहर से गाँव की ओर चल पड़े। जनता ने जिले के प्राय: सभी स्टेशन लूटे, जलाए और बर्बाद किए। इसके बाद गाँवों में भी नौकरशाही का दमन-चक्र चला। चोलापुर, धानापुर आदि स्थानों

में केवल झंडा लगाने के अपराध में ही दमन किया गया। ऐसा दमन कि जिसे देखकर पशुता भी काँप उठे।

बच्चे की निर्मम हत्या

बनारस जिले के एक गाँव पर पुलिस को विद्रोह तथा तोड़-फोड़ में भाग लेने का सन्देह हुआ। उस गाँव पर सामूहिक जुर्माना किया गया। एक दरिद्र किसान के घर पर फौज जुर्माना वसूल करने गई। उस किसान ने जुर्माना अदा करने में असमर्थता प्रकट की। पुलिस ने इसके उत्तर में उसके डेढ़ वर्ष के बच्चे को उठाकर उसके माँ-बाप की आँखों के सामने जलती आग में उलटा लटका दिया। इसके अतिरिक्त पुलिस का अत्याचार यहाँ तक बढ़ा कि गाँव के गाँव अग्नि की भेंट कर दिये गए, बाजार लूट लिये गए। इससे जनता भी बिगड़ उठी और उसने खुलकर तोड़-फोड़ की।

23 स्थानों पर 2002 गोलियाँ

नौकरशाही के इन अत्याचारों की जाँच करने के लिए जिला कांग्रेस कमेटी ने एक 'अगस्त जाँच कमेटी' बनाई थी। इस कमेटी ने पूरे 200 पन्नों की एक रिपोर्ट 5 महीने की जाँच-पड़ताल के बाद तैयार की। रिपोर्ट के अनुसार 23 जगहों पर 2002 बार गोली चली; जिसमें 18 व्यक्ति मरे और 85 व्यक्ति घायल हुए, 7 व्यक्तियों को कोड़े लगाने की सजा दी गई। 117 विद्यार्थियों को जिले से बाहर निकाल दिया गया। चार व्यक्तियों को अपने ही निवास-स्थल पर नजरबन्द रखा गया। 563 व्यक्तियों को 3 महीने कैद से लगाकर मौत तक की सजाएँ दी गईं। 203 व्यक्ति पुलिस की हिरासत में रखे गए और बाद में छोड़ दिये गए। स्त्रियों पर अमानुषिक अत्याचार किये गए। रिपोर्ट के अनुसार बनारस शहर और जिले पर 2,56,877 रुपये सामूहिक जुर्माना किया गया।

14

बैसवारे का शौर्य

अगस्त की क्रान्ति में यू०पी० के पूर्वी जिलों ने जो महत्त्वपूर्ण भाग लिया, वह इतिहास के पृष्ठों में सदा अमर रहेगा। बैसवारे ने भी इसमें पर्याप्त योग दिया। इसका ओजस्वी वर्णन वहाँ के एक सार्वजनिक कार्यकर्त्ता श्री देवीरत्न अवस्थी ने निम्न पंक्तियों में किया था—

8 अगस्त, 1942 की रात को राष्ट्रपति और उनकी कार्यकारिणी के सारे सदस्य तथा पूज्य बापू की गिरफ्तारी के परिणामस्वरूप सारे देश में एक उग्र क्रान्ति मच गई। 9 अगस्त, 1942 के तड़के उषा सुन्दरी ने रायबरेली के अपने अनेक वीर भाइयों का शृंगार किया। हमारे सब-के-सब प्रमुख नेता जेलों में डाल दिये गए। ऐसे समय जब कि उनके सारे वीर बन्धु जेलों में डाल दिये गए थे, जिले में कुछ लोग फकीरी का अलख जगा रहे थे। इन अलख जगाने वालों के शिरोमणि थे हमारे आदरणीय बन्धु श्री महादीरप्रसाद पाण्डेय! पाण्डेय जी ने घर-घर, गाँव-गाँव जाकर स्वतन्त्रता का सन्देश सुनाया और क्रान्ति को अनुप्राणित किया। वे इतने सर्वप्रिय थे कि पुलिस दो वर्षों के प्रयत्न के बाद भी उन्हें गिरफ्तार न कर सकी। अन्त में पूज्य बापू के आदेशानुसार हमारे इस आदरणीय तपस्वी ने आत्मसमर्पण किया था। रायबरेली जिला कांग्रेस कमेटी के सभापति श्री गुप्तारसिंह इस आन्दोलन के प्रमुख प्रवर्त्तक थे। उनके योग्य साथी भाई रामावतारसिंह भी इसमें अग्रगण्य थे। गुप्तारसिंह की योजनाएँ बड़ी सूझ-बूझ की और विलक्षण थीं। एक ही दिन में सारे थानों पर अधिकार करना, एक ही दिन में सारे चौकीदारों का नौकरी छोड़कर राष्ट्रीय चौकीदारी में सम्मिलित हो जाना, डाकघरों, कचहरियों पर एक ही दिन और एक ही साथ अधिकार कर लेना इत्यादि बातों की उन्होंने सारी योजनाएँ बना ली थीं, और दिन निश्चित कर लिया था, पर दुर्भाग्यवश कुछ ऐसी घटनाएँ घटीं जिनके कारण ये योजनाएँ काम में न लाई जा सकीं।

9 अगस्त, 1942 से लेकर 17 अगस्त, 1942 के 8 दिन बड़े महत्त्व के थे। इन नौ दिनों तक सारे जिले ने अपूर्व उत्साह और साहस के साथ विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंकने का प्रयत्न किया। तार काट दिये गए, रेलें उखाड़ दी गईं; जिसके परिणामस्वरूप रायबरेली से कानपुर जाने वाली गाड़ी महीनों बन्द रही। श्री गजेन्द्रसिंह, गयाप्रसाद शुक्ल, श्री बनवारी लाल त्रिवेदी और श्री रमाकान्त मिश्र इस आन्दोलन के प्राण थे। श्री गयाप्रसाद शुक्ल अब

तक लम्बी कारावास यातना भोग रहे हैं। रायबरेली, लालगंज और गौरा में बड़े-बड़े जुलूसों का निकलना एक दैनिक कृत्य था। हिन्दू हाई स्कूल रायबरेली और मिडिल स्कूल गौरा के छात्रों का उत्साह अपूर्व था। इस सम्बन्ध में हमें बार-बार दो बहादुर छात्रों के नाम याद आते हैं। एक श्री श्रीकान्तसिंह और दूसरे थे इन्दूभूषण पाण्डेय। रायबरेली का छात्र आन्दोलन इन्हीं दो युवकों की क्रियाशीलता का परिणाम था। श्री श्रीकान्तसिंह वर्तमान जिला किसान संघ के मन्त्री हैं। जिला किसान संघ का सभापतित्व वहन कर रहे हैं श्री जयचन्द्र पाण्डेय।

अब हम उस 18 अगस्त की चर्चा करेंगे जिसके बिना हमारा सारा शृंगार व्यर्थ है। बैसवारे के वक्षस्थल पर एक गाँव बसता है। उसका नाम है 'सरेनी'। सरेनी की आबादी हजार आठ सौ की होगी। उस गाँव में पुलिस का थाना है। प्रति मंगल और शुक्र के दिन यहाँ एक बाजार लगता है। 18 अगस्त को शुक्रवार था; और था नाग पंचमी का महापर्व। इस दिन भाइयों और बहिनों का सम्मिलन होता है। उस दिन सारी बहिनों ने अपने भाइयों को तिलक किया होगा और दूध-बताशे खिलाए होंगे—इस आशा से कि उनका सम्मिलन सालभर बाद इसी तरह फिर हो। उन भोली बहिनों में से एक भी यह न जानती रही होगी कि आज की सन्ध्या उनके भाई के रक्त का छिड़काव करती हुई उतरेगी। किसी को कल्पना भी न रही होगी कि उनका भाई सरेनी की पुलिस की भेंट चढ़ जाएगा।

सूर्यदेव मानो आने वाली दुर्घटना की आशंका से लज्जित हो रहे थे। दोपहर बादलों से घिरी-घिरी थी। सरेनी मण्डल कांग्रेस कमेटी के युवक कार्यकर्त्ता श्री सूर्यप्रसाद त्रिपाठी बाजार से कुछ दूरी पर गिरफ्तार कर लिये गए। जनता उत्तेजित हो गई। लोगों ने निश्चय किया कि वे अपने नौजवान देशभक्त साथी को पुलिस से वापस देने को कहेंगे। कई हजार आदमी जुलूस बनाकर थाने की ओर चले। जुलूस थाने तक पहुँचा भी न था कि उस पर पुलिस की बन्दूकें आग उगलने लगीं। इस समय सूर्यास्त होने जा रहा था। अठारह व्यक्ति बुरी तरह घायल हुए और पाँच व्यक्ति खेत रहे। इन हुतात्मा वीरों के नाम थे—श्री अविदानसिंह, श्री सुखदेव सिंह, श्री टिरीसिंह, श्री रामशंकर और श्री महादेव।

इन अमर शहीदों की आत्माहुति के बाद सारे जिले पर जैसे-जैसे अत्याचार हुए उनका वर्णन मानव लेखनी की शक्ति के बाहर की बात है। यह भारी कथा जनता के साथ किये गए अपमान, मार-पीट, बलात्कार और लूट-मार की रोमांचक और खून खौलाने वाली घटनाओं से भरी है। काश ! हम परतन्त्र लोगों में उसके प्रतिशोध की उचित क्षमता होती!

सन् 1942 का रक्तरंजित वर्ष समाप्त हुआ। सन् 1943 की 26 जनवरी को सवेरा हुआ। सारे नेता जेलों में बन्द थे। आतंक और भय का बोलबाला था। जनता निराश हो रही थी। सरकार ने उसकी रीढ़ तोड़ने की पूरी-पूरी कोशिश की थी। फिर भी रायबरेली जिले ने स्वाधीनता दिवस मनाया। वयोवृद्ध नेता श्री मोहन दउवा आगे आए। उनकी दहाड़

से हृदयों में नया उल्लास, नया जीवन उत्पन्न हो गया। स्वतन्त्रता के इस वीर सैनिक को गिरफ्तार कर लिया। हिरासत में पुलिस ने अवर्णनीय कष्ट दिए। जेल में तो आपदाओं का साम्राज्य उमड़ आया, पर वयोवृद्ध मोहन दउवा की केवल एक आवाज थी—'इन्कलाब जिन्दाबाद'।

हम परतन्त्र लोग अपने गोरे मालिकों का बटवारा मानने को बाध्य हो जाया करते हैं। हमारी लेखनी में कमजोरी ही समझिए कि हम अपने उन्नाव जिले के साथियों की महाप्राणता से इस लेख को विभूषित नहीं कर सके। हमें आशा है कि हमारे उन्नाव के साथी हमें क्षमा करेंगे और आशीर्वाद देंगे।

सरेनी के हुतात्मा वीरों की स्मृति रक्षार्थ जिला कांग्रेस कमेटी के सभापति श्री गुप्तारसिंह और मन्त्री श्री केदारनाथ पाण्डेय ने 'सरेनी शहीद स्मारक कोष' की स्थापना की है। इस कोष के धन-संग्रह के लिए एक समिति बनी है जिसने दस हजार रुपयों की एक अपील प्रकाशित की है । क्या बैसवारे के सारे भारत में फैले हुए वीर पूजक लोग अपने भाइयों के रक्तदान का उचित प्रतिशोध न करेंगे !

15

चन्द्रगुप्त का पाटलिपुत्र

आज़ादी के लिए किये गए प्रयत्नों में चन्द्रगुप्त का पाटलिपुत्र सदा से आगे रहा है। 1942 की क्रान्ति में बिहार की महत्त्वपूर्ण देन है। नेताओं की गिरफ्तारी का समाचार पाते ही समस्त प्रान्त में विद्रोह हो गया और जनता क्षुब्ध हो उठी। इस क्रान्ति में लगभग 250 रेलवे स्टेशन बरबाद किये गए थे, इनमें से 180 सिर्फ बिहार के ही हैं। बिहार प्रान्त में नौकरशाही ने जिस क्रूरता से मानवता की हत्या की वह अवर्णनीय है। परिणामस्वरूप वहाँ निरीह जनता के पेटों में जिस प्रकार की भाले की नोक घुसेड़ी गई कि जिसके परिणामस्वरूप अंतड़ियाँ बाहर निकल आईं। फरारों का पता निकालने के लिए किस प्रकार अनेक यातनाएँ दी गईं, यह सुनकर रोमांच हो आता है। एक कांग्रेस कार्यकर्त्ता के मुँह में तो एक मेहतर द्वारा पेशाब तक कराया गया।

सेक्रेटरियेट की ओर

11 अगस्त को प्रात:काल एक विराट् जुलूस, जिसमें पटना के सभी स्कूलों तथा कालिजों के छात्र थे, गोलघर होता हुआ सेक्रेटरियेट के गुम्बद को हिला रहा था। पुलिस अफसर ने प्रश्न किया था कि तुम क्या चाहते हो ? प्रश्न को सुनते ही जुलूस में से 11 छात्र निकलकर आगे आ गए और छाती फुलाकर कहा—"हम लोग सेक्रेटरियेट पर झंडा फहराकर चल देंगे ?" इस पर पुलिस अफसर ने बिगड़कर कहा—"झंडा फहराने से पहले सीना खोल लो !" तत्क्षण एक छात्र आगे बढ़ आया और पुलिस अफसर के सामने खड़ा हो गया।

गोली निहत्थों पर चली

तुरन्त ही पुलिस अफसर ने उस निहत्थे युवक समुदाय पर गोली चलाने की आज्ञा दे दी। गोलियों और छर्रों की बौछार के बीच भी वे तरुण डटे रहे। इतने में गुम्बद पर एक दुबला-पतला नौजवान छात्र 'वन्देमातरम्' और 'भारत छोड़ो' के नारे लगाता दिखाई दिया। सबने आश्चर्य से देखा—तिरंगा झंडा इमारत पर फहरा रहा था। पुलिस की गोली से 11 युवक शहीद हुए; जिनके यश का विस्तार वह झंडा हवा में फहराकर कर रहा था। 11 अगस्त की यह घटना सदा के लिए अमर हो गई। इस गोलीकाण्ड से सारी जनता में हलचल मच गई।

ज्वाला सारे बिहार में

12 अगस्त को इन शहीदों को श्रद्धांजलि समर्पित करने के लिए एक सार्वजनिक सभा हो रही थी। तभी भारत मन्त्री श्री एमरी का विषैला भाषण ब्राडकास्ट हुआ था। उनके भाषण में रेल की पटरी उखाड़ना, तार काटना आदि कांग्रेस का कार्यक्रम बताया गया था। लोगों ने इसे सच माना और शहीदों को श्रद्धांजलि देकर कार्यक्रम को सर्वथा अपना लिया। शहीदों की चिताओं से उठी यह ज्वाला सारे बिहार में फैल गई। पटना सिटी स्टेशन का गोदाम जल उठा, पटना भर के लैटरबक्स भड़क उठे और सारे पोस्ट आफिस लूट लिये गए। बिहार के सारे ई० आई० आर० के स्टेशन खाक में मिला दिये गए। फिर तो प्रान्तभर में दौर शुरू हो गया।

कर्फ्यू आर्डर

14 अगस्त को 10 हजार टामी नगर में घुस आए और शहर में कर्फ्यू आर्डर लगा दिया गया। घोर अनाचार फैला, जो भी शहर में घूमता मिला, इन टामियों ने उसे ही खूब पीटा। सारा शहर सैनिकों के हवाले था।

पटना के अतिरिक्त बख्तियारपुर, बाढ़, विक्रम, हिलसा, फुलबारी में पुलिस ने गोली चलाई; इनमें अकेले हिलसा में मरने वाले व्यक्तियों की संख्या 13 है। बख्तियापुर में एक जुलूस का नेतृत्व करते हुए नाथू गोप को गोली से उड़ा दिया गया। बाढ़ में 8 व्यक्ति घायल हुए और एक की मृत्यु हुई। हिलसा में घायल व्यक्तियों की संख्या 30 बताई जाती है। विक्रम में 2 मरे और 40 घायल हुए। कई स्थानों पर पुलिस की बर्बरता का नंगा नाच देखने को हमें मिला।

विश्वस्त रूप से जो आँकड़े प्राप्त हुए हैं उनके अनुसार तीन लाख रुपया सामूहक जुर्माना वसूल किया गया। नौवतपुर गोलीकाण्ड में 30 व्यक्ति तत्काल मृत्यु के मुँह में समा गए और 181 बुरी तरह घायल हुए। पटना के विभिन्न स्थानों में 524 व्यक्ति नजरबन्द किये गए, 135 व्यक्तियों को कठिन कारावास भोगना पड़ा और कुल मिलाकर 16,377 व्यक्ति गिरफ्तार किये गए।

16

शाहाबाद का दमन

10 अगस्त, 1942 को सवेरे से ही आरा में जनता की भीड़ जमा होती जा रही थी। कांग्रेस कार्यकत्ताओं ने छात्रों के सहयोग से एक विराट् प्रदर्शन किया। शाम को रमना मैदान में सभा हुई। सभा शुरू होने से पूर्व ही श्री बुद्धनराम वर्मा एम० एल० ए० वहाँ कैद कर लिये गए। सभा हो ही रही थी कि पुलिस चीरती हुई वहाँ आ पहुँची। एम० डी० ओ० ने भीड़ पर लाठी चलाने की आज्ञा दी, परन्तु पुलिस ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया। शहर से सरकारी रौब उठ गया था। सभी सरकारी इमारतों पर तिरंगे झंडे लहरा रहे थे। गोरी पुलिस ने आकर गोली चलाई और फलस्वरूप 15 व्यक्ति मारे गए तथा कई घायल हुए।

देहातों में दमन

घनडीहा, कसाय, जितौरा, संझौला आदि गाँवों के लोगों को पुलिस ने बुरी तरह पीटा। बलीगाँव और लासाड़ी के ग्रामीणों पर किये गए अत्याचार से तो शायद दानवता भी लज्जित हो जाती। बलीगाँव में बीसों किसानों को मारते-मारते जमीन पर सुला दिया गया। वहाँ के नौजवान छात्र श्री नन्दगोपालसिंह को इस तरह पीटा गया कि अब भी उसके बदन पर चोट के चिह्न विद्यमान हैं। लासाड़ी के किसानों पर गोलियों की वर्षा की गई, जिससे 12 व्यक्ति मरे और अनेक घायल हुए। मृत व्यक्तियों में एक स्त्री भी थी। नवाडेरा निवासियों को तबाह और बरबाद कर दिया गया। इसके अतिरिक्त अनेक गाँवों में घोर दमन किया गया।

17 थानों पर कब्जा

इन सरकारी अत्याचारों के कारण आन्दोलन जोर पकड़ गया था। फलस्वरूप 17 थानों से पुलिस और थानेदार भाग गए और जनता ने उन पर कब्जा कर लिया। पुलिस के हट जाने के बाद कहीं भी चोरी या डकैती नहीं हुई। एक के बाद एक सभी थानों पर जनता का कब्जा होता देखकर असिस्टेंट पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट का दिल दहल उठा। वह खुद ही आतंकित हो गया। डुमराँव थाने में वहाँ की इमारत पर कब्जा करते हुए कपिलमुनि तथा रामदास लुहार और गोपालराम नामक युवक पुलिस की गोली के शिकार हुए।

75 व्यक्ति शहीद हुए

शाहाबाद जिले में कुल मिलाकर 75 व्यक्तियों की मृत्यु हुई; हजारों व्यक्ति घायल हुए; लगभग 2000 व्यक्ति गिरफ्तार हुए। 5 को फाँसी की सजा हुई और दर्जनों नवयुवकों को बेंतों की सजा भुगतनी पड़ी। सारे जिले से लगभग 70,000 रुपये जुर्माने में वसूल किये गए।

शाहाबाद में गोलियों का शिकार केवल पुरुषों को ही नहीं प्रत्युत स्त्रियों को भी होना पड़ा। कोबनटा में मशीनगन से एक स्त्री की मृत्यु हुई तथा फकराबाद में एक बालक को पुलिस की गोली का शिकार होना पड़ा।

17

सारे बिहार में क्रान्ति की लहर

मुंगेर में आन्दोलन ने कितना उग्र रूप धारण कर लिया था, इसका अनुमान इसी से हो सकता है कि वहाँ सरकार ने हवाई जहाज से गोलियाँ बरसवाईं। फलस्वरूप 49 व्यक्ति मारे गए और 35 व्यक्ति बुरी तरह जख्मी हुए। साधारण रूप से घायल हो जाने वालों की संख्या तो असंख्य थी। इसके सिवाय इस जिले में 16 जगहों पर गोलियाँ चलीं, जिनमें 40 व्यक्ति मरे और प्राय: दुगुने घायल हुए। कोचाही के पुल पर एक राह चलते व्यक्ति को गोली मार दी गई। इस जिले में 54 आदमी नजरबन्द और 627 व्यक्ति गिरफ्तार किये गए; जिनमें 328 को सजा हुई। सारे जिले पर 1,97,700 रुपये सामूहिक जुर्माना किया गया। बटियारपुर में समूह के एक-एक व्यक्ति को गोली का निशाना बनाया गया। 90 गैर सैनिकों ने जनता को पीट-पीटकर घायल किया।

गया में

प्राप्त आँकड़ों के अनुसार आन्दोलन के सिलसिले में 46 व्यक्ति नज़रबन्द किये गए। 789 व्यक्तियों को विभिन्न मियादों की कड़ी सजाएँ दी गईं। इस जिले के भिन्न-भिन्न स्थानों में कुल मिलाकर 1035 व्यक्ति गिरफ्तार किये गए। पुलिस और जनता में जो मुठभेड़ें हुईं, उसमें तीन आदमी गोली से मारे गए। सरकारी दमन में ग्यारह आदमी हताहत हुए। जिले के विभिन्न स्थानों में 3 स्थानों से 3 लाख 53 हजार 3 सौ रुपया सामूहिक जुर्माने के रूप में वसूल किया गया।

हजारी बाग

हजारी बाग जिले ने सर्वांश में यह प्रमाणित कर दिया कि समय आने पर देश के कोने से, आजादी की आकांक्षा रखने वाली असंख्य जनता, मातृभूमि के उद्धार के लिए अपना सब कुछ न्यौछावर कर देने के लिए तैयार है। हजारी बाग जिले में जो भीषण दमन हुआ उसका स्वतन्त्र भारत के इतिहास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान होगा। वहाँ के विभिन्न स्थानों में 328 व्यक्ति नजरबन्द किये गए। कुल मिलाकर 7001 व्यक्तियों को कारावास की सजा हुई। सारे जिले में 1,33,100 व्यक्तियों की गिरफ्तारी हुई। जिले के जिन स्थानों में गोलियाँ चलाई गईं, उनमें डोमचांच तथा कोडरमा आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। सारे

जिले पर कुल मिलाकर 17,72,000 रुपये जुर्माना किया गया। पुलिस और जनता की भिड़न्त में 88 व्यक्ति गोलियों के शिकार हुए। संघर्ष और पुलिस के दमन के फलस्वरूप 669 व्यक्ति शहीद हुए।

पलामू

पलामू जिले में संघर्ष के सिलसिले में 8 व्यक्ति नजरबन्द किये गए। लगभग 300 व्यक्तियों को विभिन्न सजाएँ दी गईं और कुल मिलाकर 1286 व्यक्तियों को सख्त चोटें पहुँचीं। इस जिले से 3400 रुपये सामूहिक जुर्माना वसूल किया गया। इसके अतिरिक्त राँची में भी भारी दमन हुआ। वहाँ पर 12 व्यक्तियों को नजरबन्द किया गया। 316 व्यक्तियों को सजा हुई और 394 व्यक्ति गिरफ्तार किये गए। मानभूमि और सिंहभूमि जिलों से क्रमश: 34,640 और 2,164 रुपये जुर्माना वसूल किया गया।

भागलपुर का सियाराम दल

भागलपुर में आन्दोलन अत्यन्त भीषण रूप में रहा। वहाँ पर 218 व्यक्ति गोलियाँ खाकर शहीद हुए, 280 बुरी तरह घायल हुए। वहाँ के पीरमैंती नामक स्थान में गोली चलने से 37 व्यक्ति मरे और 32 व्यक्ति घायल हुए। सुलतानगंज में मृतकों की संख्या 67 और घायलों की 150 थी। वहाँ की जेल में भी भीषण दमन हुआ। फलस्वरूप गोलियों की वर्षा से 125 कैदी शहीद हुए। दमन के सिलसिले में लगभग एक हजार घर जलाकर खाक कर दिये गए; 104 व्यक्ति नजरबन्द किये गए। 4000 के लगभग गिरफ्तारियाँ हुईं जिनमें 1000 व्यक्तियों को सजा हुई। जिले पर 2,18,480 रुपये सामूहिक जुर्माना हुआ।

यहाँ की उल्लेखनीय घटना 'सियाराम दल' है। यह एक क्रान्तिकारी दल था, जिसके कारण आन्दोलन सफल हुआ। सरकार लाख प्रयत्न करने पर भी इस दल का मुख्य अड्डा न खोज सकी। इस सम्बन्ध में सरकार ने अनेक अत्याचार किए। 70 वर्ष और 90 वर्ष के बूढ़े तक गिरफ्तार किये गए। राह चलते मुसाफिरों पर मार पड़ी।

18

पटना कैम्प जेल की हृदयविदारक घटनाएँ

बिहार की पटना कैम्प जेल ने इस आन्दोलन में अनेक हँसती हुई जवानियों को अपने गाल में दबोच लिया। उस जेल के अधिकारियों के अत्याचार व वातावरण का हृदयविदारक वर्णन बिहार के प्रसिद्ध राष्ट्रकर्मी श्री रामवरणसिंह 'सारथी' ने उक्त शीर्षक से निम्न प्रकार किया है—

पटना कैम्प जेल में जितने भी वार्ड हैं, उन सब में हवा के लिए कहीं भी खिड़कियाँ नहीं हैं, जंगली जानवर भी अक्सर 'हवादार' पिंजरे में ही बन्द कर रखे जाते हैं, लेकिन वहाँ तो एक छोटे से वार्ड में एक सौ तक बन्दी लाठी के बल पर बन्द कर दिए जाते थे। लाख विरोध करने पर भी कहीं उनकी सुनवाई नहीं होती थी। जिस वार्ड में मुश्किल से 'बी' और 'ए' श्रेणी के बन्दी बीस की संख्या में रह सकते हैं, उसमें एक सौ अभागों को बन्द कर देना अनोखी घटना है। लोगों को 'लाठी' के बल पर ही बन्द किया जाता था और सब डर के मारे बन्द भी हो जाते थे। लाठियों के सामने उन अभागे बन्दियों की आत्मा मर गई थी। स्वाभिमान विनष्ट हो चुका था। 'सज्जन' तो थे नहीं कि उनके लिए यथेष्ट वार्ड का प्रबन्ध किया जाता। जेठ की चिलचिलाती धूप में उस टीन के बने वार्ड में लोग बेमौत मरते रहते थे। टीन की गर्मी भी अजीब होती है। लोग उस गर्मी से मुक्ति पाने के लिए 'पीपल' के समीप खड़े रहते थे।

पटना कैम्प जेल में 1930 में सैकड़ों पीपल के वृक्ष इन्हीं अभागे बन्दियों के द्वारा लगाए गये थे। भोजन और जलपान के सम्बन्ध में कुछ लिखना ही अपराध है। वहाँ की खिचड़ी में तो रोज-रोज कीड़े दिखलाई पड़ना एक साधारण-सी घटना थी। माँसाहारी बन्दियों को तो उसे खाने में उतनी कठिनाई नहीं होती होगी; लेकिन निरामिष भोजन करने वालों के लिए तो उसे निगलना एक पहाड़ ही मालूम होता होगा ! भोजन में कीड़ों के अलावा कंकड़ भी भरे रहते थे। बालू के छोटे-छोटे कण तो इस प्रकार मिले होते थे जैसे दाल में नमक मिल जाता है। मन मसोसकर उसी भोजन को खाना पड़ता था। एकाध दिन की बात होती तो लोग किसी प्रकार इसे सहन भी कर सकते थे। यहाँ तो उसी भोजन पर जेल-जीवन निर्भर करता था और अपने स्वास्थ्य को भी बनाए रखना पड़ता था, जल में पंकज की तरह कोई उससे विलग कैसे हो सकता था ! भोजन करने के बाद एक समस्या

और भी उत्पन्न हो जाती। भोजन करने के पश्चात् जब लोग 'हौज' पर अपनी-अपनी थाली और जूठे मुँह धोने के लिए जाते तो, वहाँ प्रतिदिन थालियाँ बजानी होतीं। क्योंकि अक्सर लोगों को बारह बजे के बाद ही भोजन करने को दिया जाता और उस काल तक 'हौज' पर नल बन्द हो जाते। इस प्रकार जूठी थालियों और जूठे मुँह एक साथ एक हौज पर सैकड़ों की संख्या में जमा होकर नारे लगाते और जोर-जोर से थालियों को बजाते जिससे जेल कर्मचारी द्रवीभूत होकर पानी दे सकें। कभी-कभी इस काण्ड से क्रोधित होकर पागल भी हो जाते और लोगों को बुरी तरह लाठियों की मार सहनी पड़ती। कपड़े की सफाई, स्नान और शौच के लिए भी यथेष्ट पानी नहीं दिया जाता। पानी के अभाव में लोग एक दूसरे पर इस तरह टूट पड़ते जैसे फासिस्टों पर समाजवादियों का आक्रमण हो जाता है। उस समय बीच-बचाव करने की भी किसी की हिम्मत नहीं हो सकती थी। कपड़े धोने के लिए साबुन तो मिलता परन्तु शरीर में फोड़े, खुजली, दाद इत्यादि चर्म रोग होने पर उसकी सफाई के लिए साबुन किसी को नहीं मिलता। वस्त्र भी काफी नहीं मिल पाते, एक तो 'सी' श्रेणी के बंदियों को यों ही बहुत कम कपड़े मिलते हैं और छः महीने के बाद हरेक बन्दी को न्यायतः नये कपड़े प्राप्त करने का कानूनन अधिकार है; फिर भी जेल के प्रधान सुपरिण्टेण्डेण्ट फूलर साहब और उनके सहायक पोखर साहब लोगों को एक वर्ष तक कपड़े नहीं देते थे। सिर्फ दो पैंट, एक फुल पैंट और एक अंगोछी, तथा दो कुर्त्तों से काम चलाना पड़ता था। जाड़े में और गर्मी में भी वही कपड़े होते थे। कुछ लोगों को कपड़ों की दिक्कत इस तरह की हो गई थी कि उन्हें लाचार होकर नंगे, गुमटी पर प्रदर्शन भी करना पड़ा। इस पर उस व्यक्ति को पीटा गया और तनहाई में डाल दिया गया। तीन महीने पर एक कार्ड वे लिख सकते थे और एक कार्ड अपने सम्बन्धियों तथा मित्रों के पा सकते और एक बार अपने मुलाकातियों से मिल सकते थे। इसी प्रकार जो लोग छपरा, चम्पारन, मुजफ्फरपुर, पूर्णिया, भागलपुर, हजारी बाग, रांची, सिंहभूमि और मानभूमि से कंथें में साग-सत्तू लेकर अपने-अपने भाइयों से, पुत्रों से और मित्रों से मिलने आते थे, उन्हें भी बहुत तकलीफ होती। कभी-कभी छः महीने के लिए कार्ड और मुलाकात स्थगित कर दी जाती, जिसके परिणामस्वरूप दूर-दूर के जिलों से आये हुए गरीबों को मुफ्त की परेशानी उठानी पड़ती। इस तरह 'सी' श्रेणी के राजनैतिक बन्दियों को कण्टकाकीर्ण परिस्थिति से संघर्ष करना पड़ता।

लाठीचार्ज

लाठीचार्ज की गाथा भी बहुत ही कारुणिक और दयनीय है। एक तो अहिंसक बन्दियों को जंगली और बनैले पशुओं की तरह पीटना मानवता के साथ विद्रोह करना है। कोई भी सरकार इस तरह के अमानवीय कार्य आज भी अपने देश के राजबन्दियों के साथ नहीं कर सकती और न कर पाती है। फिर पवित्र त्यौहार के अवसर पर तो ऐसा करना

और भी घातक एवं पाप है। पटना कैम्प जेल में रविवार को 'लाठीचार्ज' होना नियम-सा हो गया। रविवार को लोग उपवास करते और एक समय जरा स्वाद और स्वास्थ्य को ठीक करने के लिए बिना नमक का भोजन करते। उस दिन का 'हलुवा' कैम्प जेल भर में विख्यात हो चुका था। वार्डरों की गिद्ध दृष्टि उस हुलवे पर जा बैठती थी। 'लाठीचार्ज' करने से बन्दियों को तो भूखा रहना पड़ता और वार्डरों को उसे 'स्वाहा' करने में सरलता और सुगमता हो जाती ! इधर 'लाठी' और उधर 'लूट' दोनों एक ही साथ। फिर तीन-चार बार तो इतनी निर्दयता के साथ लाठियाँ चली हैं, जिसके समकक्ष मानवता बेचारी सिसक-सिसककर सिर्फ रो भर सकती है। हमारे शरीर के रोएँ आज भी खड़े हो उठते हैं। उफ ! उतनी निर्दयता के साथ कहीं मानवता पर लाठियों की वर्षा हो सकती है ! एक बार ननकूसिंह नामक एक बन्दी को पटना कैम्प जेल से दूसरी जेल में भेजना था। बहुत दिनों तक पटना कैम्प जेल में रहने के कारण उन्होंने पटना कैम्प जेल को छोड़ना उचित नहीं समझा। इसलिए उन्हें बलपूर्वक अतिरिक्त सशस्त्र पुलिस बुलाकर पटना कैम्प जेल छोड़ने को बाध्य किया गया और उस दिन इतनी लाठी चली कि लोग उस अमानुषिक बर्ताव से खीझकर गोलियों से मरना अधिक श्रेयस्कर समझने लगे। हजारों की संख्या में दौड़े-दौड़े लोग फाटक की ओर चल पड़े, और अपनी-अपनी छाती खोल दी। उस दिन अत्याचार के प्रतिरोध में लोगों ने भोजन करना भी पाप समझा। दोबारा 26 जनवरी, 1943 को लाठियों की वर्षा हुई, जिसमें हिन्दी विद्यापीठ के सम्मानित अध्यापक पं० पंचानन मिश्र बुरी तरह पीटे गए। रात्रि में वार्ड में घुसकर बंदियों पर लाठियाँ चली हैं, होली के अवसर पर भी इसी तरह की लाठियाँ चली हैं, जिनका शिकार इन पंक्तियों के लेखक को भी होना पड़ा। अगर इस दिन 'दैनिक आज' के सहकारी सम्पादक हमारे पास आ गए होते तो हमारे तो प्राण ही निकल जाते। करीब-करीब उस रात्रि में दो सौ व्यक्ति पीटे गए और एक बार जब खाने में लोगों को चावल चार छँटाक दिया जाने लगा तो लोगों ने उसका एक स्वर से विरोध किया और कहा कि इतने कम चावल में हम लोगों का पूरा भोजन नहीं हो सकेगा। इसके लिए लाठी चली। उस दिन भी लोगों को इतना पीटा गया कि कसाई भी किसी पशु को उस बेरहमी के साथ नहीं पीट सकता।

बेंतों और जूतों का प्रहार

ऐसी भी घटनाएँ हुई हैं जिनमें फुलर साहब को और उनके अंगरक्षक को बेंतों और जूतों का प्रहार करना पड़ा है। पटना कैम्प जेल में जब जेल के अधिकारी से कुछ कहना होता था तब उसके लिए 'सप्ताह' में एक बार 'फाइल' लगाया जाता था जिसमें बन्दियों को जेल अधिकारी की प्रतिष्ठा के उद्देश्य से उठकर खड़ा हो जाना पड़ता था। नई दुनिया के दूसरे और चौथे वार्ड में जब फुलर साहब पहुँचे तो दो नम्बर के बच्चों ने खड़े होकर उनका सम्मान नहीं किया। फलतः फुलर साहब का पारा गर्म हो उठा और स्वयं उन्होंने

मासूम और सुकुमार बच्चों को बुरी तरह बेंतों से पीटा। चार नम्बर तो हमारा ही वार्ड था जिसमें श्री अवधबिहारीसिंह को इतना पीटा गया कि उनका शरीर छलनी हो गया, जिससे खून की अजस्र धारा प्रवाहित होने लगी और फुलर साहब के अंगरक्षकों ने चन्देश्वर नामक युवक को जूतों से पीटा। वह युवक हँसता रहा और वार्डर उसे पीटते रहे ! हमारी इच्छा हुई कि..... ! किन्तु फुलर साहब की बेंत पीठ पर ! रमण बाबू को भी बेंत या लाठी से बहुत पीटा गया। लातों और तमाचों का प्रयोग तो एक साधारण-सी घटना थी। आज अगर उन रोमांचकारी और हृदयविदारक घटनाओं की जाँच की जाए तो इसकी सत्यता आँकी जा सकती है। अगर इसमें थोड़ा भी असत्य का अंश मालूम पड़े तो मुझ पर मुकदमा चलाया जा सकता है और मुझे उचित सजा दी जा सकती है। हमारा दावा है कि इस तरह का पैशाचिक कुकर्म सिर्फ 'सी' श्रेणी के बन्दियों के साथ किया जाता है। क्यों नहीं आज कांग्रेसी सरकार ए० बी० और सी० श्रेणी का भेद उठा देती।

हाथ-पाँव बाँधना

मैंने ऐसे भी कुछ बन्दियों को देखा, जिनके पाँवों को पशु की तरह लोहे की छड़ों से बाँध दिया गया था जिससे चलने में, कपड़ा बदलने में, सोने के समय करवटें बदलने में असीम पीड़ा होती थी, बहुत कष्ट होता था। एक मोटे संन्यासी को जेल कर्मचारियों की निन्दा करने के कारण दो सप्ताह तक तनहाई में पाँव को लोहे की छड़ से बाँधकर छोड़ दिया गया था। पचासों बन्दियों के साथ ऐसा कुकर्म किया गया है।

काम करने पर ही किसी को अधिक भोजन मिलता था। जिन्हें पूरा भोजन करने को नहीं मिलता था, उन सबों ने पेट भरने के लिए 'मड़कंका घाट' का निर्माण कर लिया था, जहाँ लोग सिर्फ माँड पीते थे। गजाधर नामक किसान नेता ने प्रतिदिन अपने वार्ड के लिए दो बाल्टी माँड सुरक्षित रखना धर्म मान लिया था।

आज उन हृदयविदारक घटनाओं की याद आती है और अपनी सरकार की भी याद आ रही है। 1933 में जब अपनी सरकार नहीं थी सरलता के साथ रात्रि में जाकर अपने बीमार पड़े भाइयों की सेवा-सुश्रुषा कर पाते थे। दिन की कौन कहे, रात्रि में वार्ड खुले रहते थे। हर एक बन्दी पटना कैम्प जेल के चारों ओर चल-फिर सकता था। परन्तु 1942 की बात तो निराली थी। एक सेक्शन से दूसरे सेक्शन में जाने के लिए 'पासपोर्ट' की आवश्यकता थी। 1930 के निर्भीक सैनिक श्री शिवशंकर सहाय (अस्थामा, थाना पटना) सिर्फ फुलर साहब से एक कार्ड माँगने पर बेंत से पीटे गए। वे 26 जनवरी को भी लाठी चार्ज से बुरी तरह घायल हुए, जिसके परिणामस्वरूप बहुत दिनों तक अस्पताल में पड़े रहे।

बिहार प्रान्त की पटना कैम्प जेल में जैसी हृदयविदारक घटनाएँ गोरी सरकार के संकेत मात्र से घटी हैं, उनके स्मरण मात्र से प्रतिस्पर्द्धा की भावना से स्वतन्त्रता के मदमाते

सैनिकों का खून खौल उठता है। कितने 'यतीन्द्र दास' गोरी सरकार के पाशविक अत्याचार के कारण बनते जा रहे हैं; परन्तु जब कभी हमारी शक्ति कांग्रेसी सरकार बनने से कुछ मजबूत होती है तब हम उस ओर ध्यान नहीं देते। हम कभी नहीं सोचते कि हमारे सैनिकों को 'कल' फिर कारागार में रहना है। वार्डरों के साहचर्य में रहकर छोटी वस्तु के लिए चरण चुम्बन करना है। कितने बन्दी तो सरकार के निर्मम अत्याचारों के परिणामस्वरूप बिगड़ जाते हैं, जिन्हें हम जेल की भाषा में 'जुगाड़ी' कहते हैं। 'जुगाड़ी' बन्दी तो सिर्फ 'सी' श्रेणी में ही पाए जाते हैं, जिन्हें अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए घृणित-से-घृणित कर्म करने पड़ते हैं। इन 'जुगाड़ियों' की रामकहानी श्रवण करने से ऐसा ही आभास मालूम पड़ता है कि 'सी' श्रेणी के बन्दियों को सांस्कृतिक जीवन, नैतिक आचार और सौहार्द की हत्या करके ही जुगाड़ी बनना पड़ता है। जहाँ आज सभ्यता का विकास हो रहा है, मानवता की पूजा हो रही है, सांस्कृतिक जीवन को उठाया जा रहा है, वहाँ जेल में ऐसी हृदयविदारक घटनाएँ क्यों घटती हैं ? मानव को पशु बनाना ही क्या यहाँ की जेलों का उद्देश्य है ?

सियारामशरण का वर्णन

बिहार की जन-जागृति के कर्मठ सूत्रधार कार्यकर्त्ता श्री सियारामशरण ने अपने फरार जीवन के सम्बन्ध में पूछे जाने पर बहुत संकोच के साथ जो कुछ बतलाया, वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जिस समय श्री सियारामशरण ने चार वर्षों की कठिनाइयों का वर्णन किया, सभी लोगों की आँखों में अश्रुबिन्दु दिखलाई पड़े। आपने बतलाया—

एक ऐसा मौका भी आया था जब हम लोग किसी जगह पुलिस के घेरे में पड़कर 7 दिनों तक पकड़े गए जैसी अवस्था में रहे। एक मौके पर छः छटांक चावल के भात से 13 साथियों ने गुजर किया। चन्द दिनों तक कद्दू के कोमल पत्तों और डण्ठलों को उबालकर खाना पड़ा। शीत, घाम, हवा और वर्षा में भी हम लोगों ने यात्रा जारी रखी।

ऐसा भी मौका आया कि जब हमें 47 मील तक पैदल चलना पड़ा। वह भी एक दिन था जब 21 दिनों तक हमें पथ्य नहीं दिया गया था, मगर हमारे सरकस साथी ने हमारी हिफाजत की।

मेरी सहधर्मिणी सुश्री सरस्वती ने जिस प्रकार जंगल और पहाड़-पहाड़ भटककर मेरा साथ दिया वह भी सीताराम की तरह सियाराम की भी एक उदाहरण रखने योग्य कहानी है। एक दिन भी ऐसा नहीं था जबकि सरस्वती ने दुःखावेग में आँख गीली न की होगी। अपने लायक पति का सम्मान देखकर हर्षातिरेक में भी उसके नयन गीले हैं।

19

उड़ीसा का बलिदान

अगस्त-क्रान्ति के यज्ञ में उड़ीसा का बलिदान भी प्रमुख है। 9 अगस्त, सन् 1942 के बाद वहाँ के बालासौर जिले में पुलिस द्वारा गोलीकाण्ड हुए, जिनमें 42 व्यक्ति मरे और 270 व्यक्ति घायल हुए। कई गाँवों पर सामूहिक जुर्माना भी किया गया, जो उन गाँव वालों से जबरदस्ती लिया गया। पुलिस ने खुलकर नृशंसता का नाच किया। उत्कल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की रिपोर्ट में एक गोलीकाण्ड में 28 व्यक्ति मरे, 200 व्यक्ति घायल हुए और 125 व्यक्ति गिरफ्तार भी किये गए। वहाँ के दामनगर नामक स्थान में भी गोली चली, जिससे 8 व्यक्ति तुरन्त घटना-स्थल पर ही मर गए।

कोरापुर में दमन

कोरापुर गाँव में भी अनेक प्रकार के अत्याचार किये गए। अनेक कांग्रेस-जनों को नंगा करके उनके कपड़ों में आग लगा दी गई। कांग्रेस की बहुत-सी सम्पत्ति जब्त कर ली गई, जिसमें एक मोटर तथा 2000 रुपये नकद भी थे। वहाँ के समीप मैथलीगाँव नामक स्थान में सार्वजनिक सभा में भाषण देने के अभियोग में लक्ष्मण नामक एक व्यक्ति को गिरफ्तार कर लिया। जब जनता अपने नेता के पीछे-पीछे जाने लगी तो पुलिस ने अचानक खूब लाठियाँ और गोलियाँ चलाईं। फलस्वरूप 6 व्यक्ति तत्काल मर गए। लक्ष्मण नामक व्यक्ति पर भाले और संगीनों से वार किया गया। इस लाठीचार्ज में 4 वर्ष का एक बच्चा भी मरा था।

लक्ष्मण नामक व्यक्ति को फाँसी

उक्त लाठीचार्ज के समय जयपुर स्टेट के अधिकारियों का दल भी वहाँ उपस्थित था। उसने भी पुलिस की मदद की। इस घटना के 8-10 दिन बाद कलेक्टर तथा सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस ने इस गाँव को जला दिया। सेशन में लक्ष्मण नामक व्यक्ति तथा 53 अन्य व्यक्तियों पर एक जंगल के पहरेदार की हत्या करने का अभियोग चलाया गया। फलस्वरूप लक्ष्मण को फाँसी दे दी गई और अन्य व्यक्तियों को आजन्म कारावास की सजा मिली। 14 व्यक्ति रिहा कर दिये गए। लक्ष्मण नामक व्यक्ति को बरहामपुर जेल में फाँसी दे दी गई।

इसके अतिरिक्त वेल्सन कैम्प नामक जेल में 50 राजनीतिक बन्दियों की शोचनीय मृत्यु हुई। 250 कैदियों के लिए बनी हुई वेल्सन कैम्प जेल में अगस्त-आन्दोलन के दिनों में 700-800 राजबन्दी ठूँस दिये गए। आन्दोलन के समय 1970 व्यक्ति गिरफ्तार किये गए। ग्यारह व्यक्ति नजरबन्द किये गए तथा 560 को सजाएँ दी गईं। कुल 363 प्रदर्शन हुए। तीन सौ चौबीस लाठीचार्ज हुए। दो बार में 41 राउण्ड गोलियाँ चलाई गईं; फलस्वरूप 28 व्यक्ति मरे। ग्यारह हजार दो सौ रुपये सामूहिक जुर्माना किया गया, जिसमें से 963 रुपये ही वसूल किये गए। तीन व्यक्ति पेड़ पर उलटे लटका दिये गए और बेंतों तथा लाठियों से पीटे गए।

नीलगिरी और तालचर में भी

क्रान्ति की चिनगारी वहाँ के नीलगिरी, धनकानल और तालचर नामक राज्यों में पहुँची और वहाँ पर खूब ही रक्तपात हुआ। इन सभी स्थानों में इतने अत्याचार हुए कि नीलगिरी राज्य की कुछ जनता मयूरभंज नामक रियासत में जाकर रही। नीलगिरी में 75,904 रुपये; धनकानल में 50,000 रुपये, नयागढ़ में 8000 रुपये और तालचर में 95,000 रुपये तक जुर्माना हुआ जो जबरदस्ती वसूल किया गया। सम्पत्ति की लूट और जब्ती के कारण अनेक परिवार निराधार हो गए थे।

20

क्रान्तिदर्शी बंगाल

मिदनापुर दक्षिण-पूर्वी बंगाल का एक ऐसा जिला है, जिसका भारत के क्रान्तिकारी आन्दोलन के इतिहास में एक विशिष्ट स्थान है। बंगाल के सभी देशभक्तों ने समय-समय पर अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए दमन के कठोर अग्निपथ पर चलकर अपनी देशभक्ति का अनुपम परिचय दिया है। बंगाल सरकार 'अणुबम' से भी अधिक इस जिले से घबराती है। सन् 1942 की अगस्त-क्रान्ति में भी यह जिला सबसे आगे रहा। क्रान्ति की लपटों से सारा जिला झुलस गया। बंगाल सरकार का निरंकुश शासन डोल उठा, वह काँप उठी। परिणामस्वरूप इस जिले में खूँख्वारों का राज्य स्थापित हो गया। न्याय और व्यवस्था के नाम पर लूट, बलात्कार, खूँरेजी और अन्य पैशाचिक काण्डों का बोलबाला हो गया। इस जिले के तामलुक, कोन्ताई आदि सब डिविजनों में ऐसे जुल्म-अत्याचार हुए जो किसी भी सभ्य कहलाने वाली सरकार को लज्जित करने वाले हैं।

पिछले दिनों देशपूज्य महात्मा गांधी ने बंगाल में एक महीने से भी अधिक रहकर सारे प्रान्त का दौरा किया और जनता के दु:ख-दर्द की कहानियाँ सुनीं। महात्मा जी मिदनापुर जिले में भी गए, और वहाँ के लोगों के दु:ख-दर्द को भी सुना। 1942 की क्रान्ति के समय मिदनापुर जिले के कोन्ताई डिवीजन में क्या-क्या पैशाचिक कार्य हुए, उन्हें वह सब बतलाया गया।

कोन्ताई सब डिवीजन मिदनापुर से कोई 5 मील दूर है। सन् 1942 के अगस्त में जब बम्बई में सब नेता गिरफ्तार कर लिये गए तो कुछ काल तक विद्रोह जैसी कोई चीज वहाँ नहीं हुई। यहाँ शान्ति थी, परन्तु यह शान्ति तूफान आने के पूर्व की शान्ति थी। 29 सितम्बर को सारे सब डिवीजन में एक साथ विद्रोह की आग विविध कार्यों के रूप में भड़क उठी। पुलिस-थानों, डाकघरों, स्कूलों, सरकारी भवनों में आग लगाई गई, तार काटे गए, सरकारी यातायात के साधन नष्ट किये गए। इस विद्रोह को देखकर सरकारी अधिकारी आपे से बाहर हो गए। उन्होंने गाँवों में आग लगाने, उन्हें लूटने, स्त्रियों को अपमानित करने, लोगों को तरह-तरह से सताने, उन पर गोलियाँ चलाने की पूरी स्वतन्त्रता दे दी। इस घटना के बाद ही वहाँ गोरों का तूफान और बाढ़ का प्रकोप हुआ। जनता को एक साथ सरकार और प्रकृति का कोप-भाजन बनना पड़ा।

8 अगस्त से पूर्व

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के बम्बई वाले अधिवेशन से पूर्व 6 अगस्त, 1942 को कोन्ताई में 'कोन्ताई सब-डिवीजन' कांग्रेस कमेटी की एक बैठक हुई थी और 7 अगस्त को कांग्रेस-कार्यकर्त्ता विविध स्थानों में घूम-घूमकर कांग्रेस कार्यसमिति के प्रस्तावों के अन्दर व्यक्त किये गए विचारों का प्रचार करने लगे। महात्मा गांधी तथा देश के अन्य नेताओं की गिरफ्तारी का समाचार कार्यकत्ताओं को ज्यों ही मालूम हुआ उसके प्रतिवादस्वरूप 14 अगस्त को पतासपुर, भगवानपुर तथा खेजुरी थानों में आम हड़ताल मनाई गई।

सभाएँ तथा जुलूस

स्वतन्त्रता की भावना को जागृत करने और जनता में उत्साह भरने के उद्देश्य से सब डिवीजन की सभी बस्तियों में सैकड़ों सभाएँ की गईं और अनेक जुलूस निकाले गए। लगभग 8 हजार व्यक्तियों ने आजादी की लड़ाई के लिए स्वयंसेवकों में अपने नाम लिखाए और बहुत से थानों को संगठित करने के लिए संग्राम-शिविर खोले गए। कम से कम एक शिविर में 100 व्यक्ति होते थे। दिन-प्रतिदिन यह संगठन इतना दृढ़ होता गया कि सब-डिवीजन के सभी गाँवों में आन्दोलन की आग फैल गई और सभी उत्साहपूर्वक इसमें भाग लेने लगे। 14 सितम्बर को सब-डिवीजन के सभी क्षेत्रों की जनता ने 10 हजार की संख्या में 27 जुलूसों के रूप में वहाँ की 8 सड़कों पर नारे लगाते हुए कोन्ताई शहर में प्रवेश किया। सम्पूर्ण सब-डिवीजन में उत्साह की एक लहर दौड़ गई। अफसरों के बायकाट, चौकीदारों के इस्तीफा देने आदि का कार्यक्रम जोरों से चला। स्थान-स्थान पर पिकेटिंग व हड़तालें हुईं जिसके परिणामस्वरूप 20 सितम्बर को पिछवनी में 11 स्वयं-सेवकों को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया।

भीषण गोलीकाण्ड और दमन

इस घटना के उपरान्त संग्राम-शिविर को पुलिस की बर्बरता से बचाने के लिए कोन्ताई शहर से दूर महिषागेट की सड़क को काट डाला गया। इससे उत्तेजित होकर एस० डी० ओ० और डी० एस० पी० ने हथियारबन्द पुलिस के साथ समस्त समीपवर्ती ग्रामों को घेर लिया और लोगों को जबरदस्ती सड़क ठीक करने को विवश किया। पुलिस की नृशंसता से बचने के लिए कुछ महिलाओं ने अपने-अपने घरों के दरवाजे बन्द कर लिए। पुलिस उनके दरवाजों को जबरदस्ती तोड़कर उनके घरों में घुस गई।

इसी बीच सब-डिवीजन के प्रधान कार्यालय से फौज आई। उससे पूर्व पुलिस थी ही। अपने साथ हथियारबन्द पुलिस और फौज को देखकर एस० डी० ओ० जनता की ओर बढ़े और लाठीचार्ज शुरू हुआ। निरीह जनता ने भी विवश होकर ईंटें और रोड़े बरसाए। इस पर पुलिस ने 35 राउण्ड गोलियाँ चलाईं। पुलिस ने कांग्रेस-भवन को जला दिया और स्वयंसेवक-शिविर पर धावा बोलकर उसे नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। भगवानपुर, एगरा और

भापतगढ़ आदि स्थानों में निरीह जनता को गोलियों से खूब भूना गया और सरकार ने ऐसा भीषण दमनचक्र चलाया कि वह अभूतपूर्व था। समस्त सब-डिवीजन पर सैनिक-शासन हो गया और समस्त डिवीजन में कर्फ्यू आर्डर लगाकर एक स्थान पर 4 आदमियों के एकत्र होने, लाठी अथवा लोहे का सामान लेकर चलने और धार्मिक कृत्यों के अवसर को छोड़कर शंख बजाने पर भी सर्वथा प्रतिबन्ध लगा दिया।

गिरफ्तारी और नज़रबन्दी

इस आन्दोलन के सिलसिले में वहाँ से लगभग 12,600 व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया और उन्हें नाना प्रकार की यातनाएँ दी गईं। अनेक प्रभावशाली कार्यकर्त्ता गिरफ्तार कर नजरबन्द कर लिये गए। बहुतों को तरह-तरह के अपराधों में मुकदमा चलाकर जेलों में ठूँस दिया गया।

घृणित और जघन्य कार्य

जनता के मस्तिष्क में क्रान्ति की जो ज्वाला सुलग रही थी, उसको बुझाने के लिए सरकार ने अपने प्रयत्न जारी रखे। आन्दोलन के समय और उसके बाद भी जनता को अनेक प्रकार से अपमानित किया। ऐसे एक नहीं अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं। किन्तु एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा। खेजुरी थाने में ध्वंसात्मक कार्य समाप्त हो जाने के बाद स्पेशल अफसर ने उस इलाके के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को बुलाकर चौकीदारी टैक्स देने के लिए कहा और जब वे सब थाने की चारदीवारी में आ गए तो उन्हें सशस्त्र पुलिस ने घेर लिया और उन्हें छाती के बल जमीन पर नाक रगड़ते हुए चलने के लिए विवश किया। घूँसे तथा कोड़े से पीटने की तथा तरह-तरह की चोट पहुँचाने की तो धूम मची थी। स्त्रियों के साथ बलात्कार किया गया। इस जघन्यता की पराकाष्ठा यहाँ तक पहुँच गई थी कि एक 19 दिन के बच्चे की माँ के साथ भी वे बलात्कार करने से न चूके। कई स्त्रियों के इन्कार करने पर उनकी पीठ में छुरा तक घोंप दिया गया।

स्वतन्त्र सत्ता

बहुत दिन तक दमन और आन्दोलन चलने के उपरान्त जनता की एक स्वतन्त्र सत्ता स्थापित हो गई। संग्राम-शिविरों के योग्य व्यक्ति बहुत दिन तक आन्दोलन चलाते रहे। परन्तु पीछे चलकर जब सरकारी संस्थाएँ आंशिक या पूर्ण रूप से नष्ट कर दी गईं, तो बहुत से स्थानों पर विभिन्न नामों से जनता की अपनी सरकार की स्थापना हो गई। पतासपुर और खेजुरी थानों में पुलिस अधिकारियों का नाम तक न था। रामनगर और भगवानपुर थाने में भी अपनी ही सरकार कायम हो गई थी।

प्रकृति का प्रकोप

अगस्त के उपद्रवों में सरकार ने तो जनता पर अनेक अत्याचार किए ही थे, उसके बाद बाढ़ के प्रकोप से मिदनापुर और कोन्ताई के क्षेत्र बचे न रह सके। इससे उनके कार्य

में भयंकर बाधा पहुँची। कोन्ताई सब-डिवीजन के 82 यूनियनों में से 67 की रिपोर्टों से ज्ञात हुआ है कि बाढ़ और तूफान से इस क्षेत्र में 12,139 पशु मरे। मृतकों की लाशों से पानी गन्दा हो गया और परिणामस्वरूप अनेक संक्रामक रोगों ने बंगाल की शस्य-श्यामला भूमि को शमशान-जैसा भयंकर बना दिया। इस क्षेत्र में 1943 तक अकाल का प्रभाव रहा। मई और जून में स्थिति और भी भयंकर हो गई और जुलाई में बहुत से भूखे कोन्ताई पहुँचे। वे सड़क के किनारे पड़े-पड़े मर गए। उनके रहने के लिए कोई मकान नहीं था। खुले मैदान में मूसलाधार वर्षा में भी रहते थे। कभी-कभी उन भूखों पर कुत्ते और गीदड़ आक्रमण क़र देते थे और उन्हें जीवित ही खा जाते थे। इस प्रकार से 67 यूनियनों में 65,575 व्यक्तियों की मृत्यु हुई। अकाल के कारण बहुत से आदमियों ने अपने जेवर, जमीन और यहाँ तक कि खाने-पीने के बर्तन तक बेच दिए। इस प्रकार वहाँ की जनता, सरकारी दमन के अतिरिक्त बाढ़, तूफान और अकाल से जनित संक्रामक रोगों का भी शिकार हो गई। सरकार के पैशाचिकतापूर्ण दमन ने जनता की परेशानी को और भी बढ़ा दिया। यह तो केवल कोन्ताई सब-डिवीजन की ही बात है, बंगाल के दूसरे स्थानों के दमन तथा अत्याचारों की कथा तो इससे भी अधिक भयानक है।

बेलूर घाट के अत्याचार

उक्त स्थानों के अतिरिक्त बंगाल के बेलूर घाट नामक स्थान में क्रान्ति का जो नग्न ताण्डव हुआ, वह भी उल्लेखनीय है। कोई भी राष्ट्रप्रेमी इससे बचा न रह सका। अपने नेताओं की गिरफ्तारी का समाचार पाते ही समस्त क्षेत्र में विद्रोह का ज्वालामुखी फूट पड़ा और श्री सरोजरंजन चटर्जी ने जनता का नेतृत्व किया। साथ ही 14 सितम्बर को आन्दोलन का श्रीगणेश किया गया। श्री सरोजरंजन चटर्जी ने अपने भाषण में कहा कि सरकारी खजाने के पहरेदार तथा अफसर अपनी नौकरी छोड़कर जनता का साथ दें। इसके बाद सबट्रेजरी आफिस, पोस्ट आफिस, सिविल कोर्ट, कोआपरेटिव बैंक, बी० एन० रेलवे की आउट एजेन्सी; जूट इन्सपेक्टर का आफिस, गाँजे-शराब की दुकानों और यूनियन बोर्ड के आफिस पर हमला किया गया। थाने पर भीड़ का आक्रमण करने की खबर मिलते ही डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट सशस्त्र सैनिकों के साथ वहाँ आ धमके और भीड़ पर गोली चलाने का हुक्म दे दिया। 23 सितम्बर को आधी रात के समय पुलिस ने उस क्षेत्र के प्रसिद्ध कांग्रेसी श्री फूलचन्द मण्डल के मकान पर धावा बोल दिया और उनके कमरे के किवाड़ तोड़ डाले। कमरे में मण्डल जी अपनी पत्नी और बच्चों के साथ सोये हुए थे। पुलिस ने उनको बेइज्जत किया और घर की चीजों को लूटने लगे। इसकी खबर मिलते ही गाँव वालों का एक दल मण्डल जी के घर की ओर बढ़ा। पुलिस ने तुरन्त ही गोली चला दी और भीड़ में से 6-7 व्यक्तियों को पकड़ लिया गया। इसके बाद पुलिस ने कई स्थानों पर गोलियाँ चलाईं। कहते हैं कि इन दिनों पुलिस ने 66 बॉल-कार्टिज और 10 बकशौट का भी व्यवहार किया था। इनसे अनेक व्यक्ति हताहत हुए, जिनमें एक 70 वर्ष का बूढ़ा भी था। यह बूढ़ा और दो व्यक्ति तुरन्त घटनास्थल पर मर गए।

सभी जगह सत्याग्रहियों ने अनुशासन से काम लिया और वे अन्त तक अहिंसात्मक ही रहे। परीलाहार में जब पुलिस ने गोली चलाई तो वहाँ के कांग्रेसी नेता गोली का सामना करने के लिए जमीन पर शान्तिपूर्वक बैठ गए। भैलाकुरी में 70 वर्षीय वृद्ध मण्डल का नाम भारतीय स्वतन्त्रता-संग्राम के इतिहास में सोने के अक्षरों से लिखा जाएगा। सबसे पहले इसी बूढ़े ने हँसते-हँसते गोली का स्वागत किया और अपनी छाती पर उसका प्रहार सहकर सदा के लिए सो गया।

सारांशत: बंगाल और उसके विविध स्थानों में जो भीषण जन-आन्दोलन प्रारम्भ हुआ था, उसको सरकार सहसा ही अपने काबू में न कर सकी। जब वह उसके काबू से बाहर हो गया तो उसने ईस्टर्न फ्रण्टियर राईफल के अफसरों और फौज को बुलाया और मनमाना दमन किया। मोरा डाँगा नामक गाँव इस दमन का प्रमुख शिकार था।

मिदनापुर का विप्लव

मिदनापुर के दमन का प्रारम्भ 'वार बाँड' बेचने का निषेध करने से हुआ। बम्बई में अपने नेताओं की गिरफ्तारी से जनता विक्षुब्ध तो बैठी ही थी, 'वार बाँड' बलात् बेचने की घटना ने इसमें घी का काम किया। वहाँ के कार्यकर्त्ताओं ने खुल्लमखुल्ला इसका विरोध किया। नेताओं की गिरफ्तारियों पर हड़तालें की गईं तो उस अवसर पर दातीपुर में गोली चलाई गई। 29 अगस्त के दिन स्वतन्त्रता की घोषणा करती हुई भीड़ पर गोली चलाई गई। इन सब घटनाओं से ही जनता में रोष उत्पन्न हो गया और जनता में जागृति के चिह्न दिखाई देने लगे।

विप्लवी पत्र

यहाँ की जनता का जैसा संगठन था, वैसा अन्यत्र कहीं देखने में नहीं आया। विद्रोह का स्वर फूँकने के लिए वहाँ के प्रमुख कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं ने 'लीथो' मशीन पर 'विप्लवी' नामक एक नियमित समाचारपत्र निकालना प्रारम्भ किया। इसके अतिरिक्त सूताहार, महिषादल तथा नन्दीग्राम से भी ऐसे ही बुलेटिन प्रकाशित किये गए।

इस जागृति में पुरुषों के समान स्त्रियों ने भी बराबर भाग लिया और वे गोलियों के सामने निर्भीक खड़ी रहने से भी न चूकीं। स्थान-स्थान पर भयंकर प्रताड़ना और अपमान भी उन्हें सहने को मिले। वहाँ की एक वीरांगना मतांगिनी हाजरा ने एक विराट् जुलूस का नेतृत्व करके अपूर्व वीरता का परिचय दिया। तामलुक, पसकुरा और नन्दीग्राम में इन्हीं वीरांगनाओं की सहायता से पुरुषों ने अनेक संकटों पर विजय प्राप्त करके कार्य किया। तामलुक डिवीजन में 3 थानों पर एक ही दिन में आक्रमण हुए; अनेक सरकारी इमारतें ध्वस्त कर दी गईं। महिषापुर के कार्यकर्त्ताओं के इन कार्यों से यह भली प्रकार प्रकट होता था कि उनका यह कार्य पूर्व निश्चित योजनाओं के अनुसार ही हो रहा है। उनके पीछे गम्भीर चिन्तन एवं सन्देश आदि भेजने के उनके विचित्र ढंग थे। किसी बात को फैलाने तथा किसी गुप्त योजना को कार्यान्वित करने का उनका प्रचार विचित्रता लिये हुए था।

भयंकर अत्याचार

आन्दोलन से आतंकित सरकार ने विद्रोही जनता को दबाने के लिए काले और गोरे कई सौ सिपाहियों की फौज बाहर से बुलाकर रख ली थी। वे बस्तियों पर आक्रमण करने लगीं, लोगों के घर जलाने लगीं। इन्होंने ऐसे-ऐसे भयंकर अत्याचार किए कि जिनके सामने नाजियों की बर्बरता भी फीकी पड़ जाती थी। अनेक स्त्रियों, बच्चों और वृद्धों को इनकी बर्बरता का शिकार होना पड़ा। अनेक व्यक्तियों के गुप्तांगों में मिर्चें और लकड़ी तक डाली गईं। कई की उपस्थेन्द्रिय पर सोडा और चूना छिड़का गया। ऐसे एक नहीं अनेक अत्याचार वहाँ की जनता पर किये गए।

ताम्रलिप्त जातीय सरकार

कांग्रेसजनों ने सरकारी अत्याचारों के विरुद्ध अपना संगठन किया और उनका जोरदार विरोध करने के लिए एक 'ताम्रलिप्त सरकार' नामक अपनी स्वतन्त्र सरकार की स्थापना की। साथ ही यह भी निश्चित किया गया कि पीछे चलकर जब 'महान् भारत संघ' की स्थापना होगी तो यह सरकार उसमें सम्मिलित कर ली जाए। इसकी स्थापना 17 दिसम्बर, 1942 को हुई और इसकी शाखाएँ कई स्थानों पर खुलीं, जिन्होंने बहुत कार्य किया। अगस्त-क्रान्ति की महत्त्वपूर्ण लड़ाई में बंगाल के मिदनापुर जिले का प्रमुख हाथ है। यहाँ की जनता ने अनेक अत्याचारों का सामना करके भी अपने गौरव को नहीं भुलाया।

मुँह बोलते आँकड़े

वहाँ की पुलिस द्वारा किये गए अत्याचारों के कुछ मुँह बोलते आँकड़े इस प्रकार हैं:—

1.	गोलियों से मृत्यु	39
2.	गोलियों से घायल	175
3.	औरतों के साथ बलात्कार या बलात्कार करने की चेष्टा	228
4.	घर जलाये गए	965
5.	जलाये गए घरों की अनुमानत: क्षति	5,41,434 रुपये
6.	कैद किये गए	12,681
7.	सजा दी गई	672
8.	घर लूटे गए	2059
9.	लूट से क्षति	3,55,246 रुपये
10.	लाठियों के शिकार	6685
11.	सामूहिक जुर्माने किये गए	30,000 रुपये
12.	स्पेशल कांस्टेबल नियुक्त किये गए	438
13.	हिन्दू महिलाएँ, जिन्हें गुण्डों के हवाले कर दिया गया	10

21

आसाम भी क्रान्ति की लपटों में

नेताओं की गिरफ्तारी की खबर पाते ही आसाम के घर-घर में विद्रोह की तैयारी होनी प्रारम्भ हो गई। सबसे पूर्व थानों और सरकारी इमारतों की ओर जनता का ध्यान गया। समानान्तर सरकार स्थापित करने की भावना ने इसमें घी का काम किया और थानों तथा सरकारी इमारतों पर धावा बोल दिया गया। किन्तु सभी कार्यकर्त्ता इन आक्रमणों से पूर्ण अहिंसक रहे, और नौकरशाही ने इसका जवाब किर्चों और गोलियों से दिया। फलस्वरूप कितनी ही अमूल्य जानें नष्ट हुईं। एकदम निहत्थी और शान्तिपूर्ण जनता द्वारा दरांग जिले के ढेकिय़ाजुली, वेहाली, गोहपुर आदि थानों पर किये गए आक्रमण इतिहास में अमर रहेंगे। प्राय: ऐसा होता था कि मर्द-औरत, लड़के और लड़कियाँ कई-कई मीलों से जुलूस बनाकर आते। उनके हाथों में राष्ट्रीय झंडा रहता और नारे लगाते हुए वे थानों में घुसने की चेष्टा करते।

पुलिस राज्य

आसाम की पुलिस को इस बार खुलकर खेलने का मौका मिला। जनता को नाना प्रकार की यातनाएँ दी गईं। सभी कांग्रेसी नेताओं के जेल में चले जाने के कारण मुस्लिम लीगियों की बन आई और सर मुहम्मद सादुल्ला की अध्यक्षता में अधिकार प्राप्त करने का उन्हें अच्छा मौका मिल गया। परिणामस्वरूप 25 अगस्त, 1942 को आसाम में मुस्लिम लीग की ही सरकार हो गई और उसने ऐसे-ऐसे अत्याचार किए जो भारतीय इतिहास में काले अक्षरों में लिखे जाएँगे। कनकलता और तुलेश्वरी जैसी नौजवान लड़कियाँ उनकी स्वेच्छाचारिता के कारण बलिदान हुईं। 24 फरवरी, 1943 को जोरहाट जेल में भयंकर लाठीचार्ज किया गया, जिसमें लगभग 180 राजबन्दी बुरी तरह घायल हुए।

वीर कन्या कनकलता

20 सितम्बर, सन् 42 की घटना है। जनता गोहपुर नामक थाने की इमारत पर अपना झंडा फहराना चाहती थी। पुलिस ने भीड़ पर गोली चलाई। एक 13 वर्ष की लड़की तुरन्त वीरतापूर्वक आगे आई और उसने पुलिस को ललकार कर कहा कि, "मैं अपना कर्तव्य अवश्य पूरा करूँगी। तुम अपना करो !" और कलकलता झण्डा लेकर आगे गई। पुलिस

ने निर्दयतापूर्वक गोली चलाई और गोली कनकलता की छाती को वेधती हुई पार हो गई। वह वीरबाला फिर भी न रुकी और बढ़ती ही चली गई। पलक मारते ही दूसरी गोली आई और वह सदा के लिए सो गई। थाने की इमारत पर एक दूसरे नवयुवक ने चढ़कर झंडा फहरा दिया। पुलिस उस समय भयानक नरमेध करने में लगी हुई थी। ऐसी ही घटनाएँ ढेकियाजुली थाने में भी हुईं। कामरूप में 25 सितम्बर को हुई एक सार्वजनिक सभा में पुलिस ने निहत्थी जनता पर डटकर गोली चलाई। मासूम बच्चों और निर्दोष जनता के खून से निरंकुश नौकरशाही ने फाग खेला।

हवाई अड्डों पर हमला

जनता प्रतिशोध की भावना से पागल हो उठी थी। फलस्वरूप उसने मित्रों के हवाई अड्डों पर भी हमले किए। 26 अगस्त, 1942 को कामरूप जिले के सोरभग नामक हवाई अड्डे में हुई दुर्घटना इसी का उदाहरण है। यह आक्रमण जनता ने खुले आम किए और मिलिटरी के ठेकेदारों के इकट्ठे किये गए सभी सामान जला दिये गए। उस समय यह हवाई अड्डा बन ही रहा था।

वीर तिलक डेका

पुलिस और फौज ने अपनी बर्बरता के कारनामे खूब ही दिखलाए। नवगाँव जिले के बरापुजिया गाँव का रहने वाला शान्ति-सेना का नायक वीर तिलक डेका अपने गाँव में रात को पहरा देते हुए अन्यायपूर्वक गोली से उड़ा दिया गया। गाँव वालों ने अपनी रक्षा के लिए जो फौज बना रखी थी उसका नाम शान्ति-सेना था। पहरा देते हुए जब तिलक डेका ने मिलिटरी पुलिस को देखा तो खतरा समझकर उसने तुरही बजा दी। तुरही का बजाना था कि गोली उसकी खोपड़ी को चूर-चूर करती हुई दूसरी ओर निकल गई। तुरही और गोली की आवाजों ने गाँव वालों को चौकन्ना कर दिया और सब अपने-अपने शस्त्र सँभालकर सामना करने के लिए तैयार हो गए। औरतों ने पुरुषों से आगे आना ठीक समझा। कानून के ठेकेदारों ने फिर गोलियाँ चलाईं और पाँच-छः आदमियों को घायल कर दिया। रोहा और बरहमपुर में भी ऐसी ही घटनाएँ हुईं।

ऊपरी आसाम

आन्दोलन तीव्र होने के पहले ही ऊपरी आसाम के सभी नेता पकड़कर जेलों में ठूँस दिये गए थे। जोरहाट और शिवसागर सब-डिवीजनों में कोर्ट की इमारतों और सरकारी आफिसों के सामने बड़े-बड़े प्रदर्शन हुए, इन जिलों में आन्दोलनों ने नया रूप पकड़ा और जनता का ध्यान रचनात्मक कार्यों एवं ग्राम पंचायत स्थापित करने की ओर गया। चरीगाँव, इठीगढ़ और टेर्भार नामक स्थानों में स्वाधीन राष्ट्र स्थापित कर लिये गए। इससे नौकरशाही आतंकित हो उठी और लाठीचार्ज और गिरफ्तारियाँ एक आम बात हो गई।

विद्रोही कौशल कुँवर

विद्रोही कौशल कुँवर के उल्लेख के बिना आसाम के आन्दोलन की कथा अधूरी ही रह जाएगी। स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर न्यौच्छावर होने के लिए उसने हँसते-हँसते फाँसी का फन्दा चूम लिया और अन्त में उसके मुख से यही स्वर निकला, "पार करो दीनानाथ संसार-सागर।"

कमला मीरी

मीरी जाति के कमला मीरी का नाम भी आसाम की क्रान्ति में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। भारत की आजादी और अपने सिद्धान्त के लिए उसने अपने प्राण तिल-तिल कर घुला दिए। वह गोलाघाट जिला कांग्रेस कमेटी का एक मेम्बर था। उससे पुलिस ने यह आश्वासन लेना चाहा कि वह कांग्रेस में काम न करेगा। जिस पुण्य प्रदेश में कौशल कुँवर जैसा बलिदानी पुत्र पैदा हो सकता है, उसके नाम पर कमला मीरी भला कलंक कैसे लगाता। उसने सिंह की तरह हुंकार भरते हुए जेल की दीवारों को हिला देने वाली वाणी में कहा, "मैं यह यन्त्रणा अपने किसी स्वार्थ के लिए नहीं, बल्कि तुम्हारे और अपने सबके लिए सह रहा हूँ। फिर तुम मुझ पर आश्वासन देने के लिए क्यों जोर दे रहे हो।" इस तरह कमला मीरी जेल ही में घुट-घुटकर मर गया।

तीसरा भाग

विदेश में भी चिनगारी पहुँची

ले त्याग 'शिवा' का जीवन में
धर ध्यान 'भगत' बलिदानी का।
मानस में ले उल्लास अमर
उस 'जलियाँ' की कुरबानी का॥

'आष्टी', 'चिमूर' की गलियों औ'
'बलिया' की विकट कहानी का।
है याद अमर इतिहास हमें
'रावी', 'सतलज' के पानी का॥

ले शौर्य अतुल 'नेताजी' का
जग-जीवन से मुँह मोड़ चलें।
'जय हिन्द' हमारा नारा है
हम लाल किले की ओर चलें॥

1

स्वतन्त्रता की अमर झाँकी : आजाद सरकार

भारतीय स्वाधीनता के लिए किये गए अनेक प्रयत्नों में 'आजाद हिन्द फौज' का नाम विशेष उल्लेखनीय है। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस द्वारा संस्थापित 'आजाद हिन्द सरकार' के अन्तर्गत भारत को विदेशी दासता से मुक्ति दिलाने के लिए ही, 4 जुलाई, 1943 को इसकी स्थापना की गई थी। नेताजी ने 'आजाद हिन्द फौज' की स्थापना के द्वारा अपने जिस स्वप्न को साकार किया था उसकी आधारशिला उन्होंने 1857 की क्रान्ति के अमर उन्नायक बहादुरशाह जफर के उन अमर अरमानों की पूर्ति के लिए रखी थी जिन्हें वह अपने जीवन की अन्तिम घड़ियों में अपने बेकस मानस में सँजोकर इस फानी दुनिया से विदा हुआ था।

व्यक्ति चाहे मर जाए उसकी भावनाएँ तथा आदर्श कभी नहीं मरा करते। उसी रंगून में जहाँ 1857 ई० की क्रान्ति के जनक बहादुरशाह जफर को दफनाया गया था, लगभग एक शताब्दी बाद उसकी कब्र से विद्रोह के वे कण जिन्दा होकर उठ खड़े हुए और वहीं से 1857 से भी बड़ी क्रान्ति के आन्दोलन का सूत्रपात हुआ। अगस्त-क्रान्ति (1942 का आन्दोलन) से लगभग डेढ़ वर्ष पूर्व जब 26 जनवरी, 1941 को नेताजी सुभाष अचानक घर से गायब हो गए थे, और वेश बदलकर वे अफगानिस्तान के रास्ते से विदेश चले गए थे उसका फलितार्थ हमें आगे चलकर 'आजाद हिन्द फौज' के रूप में देखने को मिला।

इतिहास और कार्य

जापान से लड़ाई शुरू होने से पहले ही पूर्वी द्वीप जापान और चीन के भारतीय, भारत की स्वतन्त्रता के लिए निरन्तर प्रचार किया करते थे। जापान में उन दिनों महान् क्रान्तिकारी स्व० रासबिहारी बोस की अध्यक्षता में 'इण्डियन इण्डिपेण्डेन्स लीग' नामक संस्था की स्थापना भी हो चुकी थी और इसी संस्था ने प्रवासी भारतीयों को संगठित करके भारत की स्वतन्त्रता का मार्ग ढूँढ़ निकाला था। श्री आनन्दमोहन सहाय भी श्री रासबिहारी बोस से मिल गए। श्री सहाय किसी समय डा० राजेन्द्रप्रसाद के प्राइवेट सेकेट्ररी रह चुके थे। श्री सहाय के कारण इस कार्य को एक नया बल मिला। उन्होंने चीन में भी 'इण्डियन

नेशनल कांग्रेस' की स्थापना की थी। स्याम में स्व० सत्यानन्द पुरी ने 'भारतीय राष्ट्रीय संस्था' स्थापित की थी। इन सब संस्थाओं ने विदेशों में भारत की स्वतन्त्रता के लिए अत्यन्त जोरदार प्रचार किया। जापानी युद्ध के पूर्व ही प्रत्येक देश के अन्दर उनके प्रयत्नों से प्रवासी भारतीय आजादी प्राप्त करने के लिए संगठित हो चुके थे।

7 दिसम्बर, 1941 को जापान ने अकस्मात् ही आक्रमण कर दिया। मलाया हार गया और जापानियों का मुकाबला करने वाले भारतीय सैनिक भी हार गए। वे बहादुरी से लड़े। उनके पास पर्याप्त हथियार भी न थे, और न ऐसी सुविधाएँ थीं जिनके बल पर वे उसमें सफल होते। जब सिंगापुर का पतन हुआ तब लगभग 70,000 मनुष्य कैद कर लिये गए। इनके साथ कैसा व्यवहार किया गया, यह अभी तक रहस्य ही बना हुआ है। इन बन्दियों ने मलाया की भारतीय कांग्रेस की सदस्यता स्वीकार कर ली। उनके नेता देहरादून की मिलिटरी एकेडमी के स्नातक कैप्टन मोहनसिंह थे। उन्होंने ही सर्वप्रथम 'आजाद हिन्द फौज' का निर्माण किया और 'आजाद हिन्द आन्दोलन' के नेताओं की एक बैठक सन् 1942 में टोकियो में बुलाई गई। बैंकाक में दूसरा सम्मेलन किया गया और वहाँ आजादी की माँग करने वाली विभिन्न संस्थाएँ एक साथ ही मिला दी गईं। साथ ही यह भी निश्चय किया गया कि इस नव संगठित 'आजाद हिन्द लीग' की नीति और कार्यक्रम वही रहेंगे, जो 'भारतीय कांग्रेस' के हैं। साथ ही यह भी निश्चय किया गया कि भारत में एक स्वतन्त्र प्रजातन्त्रीय शासन की स्थापना की जाए और उसकी सम्पूर्ति के निमित्त 'आजाद हिन्द फौज' का संगठन किया जाए।

बैंकाक की इस कान्फ्रेंस में 'आजाद हिन्द लीग' का एक विधान बनाया गया। इस लीग में मलाया, वर्मा, स्याम, जापान, सुमात्रा आदि विभिन्न देशों की शाखाओं के प्रतिनिधि भी रखे गए। श्री रासबिहारी बोस की अध्यक्षता में सर्व० श्री के० जी० मेनन, एच० राघवन, कैप्टन मोहनसिंह तथा लैफ्टिनैण्ट कर्नल जी० यू० गिलानी आदि सदस्यों की एक कार्यकारिणी भी बनाई गई। इस कार्यकारिणी के हाथ में 'आजाद हिन्द फौज' का गठन करना था। कैप्टन मोहनसिंह के अनुशासन में सर्वप्रथम 700 भारतीयों की एक सेना संगठित हुई जो बाद में 'आजाद हिन्द फौज' के नाम से पुकारी गई। भारत की आजादी के लिए लड़ना ही इस फौज का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। इस फौज का प्रबन्ध करने वाली उक्त 'आजाद हिन्द लीग' का नाम आगे चलकर 'आजाद हिन्द सरकार' हो गया।

'आजाद हिन्द लीग' की रूपरेखा

निरन्तर कई महीनों तक कार्यरत रहने के उपरान्त 'आजाद हिन्द लीग' के अध्यक्ष श्री रासबिहारी बोस के नेतृत्व में जो तीन महत्त्वपूर्ण निर्णय किये गए वे इस प्रकार हैं—

1. भारत एक और अविभाज्य है।

2. 'इण्डियन इण्डिपेण्डैन्स लीग' की नीति राष्ट्रीय आधार पर हो, साम्प्रदायिक आधार पर नहीं।

3. 'इण्डियन इण्डिपैण्डेन्स लीग' के कार्य भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के घोषित उद्देश्यों के अनुरूप हों।

इन उद्देश्यों की सम्पूर्ति के लिए लीग ने निम्नांकित विभिन्न उपसमितियाँ बनाईं—

1. कौंसिल ऑफ एक्शन (कार्यकारिणी समिति),
2. प्रतिनिधि सभा,
3. प्रादेशिक कमेटियाँ,
4. स्थानीय शाखाएँ।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि बाद में श्री रासबिहारी बोस और कैप्टन मोहनसिंह में किसी बात पर मतभेद हो गया। श्री बोस जापानियों से बिगाड़ने के पक्ष में नहीं थे और भारतीय अफसर तथा अन्य नेता जापानियों के दल से असन्तुष्ट रहने लगे थे। जापान सरकार से आजाद हिन्द फौज की स्वतन्त्र सरकार घोषित करने के सम्बन्ध में बातचीत भी हुई, परन्तु उसने ऐसा करने से सर्वथा इन्कार कर दिया। इसी समय कर्नल गिल जापान सरकार द्वारा गिरफ्तार कर लिये गए। परिणामस्वरूप जापान सरकार के इस व्यवहार के प्रति और कटुता बढ़ गई और इस सम्बन्ध में रासबिहारी बोस तथा कैप्टन मोहनसिंह में काफी वाद-विवाद हुआ। फलतः 8 दिसम्बर, 1942 को 'आजाद हिन्द लीग' को विघटित कर दिया गया और कैप्टन मोहनसिंह तथा मि० इकबाल आदि गिरफ्तार कर लिये गए। दक्षिण पूर्वी एशिया में 'आजाद हिन्द फौज' की संख्या 1942 में लगभग एक लाख थी। इसका विशेष कारण यह है कि उस समय आजाद हिन्द फौज के सिपाहियों और अधिकारियों में लगन, उत्साह, कर्मनिष्ठा, अध्यवसाय, सन्तोष और सर्वोपरि देश-भक्ति आदि विशिष्ट गुण चरम सीमा पर थे और उनमें देश की स्वाधीनता के लिए कुछ भी कर गुजरने की क्षमता थी। बर्मा और मलाया में उन दिनों मजदूरों का धार्मिक स्तर इतना ऊँचा था कि मातृभूमि के लिए वे कुछ भी कैसी भी कुरबानी कर सकते थे। ऐसे मजदूरों की संख्या लगभग 15 हजार थी। इनमें भारतीय सेना के सैनिक, हिन्द-बर्मा-सीमा प्रान्त तथा अन्य भागों के नागरिक भी सम्मिलित थे।

सुभाष सिपहसालार बने

सुभाष बाबू जून 1943 में ही टोकियो आ गए थे। उनके वहाँ आते ही बहुत परिवर्तन हो गया था। 'आजाद हिन्द फौज' जापानियों की पिट्ठू सेना नहीं थी, वह तो भारत की स्वतन्त्रता के उद्देश्य से ही स्थापित की गई थी। उसने जापान द्वारा अधिकृत देशों में भारतीय नागरिकों की रक्षा का बहुत बड़ा काम किया। आजाद हिन्द फौज ने अपनी तत्परता और कुशलता से यह प्रमाणित कर दिया कि सारे भारतीय बिना किसी धर्म-भेद के शस्त्र हाथ में आते ही अपनी मातृभूति के लिए वीरतापूर्वक लड़ सकते हैं। 2 जुलाई, 1943 को नेताजी

सुभाष बोस यूरोप के देशों के युद्ध रंगमंच का सिंहावलोकन करने के उपरान्त जापान होते हुए सिंगापुर पहुँचे। वहाँ उनका बड़ा भारी स्वागत किया गया। मानव-समूह उमड़ा पड़ रहा था। मलाया निवासी भारतीय, चीनी और जापानी नर-नारी, बालक और वृद्ध भारी संख्या में उपस्थित थे। उनके स्वागत के लिए जो सभा आयोजित की गई थी, उसमें फूल-मालाओं से सुसज्जित महात्मा गांधी का बहुत बड़ा चित्र रखा हुआ था। चारों ओर तिरंगे झंडे फहरा रहे थे। सुभाष बाबू ने पहले ही यह स्पष्ट कर दिया था कि हम केवल ब्रिटिश साम्राज्य के ही विरुद्ध नहीं लड़ रहे हैं, प्रत्युत हमें तो जापानी साम्राज्यवाद तथा स्वदेशी पंचम कालम वालों से भी सावधान रहना चाहिए। 3 जुलाई को सुभाष बाबू ने हांगकांग और बर्मा से आए हुए आजाद हिन्द फौज के नेताओं से विचार-विमर्श किया।

इसके बाद 4 जुलाई को एक विशाल जन-समूह के सामने 'आजाद हिन्द लीग' के अध्यक्ष श्री रासबिहारी बोस ने सर्वसम्मति से लीग का सारा भार नेताजी सुभाष को सौंप दिया। उस समय अध्यक्ष पद से बोलते हुए सुभाष बाबू ने कहा था-"हमें इस बात की चिंता नहीं कि आजाद हिन्द को देखने के लिए हममें से कौन बचा रहेगा। पर यही क्या कम है कि हम अपना सर्वस्व देश के लिए बलिदान करने का अवसर पाएँगे।"

आजाद हिन्द फौज का संगठन

इसी अवसर पर प्रारम्भिक आजाद हिन्द फौज के संगठन की घोषणा भी सुभाष बाबू ने 5 जुलाई, 1942 को विधिवत् कर दी। सिंगापुर के टाउन हॉल के सामने हुई आजाद हिन्द फौज की पहली परेड के समक्ष उसके पहले सिपहसालार सुभाष बोस ने अपने सिपाहियों को सम्बोधित करते हुए यह कहा था—

"आज का दिन मेरे जीवन में सबसे अधिक महत्त्व का है, आज भगवान ने प्रसन्न होकर संसार के सामने यह घोषित करने का अनुपम अवसर और सम्मान मुझको दिया है कि अब भारत की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने वाली फौज का निर्माण हो गया है। जो सिंगापुर किसी समय ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा का गढ़ था, उसी सिंगापुर में फौज तैयार हुई है। यह गर्व का विषय है कि इसका संगठन एक विशुद्ध भारतीय नेतृत्व में किया गया है और यह भारतीय नेताओं की छत्रछाया में ही भारत की ओर कूच करेगी। पुरानी दिल्ली के लाल किले में ब्रिटिश साम्राज्य की कब्र पर विजय-परेड करना ही हमारा अन्तिम लक्ष्य है, 'जार्ज वाशिंगटन' को अमरीका में और 'गेरीबाल्डी' को इटली में इसलिए सफलता मिल सकी थी कि उनके पास अपनी फौज थी। हिन्दुस्तान की भी आज अपनी सेना तैयार हो गई है। मैं अँधेरे में या प्रकाश में, दुःख में या सुख में, पराजय में या विजय में सदा तुम्हारे साथ रहूँगा। ईश्वर की हम पर कृपा हो और आजादी के युद्ध में हमें विजय प्राप्त हो।"

इससे अगले दिन जापान के प्रधानमन्त्री तोजो 6 जुलाई को शोनान आए और उन्होंने

सुभाष बाबू के साथ आजाद हिन्द फौज की सलामी ली। वहाँ पर नेताजी और दूसरे जनरल लोगों का एक साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलना, एक ऐसा दृश्य था, जो वहाँ पर उपस्थित भारतीयों के हृदय पर अपनी एक अमिट छाप छोड़ रहा था। चारों ओर भारतीय राष्ट्रीय ध्वज फहरा रहा था। पूरे डेढ़ घण्टे तक जनरल तोजो आजाद हिन्द फौज की परेड देखते और नमस्कार ग्रहण करते रहे। 9 जुलाई को पहांग में म्युनिसिपल आफिस के सामने उससे भी बड़ा एक सैनिक प्रदर्शन हुआ था। उस प्रदर्शन में एक लाख से भी अधिक दर्शक इकट्ठे हुए थे। इससे पूर्व जनता में इतना उत्साह कभी भी देखने में नहीं आया था। भाषणों की अपेक्षा अपने व्यवहार से भी सुभाष बाबू ने एक सप्ताह में ही सबके हृदय में एक विशेष स्थान बना लिया था। छोटे-बड़े, स्त्री-पुरुष, बाल-बच्चे सभी यह समझते थे कि नेताजी उनके अपने हैं, बड़ी-से-बड़ी भीड़ में भी वे कभी भी उत्तेजित नहीं होते थे। उनके दर्शनों के लिए अथवा पैर छूने के लिए लब लोग धक्कामुक्की करके उन्हें भी धकेल देते थे तब भी वे हँसते रहते थे।

तुला-दान

आजाद हिन्द फौज की कमान अपने हाथों में लेते हुए सुभाष बाबू ने जनता से 30 लाख सिपाहियों और 3 करोड़ रुपये की जो माँग की थी, उसका कार्य भी सुचारु रूप से आरम्भ हो गया। दस करोड़ रुपया ब्रात ही बात में इकट्ठा हो गया और कार्य भी भलीभाँति चलने लगा। एक स्वतन्त्र देश की भाँति सैनिक शिक्षा के अनेक केन्द्र खुल गए। जनता के जन तथा धन की रक्षा का पूरा प्रबन्ध किया गया। आपस में किसी प्रकार की साम्प्रदायिकता, या फूट नहीं रही। सब एकता के सूत्र में बँध गए। सबका एक ही लक्ष्य भारत की आजादी था, क्योंकि वे सब आजाद वातावरण में साँस लेते थे और भारत की गुलामी की कल्पना मात्र उनके मस्तिष्क में हलचल मचा देती थी। वे व्याकुल हो उठते थे। तभी तो वे नेताजी के संकेत पर अपने प्राणों तक की बाजी लगाने को तैयार रहते थे।

आजाद हिन्द फौज की स्थापना की पहली वर्षगाँठ 4 जुलाई, 1943 को मनाने का निश्चय हुआ। 4 जुलाई को नेताजी का जन्म दिन भी था। जनता ने यह निश्चय किया कि नेताजी को सोने-जवाहरतों से तोला जाए। सिंगापुर की हिन्दुस्तानी बस्तियों में उल्लास फूट रहा था। प्रभात की परेड से लौटकर आजाद हिन्द फौज के सैनिकों ने अपनी पत्नियो को बताया—आज नेताजी का तुला-दान होगा। परिणामस्वरूप सुबह से ही वातावरण में एक नया जीवन दिखाई देने लगा। एक ओर जहाँ पंजाबी महिलाओं ने पोशाकें बदलीं और गोल घेरे में बैठकर मंगल-गीत गाए, वहाँ गुजराती बहनों ने जूड़ों में वन-फूल खौंस 'गर्वा' नृत्य की तैयारी की। मराठी देवियाँ भी मोरपंखी एकतारे को सँभालकर, सन्त तुकाराम के भजन गाने मे तल्लीन थीं। सारांशत: हर एक भाई-बहन के धड़कते हुए वक्ष से सदा एक ही दुआ उठ रही थी—"नेताजी चिरंजीवी हों, हमारी जन्मभूमि आजाद हो"। ऐसे ही

वातावरण में 'तुला-दान' कार्य प्रारम्भ हुआ। मलाया के एक बंगाली परिवार की किशोरियों ने मंगल-शंख बजाए और एक वृद्ध गुजराती महिला ने आकर तराजू पर अपने जीवनभर की सम्पत्ति सोने की 5 ईंटें रख दीं। इसके बाद एक-एक करके सोने के भरपूर-भार से पलड़ा भरने लगा। आभूषण, सोने की मूर्तियाँ, फूलदान, सिक्के किसी की कमी न थी । जीवन के 10-12 बसन्तों ही की पुलक का अनुभव करने वाली कुमारियाँ, प्रणय की लज्जा में लिपटी हुई नववधुएँ, श्वेत केश वाली स्वर्ग की छाया में पलने वाली जर्जर वृद्धाएँ भी स्वतन्त्रता की वेदी पर अपनी भेंट चढ़ा रही थीं। पलड़ा भर गया था, परन्तु वजन अभी पूरा नहीं हुआ था। शंख बज रहे थे। बाहर जनता 'इन्कलाब जिन्दाबाद', 'नेताजी चिरजीवी हों', के नारे लगा रही थी।

"अभी और स्वर्ण की आवश्यकता है।" पास खड़े हुए एक सैनिक ने कहा। फलस्वरूप आसपास खड़ी हुई स्त्रियों ने अपने-अपने कानों के कुण्डल और हाथों की अँगूठियाँ उतारकर चढ़ानी प्रारम्भ कर दीं। पास ही खड़ी हुई एक महिला ने अपनी कलाई की सुनहरी 'रिस्टवाच' पलड़े पर रख दी। मगर पलड़ा अब भी न झुका।

इतने में कोने से कुछ सिसकियाँ सुनाई पड़ीं। 'झाँसी की रानी' रेजीमेण्ट की कमाण्डर लक्ष्मी स्वामीनाथन और उनकी दो सहायिकाएँ एक नववयस्का तरुणी को थामकर उधर ला रहीं थीं। उसका जूड़ा खुला हुआ था, आँखें गुड़हल के फूल की तरह लाल थीं और सूज गई थीं। सुभाष बाबू ने प्रश्नभरी दृष्टि से लक्ष्मी की ओर देखा, कल समाचार आया है कि इस बहन का पति मोर्चे पर शहीद हो गया। यह सुनकर सुभाष बाबू ने टोपी उतार ली। स्त्री आई, रोते हुए सुभाष बाबू को नमस्कार किया और उसके बाद सिन्दूर से पुता हुआ सौभाग्य-चिन्ह शीश-फूल पलड़े पर रख दिया। सभी के नेत्रों में आँसू छलछला आए। सुभाष बाबू ने कहा—"देवता भी तुम्हारी पद-रज लेने के लिए लालयित होंगे। बहन।"

इतने में एक जर्जर वृद्धा छाती से एक फोटो चिपकाए हुए आई और खड़ी हो गई। उसने चित्र उतारकर नीचे रख दिया। एक उभरा हुआ तरुण। चेहरे पर फूलों-जैसी सहज मुस्कानमयी कोमलता, आँखों में सपनों का जाल, प्रशस्त ललाट, और गर्दन में हिमालय-जैसा अभिमान। यह मेरे इकलौते बेटे का चित्र है, वृद्धा ने रुँधे हुए कण्ठ से कहा, "युद्ध से पूर्व ही सिंगापुर में अंग्रेजों ने इसे फाँसी पर चढ़ा दिया था। काश, विधाता ने मेरी कोख में एक दूसरा भी फूल दिया होता तो उसे भी मैं माँ के चरणों में चढ़ाकर कृतार्थ होती।"

वृद्धा ने चित्र पटक दिया और शीशा चूर-चूर हो गया। फोटो निकालकर उसने हाथ में ले लिया और सोने का चौखटा तराजू के पलड़े पर चढ़ा दिया।

तुला समतल हो गई। सुभाष बाबू काँपकर खड़े हो गए, "कौन कहता है भारत आजाद नहीं होगा। पुत्रहीन माँ का वरदान व्यर्थ नहीं जा सकता। माँ मुझे ही अपना दूसरा

पुत्र समझना।'' सुभाष ने झुककर उसके पैर छूते हुए कहा। तुला-दान पूरा हो गया था।

तुला-दान के समय सारी तरुणी महिलाएँ अपने इस दीवाने भाई की शोभाशाली मूर्ति को देखकर पुलकित हो उठीं। वृद्धाएँ भी इस दृश्य से मन-ही-मन गदगद हो गईं।

एक युवती ने पास खड़े हुए अपने सैनिक पति से आश्चर्यजनक यह प्रश्न ही जो कर दिया-''और इस अतुल धनराशि का क्या होगा ?''

''होगा क्या, इस सम्पत्ति का कण-कण आजादी के पावन मन्दिर की वेदी पर बिखेर दिया जाएगा। इसका कण-कण माता के चरणों पर समर्पित कर दिया जाएगा।'' सैनिक ने उत्तर दिया।

उसकी पत्नी की एक सखी जापानी महिला, जो यह दृश्य देखकर आश्चर्यचकित थी, बोली—''अच्छा, हिन्दुस्तानी ऐसा भी करते हैं। आश्चर्य का देश है भारत। हमारे यहाँ जब सम्राट् का तुला-दान होता है तो उसकी सारी सम्पत्ति उसके राजकोष में चली जाती है।''

''हाँ भारत में ऐसा ही होता है।''

जापानी महिला बोली—''मैंने इतिहास में पढ़ा था, देखो वह कौन-सा राजकुमार हुआ जो अतुल सम्पत्ति तथा युवती पत्नी को ठुकराकर मानवता के कल्याण के लिए घर से निकल गया था। देखो.....उसका.....नाम.....था बुद्ध.....गौतम बुद्ध।'' उसने आदर से सिर झुकाते हुए कहा, ''भारत की परम्परा ही ऐसी रही है।''

आजाद हिन्द फौज की गतिविधि

आजाद हिन्द फौज की विधिवत् स्थापना के बाद नेताजी ने यह घोषित किया था कि अपनी फौज का एक बड़ा हिस्सा सर्वप्रथम बर्मा भेजा जाएगा और वहाँ से वह भारत की ओर बढ़ेगा। आजाद हिन्द फौज की कमान को सँभालते हुए नेताजी ने जो वक्तव्य दिया था वह आज भी उनकी कर्त्तव्यनिष्ठा और अटूट देशभक्ति का उज्ज्वल प्रमाण हमारे सामने रखता है। उन्होंने कहा था—''जब हम खड़े होंगे, आजाद हिन्द फौज चट्टान की तरह खड़ी होगी और जब हम कूच करेंगे तो आजाद हिन्द फौज 'स्टीम रोलर' की तरह कूच करती रहेगी। हमारा यह कार्य सरल नहीं। युद्ध लम्बा और कठोर होगा, परन्तु अपने लक्ष्य की महत्ता पर हमें अखण्ड विश्वास है। 38 करोड़ मनुष्यों को, जो समूची मानव जाति का मंचकोश है, स्वाधीन होने का अधिकार है और अब वे स्वाधीनता का मूल्य चुकाने के लिए प्रस्तुत हैं, संसार में अब ऐसी कोई शक्ति नहीं है जो हमको हमारे जन्मसिद्ध अधिकार स्वाधीनता से वंचित कर सके।''

नेताजी के आह्वान पर 'आजाद हिन्द फौज' में भर्ती होने के लिए अनेक व्यक्ति स्वेच्छा से तैयार हो गए और उन्होंने निम्नलिखित प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर किए—

''मैं स्वेच्छा से आजाद हिन्द फौज में अपना नाम लिखा रहा हूँ। मैं हृदय से अपने-आपको भारत की भेंट कर रहा हूँ और प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं अपना जीवन भारत की स्वतन्त्रता के लिए अर्पित कर दूँगा। मौत के खतरे से भी मुझे क्यों न खेलना पड़े, भारत की सेवा, तथा भारतीय स्वातन्त्र्य-आन्दोलन में तन-मन-धन से सम्मिलित होने में कुछ भी उठा न रखूँगा और इसमें मैं किसी व्यक्तिगत लाभ की भी आशा नहीं रखूँगा। मैं प्रत्येक भारतीय को जाति व धर्म से ऊपर उठकर अपना भाई-बहन समझूँगा।''

आजाद हिन्द फौज के अफसर अपने-अपने पदों के अनुसार विभिन्न प्रकार के बिल्ले लगाते थे। अफसर और सैनिक अपनी छाती पर बायीं ओर तिरंगे झंडे का बैज लगाते थे, उनकी टोपियों पर 'आजाद हिन्द फौज' का पीतल का बैज रहता था, बैज पर भारत का मानचित्र और उस पर 'विश्वास, एकता तथा बलिदान' ये तीन शब्द खुदे रहते थे। कदम-कदम बढ़ाए जा, खुशी के गीत गाए जा' उनका सैनिक-गीत था, जो कोटि-कोटि कण्ठों की वाणी से फूटकर एक नया ही जीवन संचार करता था। फौज की ट्रेनिंग के लिए रंगून में केन्द्र थे। आजाद हिन्द फौज के एक सैनिक का वेतन 45 डालर था। भारतीय सिक्के के मुकाबले में उनका डेढ़ रुपया नियत किया गया था।

इस वेतन का सारा रुपया बर्मा, मलाया आदि देशों में बसे हुए प्रवासी भारतीयों के द्वारा चन्दे, अपीलों और नीलाम में आता था। कैप्टन शाहनवाज, सहगल और ढिल्लन के अतिरिक्त ब्रिटिश भारतीय सेना के अनेक अफसर इस फौज में आ मिले थे।

संगठन के प्रकार

अपने कार्य को सुचारु रूप से आगे बढ़ाने की दृष्टि से नेताजी ने अपनी फौज को निम्नलिखित 4 भागों में विभक्त किया था—

1. **सुभाष बिग्रेड**-कमाण्डर कर्नल शाहनवाजखाँ, 3200 सैनिक। मुख्यत: पठान, कुछ सिख और अन्य नागरिक।
2. **गांधी बिग्रेड**-कमाण्डर कर्नल रनायह कमानी, 2800 सैनिक।
3. **आजाद बिग्रेड**-कमाण्डर कर्नल गुलमारसिंह, 2800 सैनिक।
4. **नेहरू बिग्रेड**-कमाण्डर कर्नल गुरबख्शसिंह ढिल्लन, 3000 सैनिक।

'रानी झाँसी रेजीमेन्ट' के नाम से महिलाओं का एक अलग विभाग भी इसमें संगठित किया गया था, जिसकी कमाण्डर डाक्टर कुमारी लक्ष्मी स्वामीनाथन बनाई गई थीं। रेजीमेण्ट की सैनिकाएँ लम्बा पाजामा, लम्बी कमीज और रबड़ के जूते पहनती थीं। 12 जुलाई, 1942 को हुई इस रेजीमेंट की एक विशाल रेली में अपनी सैनिकाओं को सम्बोधित करते हुए नेताजी ने जो विचार प्रकट किए थे, हमें आज भी एक नई प्रेरणा देते से लगते हैं। उन्होंने कहा था—''जो लोग यह कहते हैं कि स्त्रियों को शस्त्र नहीं उठाने चाहिए, वे 1857 के स्वतन्त्रता-संग्राम में झाँसी की रानी द्वारा उठाई गई तलवार को कैसे भूल सकते हैं?

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के इस प्रचण्ड और अन्तिम संग्राम में हम एक नहीं, लाखों झाँसी की रानियाँ चाहते हैं। आप कितनी बन्दूकें उठाएँगी, और कितनी गोलियाँ चलाएँगी, यह बात उतनी बड़ी नहीं है। मुख्य बात तो आपके वीरतापूर्ण नैतिक कार्यों का नैतिक प्रभाव है।''

गांधी जयन्ती

2 अक्टूबर हमारे राष्ट्रीय जीवन की प्रगति में मील का पत्थर है। गांधीजी और उनका जीवन भारत की राजनीतिक चेतना का प्रतीक है। उस दिन सारा देश मानवता के अग्रदूत की वर्षगाँठ पर पुण्य पर्व मनाता है। भारत की सीमाओं के पार, ऊँचे, पर्वतों के बीच सुदूर पूर्व आजाद हिन्द फौज के पड़ावों में भी गांधी जयन्ती समारोहपूर्वक मनाई गई। खून का दान देकर आजादी का पुरस्कार पाने की आकांक्षा रखने वाले आज़ाद हिन्द फौज के दीवाने सैनिकों ने इस दिन घने जंगलों में सूनी घाटियों में दुर्गम पहाड़ों पर, घने नगरों में सभी जगह तिरंगा झंडा फहराया। उस दिन नेताजी सुभाष की अध्यक्षता में विशेष उत्सव मनाया गया। सूरज निकलने से पहले ही 'रानी झाँसी रेजीमेन्ट' की सैनिकाएँ शुभ वस्त्र धारण करके, अपनी-अपनी वेणियों में तिरंगे फूल खोंसकर प्रभात फेरी में वन्दना के गीत गाती हुई निकलीं। वन्दना के स्वर जब शून्य में जाकर विलीन हो गए तब परेड के मैदान से बिगुल की आवाज आई और सभी सैनिक अपनी-अपनी वर्दी पहनकर बन्दूकों पर किर्चे लगाकर परेड के मैदान की ओर चल पड़े। महिला फौज ने भी नगर का चक्कर पूरा करके मैदान में प्रवेश किया। मखमली पोशाक पहने बर्मा का विशेष बैंड एक ओर खड़ा था। आते हुए सूर्य की झीनी-झीनी किरणों की स्वर्णिम छाया में एक राजसी कार से एक बुशशर्ट, कैम्प, ब्रीचेज और बूट की सैनिक पोशाक में सुभाष बाबू उतरे। एक विचित्र वातावरण था उस समय जब लैफ्टीनैण्ट हबीबुर्रहमान ने पास आकर फौजी सैल्यूट किया। समस्त मैदान इन्कलाब जिन्दाबाद के गगनभेदी नारों से गूँज उठा। सुभाष बाबू जब मैदान के बीचों-बीच खड़े हुए लोहे के पोल के समीप पहुँचे तो झाँसी की रानी रेजिमेण्ट की कमाण्डर लक्ष्मी स्वामीनाथन ने आगे बढ़कर अपने कमाण्डर इन्चीफ सुभाष को सेल्यूट दिया। पीछे से उनकी सहायिका गुजराती महिला सैनिका ने एक डोर पर चढ़ा हुआ रेशमी तिरंगा झंडा कुमारी लक्ष्मी को सौंपा। वह डोर पोल में लगाई और सावधान की आवाज के साथ सारे सैनिकों की निगाह झंडे की ओर उठ गई। सुभाष आगे बढ़े और उन्होंने डोरी खींच ली। सुबह की मस्त और मदिर हवा में रेशमी तिरंगी लहरें नाच उठीं। अगणित कण्ठों से स्वर फूट पड़ा—''सिर पर तिरंगा झंडा, जलवा दिखा रहा है''।

शाम को एक विशाल सभा हुई। मंच पर चाँदी के चौखटे में मढ़ा हुआ महात्मा गांधी का एक विशाल चित्र सुशोभित था। तालियों की गर्जना, नारों की गूँज और इन्कलाब जिन्दाबाद के जय-घोष के बीच नेताजी ने अपना भाषण इस प्रकार प्रारम्भ किया-''गांधी जी मेरे गुरु हैं। मैं अपने गुरु की स्मृति को प्रणाम करता हूँ। इस क्षितिज के पार, इन बलखाती

नदियों और लहराते जंगलों के पार स्वर्ण भूमि है, हमारे सपनों का देश। इस देश के पावन वृक्षों की अमृतमयी छाया में बैठकर वहाँ के ऋषियों ने विचित्र रहस्य हमें बताए हैं। जिनकी अहिंसा ही मानवता की एक-मात्र आशा है। हमें मौत की मंजिलें पार करते हुए दिल्ली तक पहुँचना है। जिस दिन दिल्ली के लाल किले पर तिरंगा झंडा लहराएगा उस दिन हम एक मणिजटित सिंहासन पर महात्मा गांधी को बिठाएँगे, पावन गंगाजल से उनके चरण पखारेंगे ! और उनसे कहेंगे अब आप संसार का नेतृत्व अपने हाथ में लीजिए। मेरे गुरुदेव! अब आपकी अहिंसा की जरूरत है।''

युद्ध की घोषणा

23 अक्टूबर, 1943 को आजाद हिन्द की अस्थायी सरकार ने ब्रिटेन और अमरीका के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। घोषणा के समय सिंगापुर की विराट् सभा में लगभग 20 हजार भारतीय उपस्थित थे। इसी दिन जापान सरकार ने आजाद हिन्द सरकार को स्वीकार करके प्रतिज्ञा की कि भारत की स्वाधीनता के लिए लड़े जाने वाले इस युद्ध में जापान सरकार आजाद हिन्द सरकार को हर सम्भव सहायता देगी। इसके 3 दिन बाद जर्मन सरकार के विदेश मन्त्री रिवन ट्राप ने भी एक तार द्वारा आजाद हिन्द सरकार को स्वीकृति दे दी। इसी प्रकार स्वतन्त्र बर्मा, स्वतन्त्र फिलिपाइन्स, ब्रोटिया इटली, चीन और मंचूकों की सरकार ने भी आजाद हिन्द सरकार को मान्यता दे दी। आरयलैंड की ओर से भी नेता जी के पास बधाई का तार आया। सुभाष बाबू को प्रारम्भ में आजाद हिन्द फौज ने परेड में सलामी दी। सैनिक समारोह के बाद सहस्त्रों कण्ठों से यही ध्वनि निकली, ''शुभ सुख चैन की वर्षा बरसे, भारत भाग है जागा।''

8 नवम्बर, 1943 को टोकियो में होने वाले एक सम्मेलन में जनरल तोजो ने जापान की ओर से अण्डमान तथा निकोबार द्वीप समूह आजाद हिन्द सरकार को दे देने की घोषणा की। इस अवसर पर नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने एक वक्तव्य देते हुए कहा था—''जापान सरकार द्वारा अण्डमान तथा निकोबार द्वीप दे देने का अर्थ यह है कि सर्वप्रथम इसी भूमि को ब्रिटिश साम्राज्यवाद से मुक्ति पाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। देश पर मरने वाले अनेक शहीदों की स्मृतियों में अण्डमान का नाम 'शहीद द्वीप' और निकोबार का नाम 'स्वराज द्वीप' रखा जाता है।'' इन द्वीपों का शासन करने के लिए कर्नल चटर्जी अपने स्टाफ के साथ भेजे गए।

7 नवम्बर, 1943 को 'आजाद हिन्द सरकार' का प्रधान कार्यालय बर्मा में आ गया था। एक कार्यालय सिंगापुर में भी था। मलाया, सुमात्रा, जावा और बोर्नियो आदि द्वीपों में भी कार्य होता था। मलाया में ही 70 शाखाएँ थीं और दो लाख से अधिक मलायावासी हमारी इस सरकार के सदस्य थे। अण्डमान सेलिपिसा, चीन, मंचुको, जापान और फिलीपाइन में भी इसकी शाखाएँ थीं।

'दिल्ली चलो' का नारा

7 जनवरी, 1944 को 'आजाद हिन्द फौज' का प्रधान कार्यालय युद्ध मोर्चे के समीप पहुँचने के लिए रंगून लाया गया। फौज के प्रथम-प्रयाण के समय नेताजी सुभाष द्वारा दिया गया भाषण भारतीय स्वाधीनता के इतिहास में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। उन्होंने अपने सैनिकों को सम्बोधित करते हुए कहा था—

'' आज हम अपनी मातृभूमि से दूर हैं। हम नीड़-विहीन पक्षी की भाँति अनन्त आकाश में मँडरा रहे हैं, लेकिन हमें एक बार फिर अपनी मातृभूमि में वापिस लौटना है। सुनो, देश के कोने-कोने से-सिन्धु, रेवा और गंगा के पुनीत तट से 40 करोड़ आवाजें एक साथ हमें पुकार रही हैं, 40 करोड़ हृदय हमारे स्वागत के लिए धड़क रहे हैं, 80 करोड़ भुजाएँ हमारे आलिंगन के लिए फैली हुई हैं।

'' अब हम नहीं रुकेंगे। खून ने खून को पुकारा है। माता ने अपनी रूठी हुई निर्वासित सन्तानों को पुकारा है। हमारे शस्त्र अब म्यान में नहीं रह सकेंगे। आगे बढ़ो। इस सामने के पहाड़ पर लहराते हुए दुर्गम मार्ग को कुचलकर पहाड़ों और घाटियों को पार करके, सुदूर क्षितिज तक पहुँचकर इन बादलों के देश से आपको अपनी आजादी छीनकर लानी है। ईश्वर आपकी सहायता करेगा। लेकिन ध्यान रखना, ईश्वर उन्हीं की सहायता करता है जिनकी साँसों में तूफान होता है, जिनकी पसलियों में भूचाल होता है। शत्रुओं की पंक्तियों को चीरकर आपको अपने देश में पहुँचना है। या लड़ते-लड़ते अपनी जान दे देनी है। दिल्ली का मार्ग आजादी का मार्ग है तो हम दिल्ली में दाखिल होंगे विजयी होकर, या हमारी लाशें धूल में मिल जाएँगी। साँस की खूनी हवा में लहराते हुए झोंके इस बात के साक्षी होंगे कि हम आजादी के लिए मौत की कीमत देने में कभी नहीं हिचके—

सुन रहे हो सुनो, अपना खून रहा पुकार,
क्षितिज के उस पार दिल्ली है, क्षितिज के पार।''

नेताजी की 'दिल्ली चलो' की आवाज ने 'आजाद हिन्द फौज' के सिपाहियों पर जादू का असर किया। नेताजी ने घोषित किया कि आजाद हिन्द फौज शीघ्र ही आक्रमण करने वाली है। उन्होंने सब सैनिकों को सम्बोधित करते हुए कहा—

'' भारत माता और उसकी 40 कोटि सन्तानों को आजाद कराने के लिए मैं सुभाषचन्द्र बोस अपने जीवन की अन्तिम साँस तक स्वतन्त्रता के इस पवित्र युद्ध को जारी रखने की प्रतिज्ञा ईश्वर को साक्षी मानकर करता हूँ। मैं यह भी प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं सदा ही अपने को हिन्दुस्तान का एक तुच्छ सेवक मानूँगा और अपने देश के 40 कोटि भाई-बहनों की भालाई करना मेरे जीवन का व्रत और मेरा सबसे बड़ा कर्त्तव्य होगा। आजादी प्राप्त करने के बाद उसकी रक्षा के लिए मैं अपने जीवन को न्यौछावर करने के लिए सदैव तत्पर रहूँगा।''

पहला आक्रमण

आजाद हिन्द फौज ने 18 मार्च, 1944 को पहला आक्रमण किया। यह दिन भारत के इतिहास में स्मरणीय रहेगा। इसी दिन आजाद हिन्द फौज के सैनिक भारत की सीमा को पार करके कोरिया, मणिपुर के क्षेत्र के युद्ध में संलग्न हुए थे। वह दृश्य कितना मार्मिक था जबकि हमारे इन सैनिकों ने भारत को चूमते हुए भारत की पावन धूलि हाथ में लेकर यह शपथ ली थी कि हम युद्ध में कभी भी पीछे नहीं रहेंगे और तब तक चैन से नहीं बैठेंगे जब तक कि भारत स्वतन्त्र नहीं हो जाता। मई का महीना आते-आते आजाद हिन्द फौज का आक्रमण इतना उग्र हो गया कि भारतीय अंग्रेजी फौज को पीछे हटना पड़ा। उस समय आजाद हिन्द फौज के तीन बिग्रेड वहाँ युद्ध कर रहे थे, उन्होंने मोराई, कोहिमा आदि स्थानों पर अधिकार जमाकर इम्फाल को घेर लिया था।

किन्तु विमान-सेवा-विहीन होने और मानसून के उत्पात के कारण 'आजाद हिन्द फौज' को पीछे हटना पड़ा। ऐसी स्थिति में उन्हें किसी भी प्रकार की सामग्री नहीं पहुँचाई जा सकती थी। जिस समय सैनिकों को पीछे हटने का आदेश हुआ तो फौज में बेचैनी छा गई, एक हलचल-सी मच गई। ऐसा मालूम होता था कि विद्रोह हो जाएगा। जिस समय उन्हें पीछे हटने का कारण बताया गया तो प्रत्येक सैनिक के कण्ठ से यही आवाज निकली—"हम घास खाकर जब अभी तक गुजर करते रहे तो आगे भी ऐसे बढ़ते जाएँगे"। लेकिन जब सभी सैनिकों को नेताजी का आदेश-पत्र दिखाया गया तो वे मन मसोसकर पीछे हटे। सबकी आँखों में आँसू आ गए और वे टूटा हुआ दिल लेकर पीछे लौटे।

दूसरा आक्रमण

आजाद हिन्द फौज का दूसरा आक्रमण मार्च 1945 में प्रारम्भ हुआ। पाँचवीं गोरिल्ला रेजीमेंट आक्रमणात्मक फौज के रूप में बदल गई। उस समय अपनी रेजीमेंट को सम्बोधित करते हुए नेताजी ने कहा था, "पिछले वर्ष आजाद हिन्द फौज ने सर्वप्रथम दुश्मनों का युद्ध-क्षेत्र में मुकाबला किया था। उसके काम मेरी कल्पना से भी बढ़कर रहे और दोस्त तथा दुश्मन सभी ने हमारी फौज की प्रशंसा की। बिना पराजित हुए ही हमें इम्फाल के मोर्चे पर मौसम की खराबी तथा दूसरी कमियों के कारण पीछे हटना पड़ा। अब हमने उन कठिनाइयों पर विजय पाने की कोशिश की है। इस वर्ष निर्णायक युद्ध होगा। भारत की स्वाधीनता का निर्णय इम्फाल की पहाड़ियों और चटगाँव के मैदान में होगा। इस अवसर का हमारा नारा होगा-'खून-खून और अधिक खून।' जबकि पिछली चढ़ाई के समय का नारा था-'चलो दिल्ली'।"

आजाद हिन्द फौज की 'बाल सेना' ने इस युद्ध में जिस वीरता का प्रदर्शन किया वह स्तुत्य है। उस सेना के छोटे-छोटे बच्चे बर्मा की लड़ाई में अपनी पीठ पर बम बाँधकर सुरंग में जमीन पर लेट जाते थे और उन पर से पार होते हुए ब्रिटिश टैंक टुकड़े-टुकड़े

होकर उड़ जाते थे। 'झाँसी की रानी रेजीमेंट' की महिला-सेना ने मोलमीन के पास सैनिकों से 16 घंटे तक युद्ध किया। अब तक फौजों ने बर्मा पर आणुमाणात्मक युद्ध किया था। अब रक्षात्मक युद्ध करने को विवश होना पड़ा। 19 मई, 1945 को अंग्रेजी फौजों ने रंगून पर पुनः कब्जा कर लिया और आजाद हिन्द फौज के अफसर तथा सैनिक गिरफ्तार कर लिये गए।

गुलामी के घी से आजादी की घास अच्छी

इम्फाल के मैदान में एक ओर आजाद हिन्द सरकार की 'आजाद हिन्द सेना' थी तो दूसरी ओर भारत सरकार की भारतीय सेना और दोनों सेनाएँ एक-दूसरे को अपनी ओर खींचने की कोशिश करती रहीं। दोनों के बीच में कुछ पेड़ थे। एक पेड़ पर 'आजाद हिन्द फौज' ने एक बोर्ड लटकाया हुआ था। जिस पर लिखा हुआ था, 'हमारे साथ आओ और आजादी के लिए लड़ो !' इसका उत्तर ब्रिटिश भारतीय सेना ने इस प्रकार दिया—'तुम जापान के गुलाम हो। तुम दूसरों के लिए मर रहे हो, तुम नमकहरामी कर रहे हो। आओ, तुम्हें यहाँ सब-कुछ खाने को मिलेगा।' आजाद हिन्द फौज के सैनिकों ने इसका जो उत्तर दिया वह भारतीय स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित करने योग्य है—''गुलामी के घी से आजादी की घास अच्छी है, हम जापान के गुलाम नहीं हम तो नेताजी के हुक्म से लड़ रहे हैं।''

अन्तिम अध्याय

24 अप्रैल, 1945 को नेताजी सुभाष और उनके साथियों के रंगून जापान के आत्म-समर्पण के उपरान्त 'आजाद हिन्द फौज' के लगभग 2000 सैनिक गिरफ्तार कर लिये गए। 28 मई को आजाद हिन्द संघ के उपसभापति श्री भादुड़ी को भी गिरफ्तार करके रंगून जेल भेज दिया गया। सिंगापुर से आजाद हिन्द फौज के मेजर जनरल फियानी को पकड़कर मर्ल हिल भेज दिया गया और 29,000 सिपाही बिभामरी कैम्प में नज़रबन्द कर लिये गए। इस प्रकार भारत की स्वतन्त्रता के लिए लड़ने वाली 'आजाद हिन्द फौज' बन्धन में आ गई। कैप्टन शाहनवाज़, ढिल्लन और सहगल भी इनके साथ ही गिरफ्तार कर लिये गए। कैप्टन लक्ष्मी स्वामीनाथन को भी शान स्टेट के कलावा नामक स्थान में नज़रबन्द कर दिया गया। बाद में 'आजाद हिन्द फौज' के इन सभी प्रमुख सूत्रधारों और अन्य सिपाहियों पर भारत में दिल्ली के लाल किले में मुकदमा चलाया गया। इस मुकदमे में सफाई पक्ष के प्रमुख वकील श्री भूलाभाई देसाई थे।

नेताजी का अन्तिम सन्देश

रंगून छोड़ते हुए नेताजी सुभाष ने 'आजाद हिन्द फौज' के सैनिकों के नाम अपना जो अन्तिम सन्देश दिया था, वह इस प्रकार है :—

''आजाद हिन्द सेना के बहादुर अफसरो और सिपाहियो, मैं बहुत ही भरा हुआ दिल लेकर बर्मा छोड़ रहा हूँ। वह बर्मा, जहाँ आपने 1944 की फरवरी से बहुतेरी वीरतापूर्ण लड़ाइयाँ लड़ी हैं और अब भी आप वहाँ से बहादुरी से लड़ रहे हैं। इम्फाल के मैदानों में, अराकान के जंगलों में और बर्मा के तेल-क्षेत्रों में दुश्मनों के खिलाफ लड़ते हुए आप लोगों ने जो वीरतापूर्ण कार्य किए हैं वे सब आजादी की लड़ाई के इतिहास में सदा के लिए अमर रहेंगे। मुझे विश्वास है कि यदि हम अपने मुहरे ठीक से चलाते गए तो इस युद्ध के अन्त में हमारी विजय होगी। यदि किसी कारण से हम इस युद्ध में हार गए तो भी निराशा की बात नहीं। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि दस वर्ष के अन्दर ही अगला विश्वयुद्ध आ रहा है। हिन्दुस्तान आजाद होगा, यह तो निश्चित है—कब तक होगा, यह हम पर निर्भर करता है। किन्तु इसमें इतना निराश होने की क्या आवश्यकता है कि हम वायसराय भवन के सामने घुटने टेकने तक को तैयार हो जाएँ। मेरे साथी विद्रोहियो, तब तक अपना तिरंगा झण्डा ऊँचा रखना जब तक कि वह स्वयं दिल्ली के वायसराय भवन और लाल किले पर न फहराने लगे।''

आजाद हिन्द फौज के कारनामे संसार में सदा प्रतिष्ठा और सम्मान की दृष्टि से देखे जाएँगे। पर स्मरणीय है कि आजाद हिन्द फौज का संगठन उन व्यक्तियों द्वारा हुआ था जो अंग्रेजी कमान में जापानियों के द्वारा पराजित हो चुके थे। जिनको जंगलों में जापानियों की दया पर छोड़ दिया गया था। जिनके पास न खाने को रोटी थी और न पहनने को कपड़ा। इन लोगों में नेताजी सुभाष ने शिष्टाचार और अनुशासन की भावना पैदा करके वह संगठन कर दिखाया जिसके ऊपर कोई भी राष्ट्र गर्व कर सकता है। भारत अपने उस अमर वीर सुभाष तथा उसकी आजाद हिन्द फौज के ऋण को कैसे भूल सकता है !

नेताजी की मृत्यु

15 अगस्त सन् 1945 को जब नेताजी सिंगापुर से बैंकाक के लिए रवाना हुए तब कर्नल हबीबुर्रहमान मिलिटरी-सेक्रेटरी के रूप में उनके साथ थे। कर्नल हबीबुर्रहमान द्वारा दी गई सूचनाओं के अनुसार जब उन्होंने साइगान में फील्ड मार्शल तराउची से टोकियो जाने के लिए विमान-सहायता माँगी तो उन्हें वहाँ जाने वाले एक जापानी फौजी विमान में दो सीटें मिल गईं। 16 अगस्त को सुभाष बाबू तथा कर्नल हबीबुर्रहमान वहाँ से रवाना हुए। उस विमान में कुल 1200 यात्री थे, जिनमें नेताजी तथा कर्नल रहमान ही भारतीय थे। 17 अगस्त को ताइवान में ठहरकर अगले दिन दो बजे दोपहर के लगभग वह विमान टोकियो के लिए चला। वायुयान को उड़ान भरे अभी मुश्किल से 7-8 मिनट ही हुए थे कि इसमें बैठे मुसाफिरों को एक झटका-सा महसूस हुआ। नेताजी तथा कर्नल साहब पायलट के बिलकुल पीछे की सीट पर बैठे थे। देखते-ही-देखते विमान लड़खड़ाता हुआ जमीन पर गिरा और उसमें आग लग गई। इस हादसे में केवल तीन जापानी अफसर और कर्नल रहमान ही बच सके थे।

क्योंकि कर्नल रहमान ने गर्म फौजी वर्दी पहन रखी थी, अत: उसमें आग का असर धीरे-धीरे हुआ। इसके विपरीत सुभाष बाबू खादी के कपड़े पहने हुए थे, जिनमें आग ने जल्दी प्रभाव दिखाया था। सुभाष बाबू ने जब कर्नल रहमान को देखा और पहचाना तो उनके मुँह से यह शब्द निकले—"आपको चोट ज्यादा तो नहीं लगी ? मैं तो जिन्दा नहीं रहूँगा। अगर तुम बच जाओ, और वापस जाओ तो मुल्की भाइयों (देशवासियों) को बता देना कि मैं मुल्क की आजादी के लिए आखिरी दम तक लड़ता रहा हूँ। अब इस जंगे आजादी को आप लोग जारी रखेंगे।.....अब हिन्दुस्तान ज्यादा दिन तक गुलाम नहीं रहेगा।" वायुयान की इस दुर्घटना के बाद लगभग 6 घंटे तक जीवन और मृत्यु से भयंकर संघर्ष करते हुए 18 अगस्त को रात के आठ बजे वे इस असार संसार से विदा हो गए। वहाँ पर ही उनका दाह-कर्म किया गया और दूसरे दिन 20 अगस्त को कर्नल रहमान उनकी भस्म लेकर टोकियो गए, जहाँ 'रन्तोजी सराइन' में उसे सुरक्षित रख दिया गया। उनका यह अमर बलिदान भारतीय स्वातन्त्र्य-संघर्ष के इतिहास में सदा आदर के साथ याद किया जाता रहेगा।

2

टैंगेनिका का सन् 42

अगस्त-क्रान्ति की चिनगारी भारत से उछलकर विदेश में भी गई और वहाँ पर भी कार्य हुआ। टैंगेनिका में अगस्त, 42 में सामूहिक आन्दोलन न होकर व्यक्तिगत आन्दोलन ही हुआ परन्तु इससे वहाँ बहुत जागृति हुई। नीचे की पंक्तियाँ वहाँ के एक व्यक्ति ने लिखी हैं, जिन्होंने स्वयं उस आन्दोलन में वहाँ कार्य किया था। पाठकों की जानकारी के लिए उसका संक्षिप्त अंश दे रहे हैं—

मैं इस वक्तव्य से सहमत हूँ कि अगस्त आन्दोलन टैंगेनिका निवासी भारतीय नेताओं को जागृत न कर सका और वहाँ के भारतीय अपनी मातृभूमि की समस्याओं से किस तरह विमुख रहते हैं इसे भी स्पष्ट कर दिया। टैंगेनिका के भारतीय क्रियात्मक रूप में भारत के साथ अपनी एकता का प्रदर्शन कर सकते थे-ऐसी बात नहीं। यह बिल्कुल असम्भव था, पर यह अवश्य आशा की जा सकती थी कि वहाँ के नेतागण कांग्रेस को आर्थिक सहायता देते, कांग्रेस द्वारा संचालित आन्दोलन के पक्ष में सभाएँ करते, सही-सही साहित्य का वितरण करते और इससे भी अधिक वे भारतवर्ष में स्वयंसेवकों का जत्था भेजते। पर उन्होंने यह नहीं किया। इस काम में थोड़ा-बहुत सहयोग भी दिया तो केवल उन नवयुवक क्लर्कों ने जो देशप्रेम के मतवाले थे। फलतः एक ओर उन्हें सरकार का और दूसरी ओर अपने नेताओं का कोपभाजन बनना पड़ा था। इनमें से अधिकतर प्रायः सरकारी नौकर थे या वाणिज्य-व्यवसाय के कारखानों में लगे हुए व्यक्ति।''

उस समय 'इण्डियन एसोसिएशन' (टैंगेनिका के भारतीयों की सबसे बड़ी संस्था) का रवैया था युद्ध में सक्रिय मदद करना तथा भारतीय प्रश्नों से दूर रहना। जिस समय उन्हें ब्रिटिश सरकार की भारत-विरोधी नीति के खिलाफ आवाज उठानी चाहिए थी, सरकार को चेतावनी देनी चाहिए थी उस समय उन्होंने सरकार के समर्थन की नीति का अनुसरण किया, वहाँ की सरकार अफ्रीका के समाचारपत्रों द्वारा भारतीयों के विरुद्ध गन्दा प्रचार करती गई, पर नेताओं ने इस बात से डरकर कि कहीं कौंसिलों और कमेटियों में उनकी जगहें न छिन जाएँ इसका मामूली विरोध तक नहीं प्रदर्शित किया। जब 'टैंगेनिका ओपीनियन' के सम्पादक ने इसका विरोध किया और सरकार के भद्दे प्रचारों की पोल खोली तो भारतीय बहुत प्रसन्न हुए, और उन्होंने उसे अपना प्रतिनिधि माना। इस सम्पादक के भारत के लिए

विदा हो जाने के पश्चात् वहाँ कोई ऐसा व्यक्ति न रह गया जो सरकार की नीति का विरोध कर सके। अगस्त-आन्दोलन के समय से हमारा कर्त्तव्य हो गया था कि हम अपने कार्यों से साबित कर दें कि हम जहाँ भी रहते हैं देशप्रेम हमारे साथ रहता है तथा हम अपने देश को नहीं भूलते हैं।

क्रिप्स-मिशन के असफल होते ही यह स्पष्ट हो गया था कि भारतवर्ष में गड़बड़ी अवश्यम्भावी है। अतः एक 'भारतीय युवक संघ' की स्थापना करने की बातचीत शुरू हो गई थी ताकि हम जनता की मनोवृत्ति को अपने पक्ष में तैयार करें और उन्हें अपने संघ का सदस्य बनाएँ, जो भारतवर्ष में जाकर पीड़ितों की सहायता के लिए पैसे इकट्ठा कर सकें। अभी तैयारियाँ समाप्त भी नहीं हुई थीं कि मैंने एक दिन सुबह जापानी रेडियो स्टेशन को यह घोषणा करते सुना कि भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के गणमान्य नेताओं को गिरफ्तार करके किसी गुप्त स्थान को ले जाया जा रहा है। यह समाचार सुनकर मैं हक्का-बक्का रह गया। मुझे ऐसी आशा नहीं थी कि यह सब इतनी जल्दी होगा। मैं उसी समय हिन्दू स्वयंसेवक दल के सभापति से जाकर मिला। यह दल सामाजिक बातों के लिए तो हिन्दू था पर राष्ट्र और राजनीतिक बातों में पक्का हिन्दुस्तानी था और उसे दूसरी हिन्दू और मुस्लिम-संस्थाओं का सहयोग प्राप्त था। यह नवयुवकों की एक बलिष्ठ संस्था थी। इसमें उतनी शक्ति थी कि गांधी-जयन्ती जैसा दिन मना सकती थी, पर इण्डियन एसोसिएशन यह सब करने से डरती थी। आठ बजे सुबह 'दल' की कार्यकारिणी की बैठक बुलाई गई। मैंने इसमें भारत सरकार के कार्य का विरोध करते हुए एक प्रस्ताव पेश किया और इण्डियन एसोसिएशन को कहा कि वह उसे एक आम सभा में, जो उसी दिन दोपहर को केनिया लेजिस्लेटिव के श्री जे० बी० पाण्डया के निधन पर होने वाली थी, पास करके भारत सरकार के पास भेज दे। सभापति ने उस प्रस्ताव में बहुत अदल-बदल कर दिया और लोगों से कहा कि आप भारतवर्ष में जो कुछ हो रहा है उसकी लहर में मत आइए। आप यहाँ टंगेनिकन होकर रहिए, भारतीय होकर नहीं।

यह सब देखकर मुझे बड़ा क्रोध आया और मैंने स्वयं वह प्रस्ताव भेजा। जर्मन और जापानी स्टेशनों से अंग्रेजों के जुल्मों की खबरें बड़े जोरों से आने लगीं। इधर सेन्सर का भी जोर लागू हो गया और भारतवर्ष से आने वाले समाचारपत्रों की टैंगेनिका पहुँचने से पहले ही, जाँच-पड़ताल होने लग गई। फिर भी मैंने कुछ पत्र नवयुवकों तक पहुँचाने की चेष्टा की और यह भी निश्चय किया कि किसी न किसी तरह स्वयंसेवक भी भेजे जाएँ। जन-शक्ति के एक भारतीय असिस्टेण्ट डाइरेक्टर को इसका पता चल गया और उसने किसी भी नवयुवक भारतीय को बाहर जाने का पास देना ही बन्द कर दिया। पर हमने दो युवकों को स्वास्थ्य के बहाने बाहर भेज ही दिया। इतने में 'कांग्रेस बुलेटिन और भारत छोड़ो' प्रस्ताव की प्रतियाँ साईक्लोस्टाइल करके हम बाँटने लगे। कुछ संख्या में इस प्रकार से

जब हम बाँट चुके तो लेजिस्लेटिव काउन्सिल के एक भारतीय सदस्य ने सरकार को इसका पता दे दिया। अब सी० आई० डी० के लिए दोषियों का पता लगाना एक आसान काम हो गया। वे यह भी पता लगा सके कि बुलेटिन का वितरण सरकारी विभाग द्वारा होता था।

इसी बीच हम साहूकारों से मिले और चन्दे की माँग की, पर हमें निराश होना पड़ा और हमने निश्चय किया कि प्रति मास हम जितना इकट्ठा कर सकेंगे, भेज दिया करेंगे। 'एशिया और अमेरिका' तथा 'ब्लिटज' में एक दो लेख भी भेजे थे पर सेंसर ने वे सी० आई० डी० के हाथों सौंप दिए।

हमारे नेता कहते थे कि गांधी-जयन्ती मनाना कोई बुद्धिमानी नहीं है, पर हम फिर भी मनाते थे।

1942 और 43 में हमने भारतीय युवक संघ की खूब तैयारी की। महात्माजी के उपवास से सारा संसार हिल गया था। फिर भी हमारे टैंगेनिका के भारतीय अपनी पुरानी नीति पर ही चल रहे थे। कमेटियों से जगह छिन जाने के भय से अथवा इस भय से कि लोग उन्हें राष्ट्रवादी न कहें, इण्डियन एसोसिएशन ने एक प्रार्थना-सभा तक नहीं की। केनिया तथा युगांडा ही नहीं प्रत्युत समग्र संसार में गांधीजी के लिए प्रार्थना की गई थी। मैंने देखा कि इण्डियन एसोसिएशन वाले दारेसलम इण्डियन एसोसिएशन के तार की प्रतीक्षा कर रहे हैं। अन्त में एक सौदागर तथा मैंने अपने नाम से एक सभा के लिए नोटिस निकाला।

इतने में सरकार ने यह पता लगाने की कोशिश की कि इस गड़बड़ के पीछे कौन है और सी० आई० डी० को इस कार्य के लिए तैनात कर दिया। सभी बाहर भेजे जाने वाले लेख सेन्सर वाले सी० आई० डी० के पास भेज देते थे। इसका पता लगते ही हमने इस काम को आर्थिक विभाग के एक ऐसे साथी को सौंप दिया जिस पर अभी तक सरकार ने सन्देह नहीं किया था। मैंने अब बाहर आंकर सरकार को चुनौती देने का निश्चय किया। फरवरी में, जब मैं जंजीबार में था, तो टैंगेनिका की सी० आई० डी० ने पुलिस से मुझे गिरफ्तार करने को कहा। इसके पूर्व कि वे मुझे गिरफ्तार करते, मैं टैंगेनिका में वापिस आ गया और मैंने आन्दोलन-सम्बन्धी साहित्य का वितरण करना प्रारम्भ कर दिया। मैंने कई लेख भी इस सम्बन्ध में समाचारपत्रों को भेजे।

एक दिन कुछ भारतीय क्लर्क समुद्र के किनारे आन्दोलन के सम्बन्ध में बातें कर रहे थे कि वे गिरफ्तार कर लिये गए। उन्हें शहर के अन्दर कर दिया गया। उनका समुद्र के किनारे जाना बन्द कर दिया गया। मैंने इसका विरोध किया। एक पत्र ने इसे छापा भी, परन्तु नेताओं ने इस मामले में भी सरकार तक पहुँचना उचित न समझा। इसका परिणाम यह हुआ कि सी० आई० डी० ने मुझे बुलाया और मेरे ऊपर बहुत से जुर्म लगाए। उन्होंने मुझे धमकी दी कि तुम्हें देश से निकाल दिया जाएगा और जेल में बन्द कर दिया जाएगा।

जब मैं अरूशा जा रहा था तो मुझे पता चला कि मुझे रोडेशिया में बन्द कर दिया जाएगा और बाद में क्या हुआ यह तो दूसरी कहानी है।

अन्त में मैं यह कहना चाहता हूँ कि सन् 1942 की क्रान्ति में टैंगेनिका में केवल व्यक्तिगत कार्य ही हुआ। उस क्रान्ति ने उन नेताओं की पोल भी खोल दी, जो आज भारतवर्ष में दौड़कर मदद लेने आते हैं और जब उनकी मातृभूमि मुसीबत में होती है तो वे उसकी मदद करना नहीं चाहते।

चौथा भाग

अगस्त-क्रान्ति के सेनानी

बाधाएँ आएँ आने दो
साहस तजे न संग।
बढ़े चलें हम निर्भय आगे,
लेकर नई उमंग॥

विश्व में सुयश कमाना है
अमरता-हित मर जाना है
विजय का पथ अपनाना है

1

श्री अच्युत पटवर्धन

अगस्त 42 के हमारे राजनैतिक संघर्ष को आगे बढ़ाने वाले महानुभावों में श्री अच्युत पटवर्धन, जयप्रकाश नारायण, राममनोहर लोहिया, श्रीमती अरुणा आसफअली और श्री कुमारी उषा मेहता प्रमुख रहे हैं। वैसे तो देश के सभी भागों के कार्यकर्त्ताओं और छात्रों ने इस आन्दोलन में पर्याप्त योग दिया था, किन्तु उक्त पाँचों महानुभाव हमारे इस स्वतन्त्रता संघर्ष को आगे बढ़ाने में प्रमुखत: सहायक रहे हैं। उनमें से श्रीमती अरुणा आसफअली और श्री अच्युत पटवर्धन तो अन्त तक छिपकर ही कार्य करते रहे और सरकार लाख कोशिशें करने पर भी उनका पता न लगा सकी।

बम्बई की लोकप्रिय सरकार ने सबसे पहला कार्य यह किया कि 1942 के राजनीतिक फरारों के वारण्ट रद्द कर दिए। अ० भा० कांग्रेस-कार्य-समिति के भूतपूर्व सदस्य श्री अच्युत पटवर्धन, जो आन्दोलन के प्रारम्भ से अप्रैल, 1946 तक फरार थे, पूरे 44 महीने बाद प्रकट हो गए। आप कांग्रेस के वामपक्षी अर्थात् कांग्रेस समाजवादी दल के प्रमुख सदस्य रहे थे। अपने फरार-जीवन में देश को स्वतन्त्र करने के लिए उन्होंने ऐसे-ऐसे वीरोचित कार्य किए हैं जिनके प्रकाश में आने पर वे भारतीय संघर्ष के इतिहास के सुनहरे अध्याय होंगे।

श्री अच्युत पटवर्धन के महत्त्वपूर्ण कार्यों का ही परिणाम सतारा की क्रान्ति थी। वहाँ के 707 गाँवों में पटरी समानान्तर पर स्वतन्त्र सरकार की स्थापना हो गई थी। वर्षों तक इस सरकार ने सुयोग्यतापूर्वक शासन किया और अंग्रेजी सरकार का वहाँ चिह्न तक नहीं रहा। अब उस पटरी सरकार ने टूटकर कांग्रेस से सहयोग कर लिया था। साथ ही उस सरकार के चलाए हुए 300 'न्यायदान मण्डल' भंग कर दिये गए थे। उक्त मण्डलों के स्थान पर बाद में पंचायतें बनीं।

सन् 42 से 46 तक

अगस्त सन् 1942 में एकाएक छिप जाने के बाद श्री अच्युत पटवर्धन ने 'भारत छोड़ो' बुलेटिन निकालकर सतारा में ब्रिटिश सरकार को आतंकित कर दिया था। डाक्टर राममनोहर लोहिया के साथ मिलकर कांग्रेस रेडियो से ब्राडकास्ट करके आपने राजनैतिक कार्य को

बहुत आगे बढ़ाया। 43-44 का वर्ष श्री अच्युत पटवर्धन के लिए बहुत ही संकट का रहा। उनके साथी डा० राममनोहर लोहिया, श्री जयप्रकाश नारायण, श्री एस० एम० जोशी, कुमारी उषा मेहता आदि सब एक-एक करके गिरफ्तार कर लिये गए। सारे देश में उनकी गिरफ्तारी के लिए सी० आई० डी० का जाल बिछा था। इसी अवस्था में आपको काम करना पड़ा। उन दिनों उनके बड़े भाई राव साहब पटवर्धन जेल ही में थे। उनके साथियों में तब केवल श्रीमती अरुणा आसफअली सी० आई० डी० की दृष्टि से बची हुई थीं। सतारा उनके कार्य का केन्द्र था, जैसा कि उन्होंने अब प्रकट होने पर बतलाया है। अपने गुप्त जीवन में वे दक्षिण भारत के किसानों की सभा में भाषण देते थे और उन्हें याद दिलाते थे कि वे छत्रपति शिवाजी के वंशज हैं। सतारा में उन्होंने पूर्ण प्रजातन्त्री सरकार की स्थापना कर ली थी। गवर्नर कालाविले उनसे बहुत ही परेशान थे।

फिर हमारे बीच में

मई, सन् 1944 में गांधीजी रिहा किये गए और उनके बाद कांग्रेस-कार्य-समिति के सब सदस्य भी रिहा कर दिये गए। शिमला सम्मेलन का आयोजन हुआ। शिमला समारोह के समय श्री अच्युत ने सतारा में एक भाषण दिया था। बम्बई में कांग्रेस कार्य समिति की जो बैठक हुई थी, उसमें वे मौजूद थे। वे छिपे थे सरकार के लिए, जनता के लिए नहीं। आपने और श्रीमती अरुणा ने छिपकर कार्य करने वालों की सहायता के सम्बन्ध में राष्ट्रपति को जो पत्र लिखा था वह ऐतिहासिक है। अब श्री अच्युत पटवर्धन हमारे बीच खुलकर आ गए हैं। परन्तु छिपे जीवन में आपको जो भीषण कष्ट उठाने पड़े उनका आपके स्वास्थ्य पर बहुत ही भयंकर प्रभाव पड़ा है। तरुण होते हुए भी असमय में ही आपके बाल सफेद हो गए हैं; परन्तु आपकी भावना एवं कार्यक्षमता अदम्य है।

अच्युत का फरार जीवन

अगस्त क्रान्ति को चलाने में श्री अच्युत पटवर्धन का महत्त्वपूर्ण भाग था। आप आन्दोलन के प्रारम्भ से ही फरार हो गए थे। पुलिस अनेक प्रयत्न करने पर भी आपका पता न पा सकी थी। नीचे उनके फरार जीवन के मनोरंजक संस्मरण दिए जा रहे हैं :—

"क्या अच्युतराव ! तुम कभी साड़ी पहनकर घूमते थे ?" 1942 के विद्रोह के क्रान्तिकारी श्री अच्युतराव पटवर्धन के बन्धनमुक्त होकर पूना आने पर एक पत्र-प्रतिनिधि ने उनसे उक्त प्रश्न पूछा। अच्युतराव ने पत्र-प्रतिनिधियों को दी गई भेंट में पिछले साढ़े तीन वर्षों में वैयक्तिक रूप से क्या-क्या पराक्रम किया, कहाँ-कहाँ रहे आदि बातें बताने से साफ-साफ इन्कार कर दिया। मगर समाचार-पत्रों के संवाददाता भी शान्त बैठने वाले नहीं थे। उक्त प्रश्न एक अंग्रेजी पत्र के संवाददाता ने उनसे पूछा। इस पत्र-प्रतिनिधि ने यह भी कहा—"आप जब साड़ी पहनकर घूम रहे थे तब आप पर निगरानी रखते हुए पुलिस विभाग से इस आशय का गुप्त सर्क्युलर निकलवाया गया था कि आप स्त्री-वेश में भी मिल सकते हैं। इसलिए यह प्रश्न मैं आपसे पूछ रहा हूँ।"

''मैं साड़ी पहनकर फिरा या नहीं, यह मैं कहता नहीं, मगर 1942 के आन्दोलन के आरम्भ में यदि इस प्रकार का सर्क्युलर निकाला गया था तो मुझे उसका बहुत लाभ मिला, इतना ही मुझे कहना है।''

इससे क्या यह स्पष्ट नहीं होता कि अच्युतराव साड़ी पहनकर कभी नहीं घूमे ?

अरुणा आसफअली और अच्युतराव पटवर्धन ये दोनों क्रान्ति-नेता केवल अन्त तक 'भूमिगत' रह सके और जयप्रकाश, राममनोहर लोहिया प्रभृति क्रान्तिवीर और महाराष्ट्र के अन्य नेता पकड़े गए। अरुणा आसफअली और अच्युतराव पटवर्धन साढ़े तीन वर्ष भूमिगत रह सके, इसका कारण यह माना जाए कि इसमें दैवयोग का विशेष हाथ है, या यह माना जाए कि श्री अच्युतराव अन्यों की अपेक्षा ज्यादा होशियार निकले और पुलिस के फंदे में नहीं फँसे।

दो दिन से अधिक नहीं

प्रत्येक भूमिगत व्यक्ति के सुरक्षित रहने के लिए भाग्य का आधार तो रहता ही है, पर अच्युतराव साढ़े तीन साल भूमिगत रह सके, इसमें उनका विशेष सावधानी से रहने का स्वभाव भी एक विशेष कारण हुआ।

ज़रा भी संशय होने पर वे अपना निवास-स्थान झटपट बदल लेते, पर किसी भी एक जगह दो दिन से अधिक न रहने का उनका निश्चय था। 1942 के विद्रोह के प्रारम्भ में बम्बई के कारखानेदार और धनिक वर्ग के घरों में उनको सहज रीति से आश्रय मिल जाता था। मगर फरवरी 1943, में महात्मा गांधी ने उपवास किया, तब से स्थिति बदलने लगी। एक धनी ने जो महात्माजी को उपवास के समय इस बात का आश्वासन दिया था कि राष्ट्रीय हित की दृष्टि से यदि उनको इन भूमिगत लोगों को अड़चन मालूम हो तो आठ दिनों के अन्दर वे सब भूमिगत नेता जेलों में चले जाएँगे, ऐसी व्यवस्था की जाएगी। भूमिगतों ने इस धनिक का आश्रय लिया था, उस आधार पर उस धनिक ने महात्माजी से उस तरह की बात कही थी।

भारत भर में भ्रमण

अच्युतराव ने यद्यपि अपने मुँह से अपने अज्ञातवास की कहानी नहीं कही है, फिर भी मद्रास से कलकत्ता तक समस्त दक्षिण भारत और उत्तर भारत में प्रवास किया है और महाराष्ट्र के अन्दर पूना, नगर, और शोलापुर आदि स्थानों पर अनेक बार गए, वह एक प्रकट रहस्य है। अच्युतराव पटवर्धन ने कुछ समय कश्मीर में भी बिताया।

अच्युतराव ने भारत के प्रायः सब प्रान्तों की यात्रा की, मगर उनका मुख्य स्थान पूना-बम्बई रहा और बम्बई रहते हुए 1943 में अनेक बार ऐसे प्रसंग आए जब वे पुलिस के हाथ पकड़े जाने से दैवयोग से ही बचे।

बैरिस्टर पुरुषोत्तम दास त्रिविक्रमदा वै० चित्रे के बंगले में गिरफ्तार किए गए। उस समय अच्युतराव भी पकड़े जाते। मगर "ठहरो, बारीकपने से देखो, सुनो और फिर अगला दाँव रखो (स्टाप, लुक एण्ड लिसन)" इस विषय के ऊपर चलने के कारण उस समय भी वे पकड़े नहीं गए।

भूमिगतों की बेफिक्री

18 अप्रैल, 1943 को सायंकाल शिवभाऊ लिमये, बा० ग० गौरे, साने गुरुजी प्रभृति 18 व्यक्तियों की मण्डली बी० सी० आई० के बाम्बे सैण्ट्रल स्टेशन के सामने की इमारत में पकड़ी गई। यह महाराष्ट्र के अन्दर भूमिगत आन्दोलन पर भारी आक्रमण था। पर इस आक्रमण का कारण भूमिगतों की बेफिक्री और निश्चिन्तता थी। उस इमारत के चारों ओर 18 अप्रैल के प्रात:काल से पूना में प्रसिद्ध गुप्त पुलिस का सादी पोशाक में पहरा था। बम्बई के कार्यकर्त्ताओं और भूमिगतों में से अनेकों भाइयों को इस बात की चेतावनी भी दी थी कि यह इमारत धोखे की है, पर इस भ्रमपूर्ण धारणा के अन्दर कि रात्रि होने तक इमारत पर छापा नहीं मारा जाएगा, शिवभाऊ लिमये प्रभृति मण्डली नहीं हटी। इस बीच जुहू तट पर तैरने का कार्यक्रम कुछ भूमिगतों ने बनाया था और उसमें शिवभाऊ लिमये ने भी सम्मिलित होने की इच्छा प्रकट की थी मगर "जुहू अत्यधिक खुली जगह पर पड़ता है, अत: तुम वहाँ न आओ, मगर यहाँ भी न रहो", इस आशय का सन्देश भेजकर भूमिगत मण्डली जुहू रवाना हो गई।

उनको गए हुए अभी पन्द्रह मिनट भी नहीं हुए होंगे कि पूना के उंबारकर प्रभृति पुलिस-मण्डली वहाँ आ पहुँची। उसको भी इस बात की कल्पना नहीं थी और न अपेक्षा थी कि वहाँ इतनी बड़ी संख्या में भूमिगत लोग मिलेंगे। उस समय से रात्रि के दो बजे तक गुरु जी प्रभृति मण्डली एक-एक करके पुलिस के हाथ चली गई।

18 भूमिगत जनों के गिरफ्तार होने से भी आधिक घातक हमला उस समय एक और हुआ। वह यह कि पूना, शोलापुर आदि विविध स्थानों के भूमिगत आश्रय-स्थानों और व्यक्तियों के 470 नामों की एक सूची पुलिस के हाथ लगी और इस कारण भूमिगत-आन्दोलन लगभग ठण्डा हो गया।

इस छापे में भी अच्युत पकड़े नहीं गए। इसका कारण उनकी सावधन-वृत्ति और सतर्कता ही है। अच्युत ने इस हमले के कारण भूमिगत-आन्दोलन को पहुँचे नुकसान की भरपाई करके पुन: एक बार भूमिगत-आन्दोलन को व्यवस्थित रूप से चालू किया।

इमाम साहेब

पर अच्युत भाग्य से ही बचे, ऐसा भी अनेक बार प्रसंग आया। भाई एस० एम० जोशी बायकुला के बाग में इमाम साहब का नाम धारण करके रहते थे। इसका सुराग पुलिस को मिल गया। पुलिस को किसी ने यह पता दे दिया कि वहाँ पार्टी की बैठक होने वाली

है और अच्युतराव प्रभृति भी उसमें सम्मिलित होंगे। इस जानकारी के आधार पर पुलिस ने 'इमाम साहब' को घेर लिया और वह अच्युतराव के आने की प्रतीक्षा करने लगी। अच्युतराव एक मधु पेठे नामक कार्यकर्त्ता के साथ उस चाल में आए और उन्होंने इमाम साहब के बारे में निश्चित कमरे में पूछ-ताछ की।

"यहाँ इमाम-विमाम कोई नहीं; चले जाओ !" वहाँ के सदा रहने वाले मनुष्य ने खाँसकर कहा।

अच्युत पटवर्धन चौंके, परन्तु फिर भी उन्होंने एक बार पूछा— "क्या इमाम साहब हैं ?" इस पर वह आदमी बोला—"हजार दफा कहा भी तुमको, कि यहाँ इमाम नहीं है, हम पहचानता नहीं इमाम को, जाता है या नहीं यहाँ से ?"

यह अनपेक्षित घटना देखकर और वहाँ कुछ धोखा है यह सन्देह होने पर अच्युतराव और मधु पेठे दोनों झटपट नीचे उतर आए और जे० जे० हास्पिटल के अहाते में घुस गए। वहाँ पहुँचने पर अच्युतराव ने मधु पेठे को आस-पास पूछ-ताछ करने के लिए भेजा। इस चौकसी में उनको पता लगा कि एस० एम० चले गए। आस-पास के सब रास्तों पर पूना की पुलिस को गश्त लगाते हुए उन्होंने देखा। तब भी धीरज नहीं छोड़ा और एक विक्टोरिया करके भिंडी बाजार की ओर निकल गए।

अगले चौक पर पहुँचने पर उन्होंने मधु पेठे को एक और रास्ते से जाने के लिए कहा। उनको यह आभास मिल गया था कि उनकी विक्टोरिया का पीछा किया जा रहा है। इसलिए मधु पेठे को वहाँ विक्टोरिया से उतार दिया और उसकी राह से सर्वथा विरुद्ध राह से स्वत: चले गए। पीछा किया जा रहा है; उनका यह मत सच निकला। क्योंकि मधु पेठे दस कदम ही आगे गए होंगे कि उनको पकड़ लिया गया। पुलिस ने यदि विक्टोरिया का पीछा चौक में न छोड़ा होता और विक्टोरिया के पीछे-पीछे वह चलती जाती, तब ?

भूमिगत

1943 के बाद भारत में आन्दोलन ठण्डा पड़ गया और पुलिस की नज़र भी भूमिगतों पर पहले के समान कठोर नहीं रही। आगे आकर कुछ पुलिस भी भूमिगतों की दोस्त बन गई और उसके बाद अच्युतराव के पकड़े जाने का वैसा विकट प्रसंग नहीं आया। वे कभी फौजी पोशाक पहनकर, कभी दाढ़ी रखकर, कभी केवल मूँछें रखकर बम्बई के अनेक प्रसिद्ध क्लबों मे घूमते हुए, अनेक लोगों से मिले। गांधी-जिन्ना-वार्ता के समय 1944 में वे प्रति दिन गांधीजी से भेंट करते थे। 1945 में तो अ०भा० कांग्रेस कमेटी की बम्बई में हुई बैठक में उपस्थित थे। यही नहीं, आचार्य नरेन्द्रदेव के साथ अच्युतराव ने सौ सवा सौ विद्यार्थियों के सामने बम्बई में भाषण भी दिया। यह सब हलचल पुलिस विभाग को पता नहीं थी, यह नहीं कहा जा सकता। परन्तु पुलिस विभाग में सिपाही से लेकर इन्स्पेक्टर

तक अनेक लोग अच्युतराव के अनुयायी हो गए। इसलिए उनको पकड़े जाने का अधिक भय नहीं रहा था।

1942 के आन्दोलन में भूमिगत रहने वाले क्रान्तिवीरों का अज्ञातवास क्या जनता की दृष्टि से वस्तुत: अज्ञातवास था ? क्रान्ति की विरोधी पुलिस को भले ही वह अज्ञातवास प्रतीत हो, मगर पुलिस, फौजी अधिकारियों, सरकारी नौकरों और इधर सामान्य जनता को ये क्रान्तिवीर भूमिगत नहीं मालूम होते थे, यह परिणाम निकालना गलत न होगा।

2

श्री जयप्रकाश नारायण

श्री पटवर्धन के प्रकट होने के बाद ही श्री जयप्रकाश नारायण और डा० लोहिया जेल से छूटकर हमारे बीच आए थे। श्री जयप्रकाश नारायण से सारा देश परिचित है। वे कांग्रेस समाजवादी दल के प्रमुख स्तम्भ थे। कुछ वर्ष पूर्व वे राजद्रोह के अपराध में गिरफ्तार किये गए थे। आप अपने अन्य साथियों के साथ हजारी बाग सेन्ट्रल जेल से भाग गए थे।

जेल से कैसे भागे ?

जिस दिन जयप्रकाश बाबू जेल से भागे थे, उस दिन दीवाली थी और सभी राजनैतिक बन्दी उसका महोत्सव मनाने में संलग्न थे। अवसर पाकर श्री जयप्रकाश बाबू अपनी पूर्व आयोजित योजनानुसार अपने 5 अन्य साथियों—सर्वश्री रामनन्दन मिश्र, योगेन्द्र शुक्ल, सूर्यनारायणसिंह, गुलाबचन्द गुप्त और शालिग्रामसिंह जी के साथ एक मजबूत रस्सी के सहारे जेल की दीवार को फाँदकर भाग निकले। दीवार लाँघते समय जयप्रकाश बाबू को चोट भी आई। परन्तु उनका साथी उन्हें कन्धे पर बिठाकर ले उड़ा। योगेन्द्र शुक्ल ने सीढ़ी का कार्य किया। वे दिवाली की रात को जेल की चारदीवारी पार करने के बाद तीन दिन तक छोटा नागपुर के जंगलों में चलते रहे। उनके पैर नंगे थे। इस कारण जंगल के पथरीले भाग में चलने से वे लहू-लुहान हो गए थे। फिर भी उन्होंने अपनी एक धोती फाड़कर उसके बारह टुकड़े करके और उन्हें अपने पैरों में लपेटकर अपनी यात्रा जारी रखी। जंगलों में चीते और दूसरे जानवरों का खतरा भी था। लेकिन उन्होंने इसकी परवाह नहीं की। छप्पन मील की यात्रा करने के बाद उन्हें कुछ चिवड़ा और गुड़ खाने को मिला। वे हजारी बाग से गया को गए और वहाँ से सभी अलग-अलग टुकड़ियों में बँट गए। श्री जयप्रकाशनारायण अपने एक साथी के साथ रामनगर से नाव में बैठकर बनारस आ गए।

जेल से भागने से पूर्व उन्होंने धोतियों के सहारे कई दिन पहले से जेल की दीवार पर चढ़ने का अभ्यास किया था। दिवाली की रात को वे 8 बजे एक-दूसरे के कन्धे पर पैर रखकर और अपनी धोतियों की रस्सी बनाकर, उसके सहारे दीवार लाँघ गए और चलने से पूर्व उन्होंने कुछ पैसे, जूते तथा खाने-पीने की कई जरूरी वस्तुएँ एक गठरी में बाँध ली थीं। लेकिन वह गठरी उनसे वहाँ ही छूट गई। जूतों के बिना तो उन्हें बहुत ही कष्ट उठाना पड़ा।

दाढ़ी बढ़ा ली थी

जयप्रकाश बाबू ने अपने गुप्त काल में दाढ़ी बढ़ा ली थी। उनका शरीर बहुत दुर्बल हो गया था; इसलिए उनकी आकृति भी पहचानी नहीं जा सकती थी। बनारस में श्री जयप्रकाश, यूरोपियन ड्रेस में रहते थे और बंगाल में धोती-कुर्त्ता पहनकर उन्होंने काम किया। उन्होंने अपना मुसलमानी नाम रख लिया था। वे खतरे से खाली हो गए। जेल में कुछ ही दूर पर दो सशस्त्र रक्षकों के साथ एक कार उनकी प्रतीक्षा कर रही थी। राँची तक वे इसी मोटर से गए। आगे उसका निभाना कठिन था, इसलिए मोटर भी जलाकर खाक कर दी गई। अब वे पैदल ही यात्रा करते हुए गया को चल पड़े।

फरारी का जीवन कैसे बीता ?

बाहर निकलते ही कार्य करने की समस्या आई। देश की ज्वाला आजादी की देवी ने उन्हें जेल से बाहर निकलने को विवश किया था, इसलिए उन्हें यह संकट उठाना पड़ा। कार्य करने की योजना मन में लेकर गया से काशी आए। यहाँ नगवा में उन्हें काफी छात्र मिले, कुछ सहायक भी तैयार हुए। उत्तरी भारत के आन्दोलन का विवरण लेकर और तत्कालीन कार्यकर्त्ताओं को कुछ उचित आदेश देकर इन्होंने रीवाँ के मार्ग से दक्षिण भारत की यात्रा प्रारम्भ की। इसी बीच में कार्य-समिति के स्थान पर काम आने वाली निर्देशक मण्डली के कुछ व्यक्तियों से भी आपका परिचय हुआ। कुछ समय तक उन्होंने उसी के अन्तर्गत रहकर कार्य किया; किन्तु बाद में मतभेद हो जाने के कारण उन्हें वह छोड़ देना पड़ा और अपना नया ही कार्यक्रम देश में घूम-घूमकर प्रारम्भ किया।

पटवर्धन से भेंट

बम्बई में उनकी श्री पटवर्धन से भेंट हुई। श्री पटवर्धन उस समय पश्चिमी भारत को एक नये ही साँचे में ढालने का प्रयत्न कर रहे थे। श्रीमती अरुणा आसफअली और डा० लोहिया उस समय कलकत्ता में थे। फिर क्या था, सबने ही मिलकर कार्य प्रारम्भ कर दिया। किन्तु इस कार्य के लिए कार्यकत्ताओं को ट्रेनिंग देना आवश्यक था। इसके लिए भारत की भूमि उपयुक्त न जँचती थी; कारण कि सर्वत्र सी० आई० डी० के गुप्तचरों का साम्राज्य था। अतएव इसके लिए नेपाल की सीमा पर जगह खोजी गई। अप्रैल, सन् 1943 में नेपाल के एक जंगल में कार्यकर्त्ताओं का पहला सम्मेलन हुआ और उसी समय आजाद हिन्द दस्ते का निर्माण हुआ।

स्वतन्त्रता के सैनिकों से

अपने फरारी के दिनों में आपने 'स्वतन्त्रता के सैनिकों से' शीर्षक से एक विज्ञप्ति प्रकाशित करनी प्रारम्भ की थी; जिसमें देश के नवयुवकों को इस आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने के लिए पुकार होती थी। आपने जितनी भी विज्ञप्तियाँ इन दिनों प्रकाशित कीं, वे सब आपकी राजनीति-कुशलता और कार्य-पटुता की परिचायक हैं। आपके फरारी

जीवन में खुफिया पुलिस ने सारे भारत में आपका पीछा किया, परन्तु वह आपको न पा सकी। आपकी गिरफ्तारी के लिए हजारों रुपये के इनाम की घोषणा की गई थी। डा० राममनोहर लोहिया के साथ आपने सारे भारत का दौरा किया।

आजाद दस्ते ने छुड़ाया

श्री जयप्रकाशनारायण ने हजारी बाग जेल से भागकर भारत में सर्वत्र दौरा किया और किस प्रकार नेपाल में जाकर 'आजाद दस्ता' नाम से राष्ट्रीय गुरिल्लों को ट्रेनिंग दी, और किस प्रकार बाद में इन गुरिल्लों ने उन्हें नेपाल की जेल से छुड़ाया इसका विवरण बड़ा मनोरंजक है।

हजारी बाग जेल से भाग निकलने के बाद श्री जयप्रकाशनारायण ने भारत के कार्यकर्त्ताओं को संगठित करने और उनको ट्रेनिंग देने के लिए 'नेपाल' को ही चुना था। जब उन्होंने वहाँ गुरिल्ला ट्रेनिंग देनी प्रारम्भ की, तो राज्य की पुलिस को सन्देह हुआ। फलस्वरूप उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। जेल से उन्होंने किसी प्रकार खबर भेजी कि उन्हें उस समय छापा मारकर छुड़ा लिया जाए, जबकि वहाँ की पुलिस अंग्रेजों की पुलिस को सौंपने जा रही हो। 'आजाद दस्ते' के अफसरों ने एक मीटिंग में यह निश्चय किया कि क्योंकि अंग्रेजी पुलिस की ताकत और उसको सौंपने की तिथि अनिश्चित है, इसलिए जेल पर अचानक रात को छापा मारकर, जयप्रकाश बाबू को छुड़ाना ठीक होगा। तत्काल ही इस निर्णय को कार्यान्वित किया गया और उन्हें छुड़ाने के प्रयत्न में राज्य के दो पुलिस वाले मारे गए, परन्तु जयप्रकाश नारायण सफलतापूर्वक उस फन्दे से छूट गए।

इसके बाद वे पुन: भारत आए और देश में पुलिस की आँखों से बच-बचकर कार्य करते रहे। वे कई बार पंजाब आए और गए और उन्हें आश्रय देने के अभियोग में सन्देहवश बहुत से व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया। ऐसे व्यक्तियों में इन पंक्तियों का लेखक भी एक था।

गिरफ्तारी और नज़रबन्दी

जब आप पंजाब की यात्रा कर रहे थे तो जयप्रकाश बाबू को फ्रन्टियर मेल से यात्रा करते समय अमृतसर और लौहार स्टेशनों के बीच पिस्तौल दिखाकर गिरफ्तार किया गया। वह दिन 18 सितम्बर, सन् 1943 का मनहूस प्रात:काल था। वे उस समय पूर्व से उत्तरपश्चिम के किसी पहाड़ी स्थान पर जा रहे थे। ऐसा मालूम होता है कि जयप्रकाश बाबू के पंजाब में जाने की सूचना दिल्ली पुलिस ने पंजाब की पुलिस को दे दी थी। गाड़ी के अमृतसर पहुँचने तक उनकी यात्रा काफी सुविधाजनक रही।

जब गाड़ी अमृतसर स्टेशन पर आकर रुकी तो काफी सवेरा हो गया था। उन्होंने वहाँ चाय पी, और अभी वे चाय पीकर समाप्त भी न कर पाए थे, कि एक अंग्रेज और दो सिख अफसर डिब्बे में घुसे। वे सी० आई० डी० के थे, किन्तु वैसे साधारण वस्त्र पहने

हुए थे। उनकी इस वेश-भूषा से जयप्रकाश बाबू को किंचित् भी सन्देह नहीं हुआ कि वे लोग उन्हें गिरफ्तार करने आए हैं। अमृतसर से गाड़ी चलने तक उन्होंने कुछ नहीं कहा। परन्तु जब गाड़ी लाहौर की ओर जा रही थी तो अंग्रेज अफसर ने उठकर पिस्तौल दिखाकर जयप्रकाश बाबू को पकड़ लिया। दोनों सिख-अफसरों ने भी उसकी सहायता की।

शाही किले में

फलस्वरूप उन्हें लाहौर के समीपवर्ती मुगलपुरा स्टेशन पर उतार लिया गया और फिर लाहौर के शाही किले में ले जाकर अनिश्चित काल के लिए बन्द कर दिया गया। पंजाब सरकार ने उन्हें नोटिस देकर 1943 में राजबन्दी घोषित कर दिया। नजरबन्दी के दिनों में उनसे पंजाब सरकार का एक उच्च अंग्रेज अफसर और एक मुस्लिम नवयुवक प्रति सप्ताह बातें करने आते थे। वहाँ पर जयप्रकाश बाबू को जो विषम यन्त्रणाएँ दी गईं, वे समाचारपत्रों के पाठकों को भली प्रकार विदित हैं।

रिहाई

लाहौर के शाही किले से जयप्रकाश बाबू को जनता के बहुत आन्दोलन करने पर आगरा सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया और वे वहाँ पर लगभग एक वर्ष रहे। बाद में सब नेताओं के बाहर आ जाने पर जनता में जागृति हो गई थी। समय बदला। जनता के मन्त्रिमण्डल बने। जनमत के आगे सरकार झुकी और जयप्रकाश बाबू रिहा कर दिये गए।

जन्म और शिक्षा

आपका जन्म सारन जिले (बिहार) में हुआ था। सन् 1922 से 8 वर्ष तक अमेरिका में रहकर स्वावलम्बी जीवन व्यतीत करते हुए आपने शिक्षा प्राप्त की। सन् 1929 में आप भारत लौटे। पं० जवाहरलाल नेहरू को इनकी योग्यता पहचानते देर न लगी। उन्होंने आपको कांग्रेस का मजदूर अनुसन्धान विभाग सौंप दिया। थोड़े ही दिनों में अपनी कार्यकुशलता से आप अ० भा० कांग्रेस कमेटी के कार्यकर्त्ता-मन्त्री नियुक्त कर दिये गए। इसके बाद नासिक जेल में कांग्रेस समाजवादी दल का जन्म हुआ। पटना में इस दल का जो प्रथम अधिवेशन हुआ था, उसके अध्यक्ष श्री आचार्य नरेन्द्रदेव और मन्त्री आप बनाये गए। आपका सारा जीवन संघर्षमय रहा है।

लौहार किले में व्यवहार

श्री जयप्रकाश नारायण ने लाहौर किले में अपने साथ किये गए व्यवहार के सम्बन्ध में बताया था कि वह किला भारत सरकार का अत्याचार भवन था। उन्होंने कहा—"मुझे लगातार 16 महीने तक तन्हाई में रखा गया। मुझे किसी से मिलने व बातें करने की छूट न थी। करीब 50 दिन तक विभिन्न प्रान्तों की खुफिया पुलिस के आदमी दिन में 12-14 घंटे तक मेरे से सवाल-जवाब करते रहे। उन्होंने मुझे और कांग्रेस-नेताओं को बुरी-से-बुरी गालियाँ दीं। सवाल-जवाब के अन्तिम 10 दिनों में मुझे रात-दिन जागते रखा गया।

सिवाय शौच करने के मुझे उस स्थान से कहीं और नहीं जाने दिया जाता था। तन्हाई में एक बार मैंने शिकायत की, कि मुझे खुली हवा में कसरत करने दी जाए। बड़ी मुश्किल से मुझे कसरत करने की छूट मिली। किन्तु कसरत करते समय भी मेरे हाथों में हथकड़ियाँ लगीं रहती थीं। मैंने उसके विरुद्ध नाराजगी प्रकट की और यह धमकी दी कि यदि कसरत के समय मेरे हाथों से हथकड़ी न उतारी गई तो मैं अनशन कर दूँगा। यह खबर गलत है कि मुझे पीटा गया या मुझे बर्फ की सिल्लियों पर लिटाया गया।''

श्री जयप्रकाश की सिंह-गर्जना

जेल से छूटने पर जयप्रकाश बाबू ने भारत के कोने-कोने में अपने सम्मान में आयोजित अनेक सभाओं में जो भाषण दिए, वे सभी गौरव की वस्तु हैं। पटना की एक सार्वजनिक सभा में भाषण करते हुए आपने कहा था—

'' मैं दावे के साथ कहता हूँ कि अंहिसा में मेरा भी उतना ही विश्वास है जितना कि राष्ट्रपति आजाद का, और हिंसा में राष्ट्रपति आजाद का उतना ही विश्वास है जितना कि मेरा। महात्मा जी की अहिंसा के आगे मैं नतमस्तक हूँ, किन्तु उनके समान आत्मबल और शक्ति न होने के कारण मैं बन्दूक लेकर दुश्मन से लड़ना आसान समझता हूँ। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि कोई भी संस्था तभी तक जीवित रह सकती है, जब तक उसमें नया रक्त-संचार होता रहे। क्योंकि इसके बन्द हो जाने से उसकी मृत्यु निश्चित है। मैं जिस संस्था का सदस्य हूँ उसका विश्वास है कि जब तक पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति नहीं हो जाती तब तक कांग्रेस के अन्दर एकता बनी रहे, हम इसे कभी नहीं भूल सकते। हम इस बात का विश्वास दिलाते हैं कि चाहे हमारे साथ कैसा भी बर्ताव हो, हमारी यही नीति बनी रहेगी। सन् 42 की 9 अगस्त को कांग्रेस ने 'भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पास किया था, किन्तु अंग्रेज आज भी यहाँ मौजूद हैं। आज भी यूनियन जैक फहरा रहा है। इसलिए हमें यह सोचना है कि हम किस तरह उन्हें यहाँ से निकाल भगाएँ। यूनियन जैक को फाड़ फेंकें, आग में जला दें और उसकी धज्जियाँ उड़ा दें ! इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर आगे के लिए अपना संगठन करना चाहिए। जेलखाने से बाहर आने पर हमने जो कार्य आरम्भ किया, उस पर हमें कभी-कभी सन्देह होता था कि हम ठीक कर रहे हैं या गलत। किन्तु आज मैं आपमें यह उत्साह पाता हूँ तो कुछ और ही समझ रहा हूँ। आज मेरा भ्रम अच्छी तरह दूर हो गया है और हमारा विश्वास है कि आपकी हमदर्दी एवं सहायता से हम निरन्तर आगे बढ़ते जाएँगे।

'' आज मैं नया रहस्योद्घाटन करना चाहता हूँ, और वह जमशेदपुर के पुलिस वालों के विद्रोह के सम्बन्ध में है। यह एक नई बात हुई जो शायद और कहीं नहीं हुई। वहाँ के करीब 700 पुलिस के सिपाहियों ने बगावत कर दी थी, और देशवासियों पर लाठी चलाने से इन्कार कर दिया था। उन्हें दबाने के लिए दस-पन्द्रह हजार गोरे भेजे गए, 33 सिपाही

गिरफ्तार किये गए, फिर भी उन सिपाहियों ने हिम्मत नहीं हारी। आज हमें उन सिपाहियों की भी याद आ रही है, और मैं उम्मीद करता हूँ कि उनके और पुलिस-भाई भी इस बात से सबक लेंगे तथा जब समय आएगा तब उस पर अमल करेंगे। कांग्रेस हाई कमाण्ड की ओर से बराबर यह कहा जाता है कि उन्हें कब लड़ना है, या कब नहीं लड़ना है—इसकी पूरी जानकारी वे रखते हैं। किन्तु मुझे उस बात से बहुत दु:ख हुआ कि जब हमारे नेतागण जेलों से बाहर निकले तो उन्होंने हमारी गलतियों को ही सामने रक्खा। हमारा ख्याल है कि स्वयं उन्होंने भी एक गलती की थी और बहुत बड़ी गलती की थी। हम यहाँ इस बात का जिक्र किए बिना नहीं रह सकते कि उस समय कांग्रेस हाई कमाण्ड ने बड़ी गैर-जिम्मेदारी से काम लिया। उस समय जो स्थिति थी, वह किसी भी देश में बार-बार नहीं आती। अंग्रेजों को निकालने का वह सुन्दर मौका था, जो कि हाथ से निकल गया।

" आश्चर्य तो यह है कि देशवासियों को राह दिखाने के लिए जिन्होंने उस घोर अन्धकार में प्रकाश की धुँधली ज्योति जगाई, हमारे नेतागण उन्हें ही गलतियाँ सुझाते हैं और यह भूल जाते हैं कि दरअसल उस समय उनको ही मशाल लेकर आगे चलना था। हम लोगों पर देश के साथ गद्दारी करने का भी दोषारोपण किया जाता है। "

भावी कार्यक्रम

सन् 1942 में 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पास किया गया था। किन्तु अंग्रेज आज तक भी भारत छोड़कर नहीं गए हैं और यहीं मौजूद हैं। नेतागण कहते हैं कि स्वराज्य आ रहा है। मुझे शक है कि वह स्वराज्य कैसा होगा। मैं यह भी जानता हूँ कि गोलमेज सम्मेलनों से स्वराज्य नहीं मिला करता। फिर भी मेरा ख्याल है कि दिल्ली में जो इन दिनों वार्त्ता चल रही है, वह गोलमेज-सम्मेलन-जैसी नहीं है, बल्कि सन् 1857 के बाद भी 1942 की सबसे बड़ी क्रान्ति तथा नेताजी सुभाषचन्द्र बोस द्वारा की गई आजाद हिन्द फौज की स्थापना का ही यह नतीजा है। उक्त फ़ौज की स्थापना का भारत की स्थल, जल, एवं वायु सेना विभाग के लोगों पर क्या असर है, यह बिल्कुल प्रत्यक्ष है। हम देख रहे हैं कि आज देश में सर्वत्र राष्ट्रीय भावना, आजादी की लहर तथा विद्रोह की आग फैली हुई है और इन्हीं सब परिस्थितियों से बाध्य होकर विलायत से तीन मन्त्री आए हैं और कांग्रेस से समझौते की वार्ता कर रहे हैं।

अगर किसी प्रकार वार्त्ता सफल भी हो जाए, फिर भी यह निश्चित है कि इससे सोलह आने स्वराज्य नहीं मिल सकता। कारण यह है कि हम दरअसल अभी तक सोलह आने स्वराज्य लेने के योग्य नहीं हो सके हैं। पिछले चुनाव का उदाहरण हमारे सामने है। अगर कुल 40 सीटों में से 30 पर ही हमारा कब्जा हो जाता, तब भी हम किसी कदर स्वराज्य पाने के योग्य हो सकते थे। किन्तु ऐसा नहीं हुआ। इसलिए मुमकिन है कि हमें जो स्वराज्य मिलेगा वह खण्डित स्वराज्य ही होगा। मैं अपने प्रति प्रदर्शित किये गए सम्मान के लिए

आप सबको पुन: धन्यवाद देता हूँ और निवेदन करना चाहता हूँ कि आप उस दिन का इन्तजार करें जब कि मैं क्रान्ति के कार्यक्रम को आपके सामने रखने में समर्थ हो सकूँ।

क्रान्तिपूर्ण अभिवादन

हजारी बाग जेल से निकलकर बाबू जयप्रकाश ने देश में सर्वत्र घूम-घूमकर आन्दोलन का सक्रिय अध्ययन किया। वास्तव में उनके बाहर आने पर ही देश में सर्वत्र जागृति के चिह्न दिखाई देने लगे थे। उस समय उन्होंने स्वतन्त्रता के समस्त सैनिकों के नाम जो 'क्रान्तिपूर्ण अभिवादन' नाम से विज्ञप्ति छपवाई थी, वह निम्न प्रकार है :

साथियो,

सबसे पहले मैं आपको तथा उन साथियों को, जो युद्धबन्दी हो गए हैं, शत्रु से भारी मोर्चा लेने के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ। हमारे इस चिरपीड़ित तथा दलित देश में ऐसी कोई लड़ाई पहले कभी नहीं हुई और न ही होने की आशा थी। वास्तव में यह वही 'खुला विद्रोह' था जिसका आयोजन हमारे बेजोड़ नेता महात्मा गांधी ने किया था।

फिलहाल तो यह विद्रोह निस्सन्देह दबा दिया गया दिखाई देता है। इससे हमें कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। सच तो यह है कि यदि पहला ही प्रहार सफल को जाता और उससे साम्राज्यवाद पूर्णत: नष्ट हो जाता, तब वह आश्चर्य की बात होती। शत्रु ने स्वयं ही यह स्वीकार किया है कि इस विद्रोह से उसकी सत्ता नष्ट होते-होते बच गई। इसी से प्रकट होता है कि हमारी राष्ट्रीय क्रान्ति का प्रथम अध्याय कितना सफल रहा और प्रथम अध्याय को किस प्रकार दबाया गया ? क्या ये शत्रु सैन्य-शक्ति, गुंडाशाही का बढ़ता हुआ दौर-दौरा, लूट-पाट, अग्नि और हत्या के काण्ड थे, जिन्होंने यह कार्य किया ? नहीं। यह समझना गलत है कि विद्रोह को दबा दिया गया है। सब क्रान्तियों के इतिहास से पता चलता है कि क्रान्ति कोई घटना विशेष नहीं होती। यह तो एक अध्याय, एक सामाजिक क्रम का नाम है और फिर क्रान्ति के विकास में उतार-चढ़ाव स्वाभाविक ही हैं। इस समय हमारी क्रान्ति उन्नत होकर विजय पर विजय प्राप्त करने की बजाय जल्दी से उतार पर चलने लगी है, इसलिए नहीं कि साम्राज्यवादी आक्रान्ताओं ने अपने अधिक शक्तिशाली पार्थिव बल का प्रयोग किया है, बल्कि इसके दो महत्त्वपूर्ण कारण हैं।

पहले तो राष्ट्रीय क्रान्तिकारी शक्तियों का कोई कुशल संगठन नहीं था जो कार्य करता रहता और उन प्रभावपूर्ण शक्तियों का संचालन करता जिनका विकास हो गया था। यद्यपि कांग्रेस एक विशाल संगठन है, फिर भी यह उस सीमा तक तैयार न था जिस तक कि इस क्रान्ति को पहुँचना था। संगठन की इतनी भारी कमी थी कि महत्त्वपूर्ण कांग्रेसजन भी उसकी प्रगति से अनभिज्ञ रहे और क्रान्ति की प्रारम्भिक अवस्था में बहुत-से कांग्रेसी क्षेत्रों में काफी देर तक यह विवाद ही का विषय रहा कि जो कुछ जनता कर रही है क्या

वास्तव में वह कांग्रेस के कार्यक्रम के अनुसार ही था। इस सम्बन्ध में यह शोचनीय बात उल्लेख करने योग्य है कि पर्याप्त संख्यक प्रभावशाली कांग्रेसजन अपनी इस मनोवृत्ति को 'स्वतन्त्रता के लिए अन्तिम लड़ाई' की भावना के धरातल तक न उठा सके। महात्मा गांधी, डा० राजेन्द्रप्रसाद या सरदार पटेल-जैसे नेताओं के दृष्टिकोण में जो तत्परता आवश्यकता और दृढ़ निश्चय दिखाई देते थे उनका समस्त कांग्रेस-नेताओं के मस्तिष्क और हृदय पर प्रभाव नहीं पड़ा।

दूसरे, जब क्रान्ति का प्रथम अध्याय समाप्त हो गया तो जनता के सम्मुख कोई आगे का कार्यक्रम नहीं रखा गया। लोगों ने अपने क्षेत्रों में ब्रिटिश राज को पूर्णत: छिन्न-भिन्न कर देने के बाद यह समझ लिया कि उनका कार्य समाप्त हो गया है और वे अपने घरों को यह सोचे बिना चले गए कि उन्हें और क्या करना है। यह उनका दोष नहीं था। गलती तो हमारी थी। दूसरे अध्याय के लिए उनके सम्मुख हमें कार्यक्रम प्रस्तुत करना चाहिए था। जब यह नहीं किया गया तो विद्रोह गतिहीन हो गया और उतार का रूप प्रारम्भ हो गया। विद्रोह की धीमी गति को और अधिक शिथिल बनाने के लिए जब पर्याप्त संख्या में अंग्रेज सैनिक आए तो इससे कितने ही दिन पहले यह स्थिति उत्पन्न हो गई थी। दूसरे अध्याय में जनता के सम्मुख क्या कार्यक्रम उपस्थित करना चाहिए था ? इसका उत्तर इसी से दिया जा सकता है कि क्रान्ति किस प्रकार की होती है, क्रान्ति एक विनाशात्मक क्रिया ही नहीं बल्कि साथ ही एक विशाल रचनात्मक शक्ति भी होती है। कोई भी क्रान्ति सफल नहीं हो सकती यदि वह केवल विनाशात्मक ही हो। यदि इसे जीवित रहना है तो नष्ट की गई सत्ता के स्थानों में इसे नई सत्ता को जन्म देना चाहिए। हमारी क्रान्ति को भी देश के विस्तृत क्षेत्रों में विनाशात्मक कार्य को पूरा करने के बाद रचनात्मक कार्यक्रम की आवश्यकता थी। जिन लोगों ने विदेशी सत्ता के उन साधनों और लक्ष्यों को नष्ट कर दिया, जिनके द्वारा वह शासन करती थी और उसके अधिकारियों को भगा दिया तो उनको चाहिए था कि अपने-अपने क्षेत्रों में वे क्रान्तिकारी सरकार के दल स्थापित करते और अपनी पुलिस और सेना को जन्म देते। यदि ऐसा कर दिया जाता तो इससे अभूतपूर्व मात्रा में शक्ति उपलब्ध हो जाती और रचनात्मक कार्य के लिए इतना विस्तृत क्षेत्र प्राप्त हो जाता कि क्रान्ति की लहरें उत्तरोत्तर ऊपर उठती चली जातीं और यदि क्रान्ति देशव्यापी होती तो अन्त में साम्राज्यशाही सत्ता छिन्न-भिन्न हो जाती और समस्त देश की सर्वोच्च सत्ता जनता के हाथ आ जाती।

कुशल संगठन तथा राष्ट्रीय क्रान्ति के पूर्व कार्यक्रम का अभाव, वर्तमान क्रान्ति के प्रथम अध्याय में शिथिलता आ जाने के ये दो कारण थे।

अब प्रश्न यह है कि हमारे सम्मुख क्या कार्य है ? पहले तो हमें अपने और जनता के मन से खिन्नता को निकाल देना चाहिए और इसके स्थान पर प्राप्त सफलता की प्रसन्नता और भावी सफलता की आशा का एक वातावरण उत्पन्न करना चाहिए।

दूसरे, यह क्रान्ति किस प्रकार की है इस बात को हमें अपने और जनता के मस्तिष्क

के सम्मुख अविचल रूप से देखना चाहिए। स्वतन्त्रता के लिए यह हमारी अन्तिम लड़ाई है। अत: हमारा उद्देश्य विजय प्राप्त करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। इसमें समझौते की कोई गुंजाइश नहीं है। राष्ट्रीय सरकार की स्थापना के लिए राजगोपालाचारी-जैसे व्यक्ति जो प्रयत्न कर रहे हैं वे केवल निष्फल ही नहीं बल्कि उस अंश तक निश्चित रूप से हानिकर भी हैं जिस अंश तक वे जनता के ध्यान को वास्तविक समस्या से दूर ले जाते हैं। 'भारत छोड़ो' और 'राष्ट्रीय सरकार' के नारों के बीच कोई समझौता नहीं हो सकता। जो लोग कांग्रेस और लीग की एकता के नारे पर जोर दे रहे हैं व साम्राज्यशाही प्रचार में सहायता पहुँचा रहे हैं। राष्ट्रीय सरकार की स्थापना में एकता का अभाव अड़चन नहीं डाल रहा है, बल्कि साम्राज्य की सत्ता त्यागने की स्वाभाविक अनिच्छा अड़चन डाल रही है। श्री चर्चिल ने इस सम्बन्ध में कोई सन्देह नहीं रखा। जब उन्होंने हाल ही में कहा था कि साम्राज्य का दिवाला निकालने के लिए मैंने सम्राट् के प्रधानमन्त्री का पद ग्रहण नहीं किया है। वह समाज का मूर्ख विद्यार्थी है जो यह आशा करता है कि साम्राज्य अपने-आप विलीन हो जाते हैं। वे भूतपूर्व क्रान्तिकारी, जो विनम्र स्मारक पत्रों की प्रलयंकारी शक्ति द्वारा भारत को साम्राज्यवाद से मुक्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं, अपने-आपको इतिहास में सबसे अधिक दयनीय मूर्ख बना रहे हैं।

साम्राज्यशाही के शब्द-जाल के अनुसार सामयिक आवश्यकता भारतीय जीवन के महत्त्वपूर्ण अंगों में एकता की नहीं है, बल्कि राष्ट्र की समस्त क्रान्तिकारी शक्तियों के एकीकरण की है, और कांग्रेस के झंडे के नीचे इनका एकीकरण पहले ही हो चुका है। कांग्रेस और लीग की एकता से इन शक्तियों में वृद्धि होने की सम्भावना नहीं है, किन्तु इनके और भी पिछड़ जाने की सम्भावना है; क्योंकि लीग सम्भवत: क्रान्ति और स्वतन्त्रता के मार्ग का अनुसरण नहीं कर सकती।

तब, साम्राज्यवाद को समूल नष्ट करना ही हमारा उद्देश्य है और इसको अविचल रूप से हमें अपने ध्यान में रखना चाहिए। इस प्रश्न पर कोई समझौता नहीं हो सकता। या तो हम विजयी होंगे या पराजित हो जाएँगे, और पराजित तो हम होंगे नहीं। केवल इसी-लिए कि हमने विजय-प्राप्ति के लिए निरन्तर कार्य करने का संकल्प कर लिया है, बल्कि इसलिए भी कि संसार की प्रभावशाली शक्तियाँ साम्राज्यवाद और फासिस्टवाद के विनाश को दिन-पर-दिन अधिक निकट ला रही हैं। यह विश्वास न करिए कि शान्ति-सम्मेलन से परिश्रम के साथ इस युद्ध के जो परिणाम निश्चित किये जाएँगे, वे युद्धोत्तर कालीन संसार के भाग्य का भी निपटारा कर देंगे। युद्ध एक विचित्र रसायन है और इसके गुप्त कमरों में ऐसी शक्तियाँ सूक्ष्म रूप में विद्यमान हैं जो विजयी तथा विजित दोनों की योजनाओं को समान रूप से धूल में मिला देती हैं। गत महायुद्ध की समाप्ति के बाद किसी भी शान्ति-सम्मेलन ने यह निश्चय नहीं किया था कि यूरोप और एशिया के चार विशाल साम्राज्य

रूसी, जर्मन, आस्ट्रियन तथा ओटोमन-धूल में मिल जाएँगे। न ही रूसी, जर्मन और तुर्क क्रान्तियाँ लायड जार्ज, क्लिमेंश्यु या विल्सन द्वारा निर्धारित की गई थीं।

समस्त संसार में जहाँ लोग लड़ रहे हैं, मर रहे हैं और संकट झेल रहे हैं, रसायनज्ञ अपना काम कर रहा है, जैसा कि वह भारत में कर रहा है, जहाँ उसने पहले ही विशाल सामाजिक क्रान्ति फैला दी है। वर्तमान युद्ध की समाप्ति के बाद चर्चिल, रूजवेल्ट, हिटलर और तोजो, इनमें से कोई भी संसार के भाग्य का निर्णय न करेगा। ऐसी शक्तियाँ जिनका हम प्रतिनिधित्व करते हैं इस ऐतिहासिक कार्य को पूरा करेंगी। क्या इसमें हम सन्देह कर सकते हैं कि भविष्य के सम्बन्ध में सोचे-विचारे बिना लाखों आदमी अथक कष्ट उठा रहे हैं ? क्या हम विश्वास कर सकते हैं कि लाखों व्यक्ति उन असत्य बातों से सन्तुष्ट हैं जो उनके शासक उनको नित्य बताते हैं। नहीं, ऐसा नहीं हो सकता।

इसलिए पूर्ण विजय के उद्देश्य पर निश्चित रूप से अपनी दृष्टि जमाकर हमें आगे बढ़ना है। ठोस रूप से हमें क्या करना चाहिए ? जब एक जनरल लड़ाई में हारता है या जीतता है, तो वह क्या करता है ? क्या वह शक्ति संगठित करता है और दूसरी लड़ाई के लिए तैयारी करता है ? संगठन और तैयारी करने के लिए रोमेल, भारी विजय प्राप्त करने के बाद, अल-अलामीन पर ठहर गया। अलेकजेण्डर ने भी तैयारी की, और उसने अपनी भारी पराजय को प्रशंसापूर्ण विजय में परिणत कर दिया। हमारी तो यह पराजय भी नहीं थी। वास्तव में हमने लड़ाई के पहले दौर में विजय प्राप्त की, क्योंकि हमारे देश के विस्तृत क्षेत्र में आक्रान्ता अंग्रेजों की शासन-प्रणाली का पूर्णत: उन्मूलन कर दिया गया। जनता ने अब यह अनुभव से जान लिया है कि जब वह सामूहिक शक्ति से आक्रमण करती है तो पुलिस, मजिस्ट्रेटों, अदालतों और जेलों का बना हुआ भव्य भवन जो ब्रिटिश राज के नाम से प्रसिद्ध है, कागजी घर के समान सिद्ध होता है। इस सबक के भूलने की सम्भावना नहीं है और दूसरे आक्रमण के लिए यह पहला मोर्चा होगा।

इसलिए इस समय हमारा तीसरा और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य आगामी भारी आक्रमण के लिए तैयारी करना है। शायद संगठन और अपने को अनुशासन में रखना—इस समय हमारे मूल मन्त्र हैं।

अगला आक्रमण प्रारम्भ करने की हम कब आशा करें। कुछ लोगों का विचार है कि आगामी 5 या 6 साल तक जनता फिर विद्रोह करने के लिए तैयार न होगी। शान्ति-काल में यह अनुभव ठीक हो सकता है, लेकिन तूफानी युद्ध-पीड़ित संसार पर, जिसमें घटना-चक्र तेजी से चल रहा है, यह लागू नहीं होता। अंग्रेज तानाशाहों-लिनलिथगोओं, हैलेटों, स्टचूअर्टों तथा ऐसे ही अन्य हजारों लोगों और उनके नीचे भारतीय नौकरों के पाशविक अत्याचार से जनता शायद इस समय भले ही दब गई हो, लेकिन उसको अत्याचारियों को मित्र बनाने में उन्हें कहीं भी सफलता नहीं मिली है। समस्त देहाती क्षेत्रों में, जहाँ अंग्रेजों ने अपने ढंग से नाजियों-जैसे पैशाचिक अत्याचार किए थे, अत्यधिक

तीव्र असन्तोष, क्रोध और प्रतिकार की पिपासा तीव्र रूप से फैली हुई है। जनता को केवल यह जानना है कि फिर आक्रमण करने तथा आगामी आक्रमण की योजनाओं को क्रियात्मक, सम्मिलित और अनुशासनपूर्ण ढंग से कार्यान्वित करने के लिए यह पूर्णत: हितकर होगा। अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं से भी हमें सहायता मिल सकती है। इसके बाद गांधीजी का आमरण अनशन-व्रत है, जो किसी भी समय कर सकते हैं। यह हमें तथा लोगों को निरन्तर स्मरण कराता है कि हम और वे शिथिल न पड़ें, विचलत न हों, और विश्राम न करें।

आगामी आक्रमण का प्रश्न क्रान्ति के रचनात्मक कार्य के प्रश्न अर्थात् क्रान्तिकारी सरकार की शाखाएँ स्थापित करने से सम्बद्ध है। पिछले प्रश्न से हिंसा और सशस्त्र सेनाएँ रखने का प्रश्न सम्बन्धित है। इसलिए इस प्रश्न के सम्बन्ध में मैं अपना मत आपके सम्मुख प्रस्तुत करना चाहता हूँ: क्योंकि मेरे विचार में हमारी क्रान्ति के भविष्य से इसका गहरा सम्बन्ध है।

सबसे पहले मैं, अनुभव करता हूँ कि ब्रिटेन की सरकार ने इस क्रान्ति के समय किये गए हिंसात्मक कार्यों के सम्बन्ध में जो शोर मचाया है उसके बारे में कुछ शब्द कहूँ। अत्यधिक उत्तेज़ना दिलाने पर कुछ हिंसात्मक कार्य अवश्य किये गए थे, लेकिन विद्रोह की विशालता और वैयक्तिक तथा सामूहिक अहिंसा के आश्चर्यजनक प्रयोग की तुलना में यह नगण्य है। शायद यह अनुभव नहीं किया गया है कि विदेशी सत्ता के हजारों अंग्रेज और भारतीय कर्मचारियों का जीवन कुछ दिनों तक जनता की दया पर निर्भर था। जनता ने अपने शत्रुओं पर दया की और उनका जीवन तथा सम्पत्ति बख्श दी। उन हजारों वृद्धों और नवयुवकों के शान्त और दिव्य साहस के सम्बन्ध में क्या कहना है जिन्होंने हाथ में क्रान्ति का झंडा लिए और मुँह से 'इन्कलाब जिन्दाबाद' का नारा लगाते हुए अपने सीने में शत्रु की गोलियाँ खाईं। क्या इस दैवी उत्साह के लिए अंग्रेजों के पास कोई प्रशंसा का शब्द है ?

किसी भी स्थिति में, क्या यह उल्लेखनीय नहीं है कि ब्रिटिश सत्ता, जो हिंसा से ओत-प्रोत है, जो हिंसा पर अधारित है, जो प्रतिदिन अत्यधिक क्रूरतापूर्ण हिंसात्मक कार्य करती है, जो लाखों व्यक्तियों को पीसती है और उनका खून चूसती है, दूसरों के हिंसात्मक कार्यों पर इतना शोर मचाए। इससे अंग्रेजों का क्या सम्बन्ध है कि उनसे लड़ने के लिए हम किन शस्त्रों का प्रयोग करते हैं। क्या उन्होंने यह प्रतिज्ञा कर ली है कि यदि विद्रोही अहिंसात्मक रहे तो वे भी अहिंसात्मक नीति का पालन करेंगे ? हम चाहे किन्हीं शस्त्रों का प्रयोग करें, अंग्रेजों के पास तो हमारे लिए गोलियाँ, लूट-मार, बलात्कार और अग्नि-काण्ड ही हैं। इसलिए इस सम्बन्ध में उनको मौन ही रहना चाहिए कि हम उनके विरुद्ध किस ढंग से लड़ते हैं। इसका निश्चय करना एकमात्र हमारा ही काम है।

इस प्रश्न पर विचार करते हुए कि इसका हम पर क्या प्रभाव पड़ता है, पहले मैं आपको अहिंसा के सम्बन्ध में एक ओर गांधीजी और दूसरी ओर कार्यसमिति तथा अखिल

भारतीय कांग्रेस महसामिति के विचारों में जो मतभेद है उसका स्मरण कराऊँगा। गांधीजी किसी भी स्थिति में अहिंसा से विचलित होने के लिए तैयार नहीं हैं। उनके लिए यह प्रश्न विश्वास और जीवन-सिद्धान्त का है। लेकिन कांग्रेस के लिए ऐसा नहीं है। तभी कांग्रेस ने इस युद्ध के बीच बार-बार यह कहा है कि यदि भारत स्वतन्त्र हो गया यदि राष्ट्रीय-सरकार की स्थापना भी हो गई तो वह शस्त्रों से आक्रमण का विरोध करने के लिए तैयार हो जाएगी। लेकिन, यदि हम शस्त्रों का प्रयोग करके जापान और जर्मनी के विरुद्ध लड़ने के लिए तैयार हैं, तो हमें ब्रिटेन के विरुद्ध लड़ने में उसी ढंग का प्रयोग करने से क्यों इन्कार करना चाहिए ? इसका केवल यही उत्तर हो सकता है कि सत्ता-युक्त कांग्रेस सेना रख सकती है, परन्तु सत्ताहीन कांग्रेस नहीं रख सकती। लेकिन यदि क्रान्तिकारी सेना या इसका एक भाग विद्रोह कर दे तो क्या यह हमारे लिए असंगत नहीं होगा कि पहले तो हम सेना से विद्रोह करने के लिए अनुरोध करें और इसके बाद विद्रोहियों से यह कहें कि वे हथियार रख दें और नग्न सीने से अंग्रेजों की गोलियों का सामना करें ?

कांग्रेस की—गांधीजी की नहीं—स्थिति के सम्बन्ध में मेरी निजी व्याख्या स्पष्ट और निश्चित है। यदि देश स्वतन्त्र हो गया तो कांग्रेस हिंसात्मक रूप से आक्रमण का सामना करने के लिए तैयार है। अच्छा, हमने अपने-आपको स्वतन्त्र घोषित कर दिया है और ब्रिटेन को आक्रान्ता राष्ट्र भी करार दे दिया। फलतः बम्बई प्रस्ताव के अन्तर्गत ब्रिटेन से सशस्त्र लड़ना हमारे लिए उचित है। यदि यह गांधीजी के सिद्धान्तों के अनुरूप नहीं हो तो इसमें मेरा कोई दोष नहीं। कार्यसमिति और अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति ने गांधीजी के मत से भिन्न मत प्रकट किया है और अहिंसा का युद्ध में प्रयोग करने के सम्बन्ध में जो उनकी उचित धारणा है उसको अस्वीकार किया है। अंग्रेजी सत्ता ने इस प्रस्ताव को उचित रूप देने तथा नेतृत्व करने के लिए गांधीजी को अवसर नहीं दिया। इसलिए व्याख्या का अनुसरण करते हुए हमें गांधीजी के प्रति झूठा नहीं बनना चाहिए। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं अनुभव करता हूँ कि एक खरे कांग्रेसी की हैसियत से—अपने समाजवाद को इस प्रश्न से असम्बद्ध रखते हुए—यदि मैं ब्रिटिश आक्रमण का सशस्त्र विरोध करूँ तो यह मेरे लिए उचित ही होगा।

मुझे यह भी कहना चाहिए कि इस बात को स्वीकार करने में मुझे किसी प्रकार की हिचकिचाहट नहीं है कि एक वीर पुरुष की अहिंसा, यदि इसका व्यापक रूप से प्रयोग किया जाए तो हिंसा को अनावश्यक सिद्ध कर देगी। लेकिन ऐसी अहिंसा के अभाव में मुझे चाहिए कि इस क्रान्ति की प्रगति को रोकने तथा इसको असफल बनाने कि लिए धर्मशास्त्र की सूक्ष्मताओं से ढकी हुई कायरता को स्थान न दूँ।

क्रान्ति के अन्तिम अध्याय की पेचीदगियों को स्पष्ट रूप में समझकर, हमें अपनी सेनाओं को तैयार और संगठित करना है और उन्हें अनुशासन की शिक्षा तथा ट्रेनिंग देनी है। जो भी कुछ हम करें, निरन्तर हमें इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि हमारा यह

कार्य केवल षड्यन्त्र रूप में ही नहीं होगा। वह जन-समूह का सर्वांग विद्रोह होगा और यही हमारा लक्ष्य है। इसलिए हमारे विशाल टेक्निकल कार्य के साथ-साथ हमें जन-समूह में गाँवों के कृषकों और कारखानों, खानों, रेलों तथा अन्य स्थानों में काम करने वाले श्रमिकों में प्रभावशाली कार्य करना चाहिए। हमें चाहिए कि हम इनमें निरन्तर प्रचार करें, उनकी वर्तमान कठिनाइयों में सहायता करें, उनकी वर्तमान माँगों की लड़ाई के लिए उनका संगठन करें। अपने विविध कार्यों के लिए इनमें से चुने हुए सैनिक भरती करें और राजनैतिक तथा टेक्निकल दृष्टि से उनको ट्रेनिग दें। शिक्षण के द्वारा थोड़े लोग वह सफलता प्राप्त कर सकते हैं जिसे पहले हजारों लोग नहीं कर सके थे। प्रत्येक फिरके, ताल्लुके, थाने और सैनिकों का एक ऐसा दल आवश्यक होना चाहिए जो आगामी विद्रोह के लिए भावनाओं और सामग्री की दृष्टि से सुसज्जित हो।

भारतीय सेना तथा सरकारी व्यवस्था के सम्बन्ध में भी हमें कार्य करना है, हमें आन्दोलन और प्रदर्शन-सम्बन्धी कार्य करने हैं। स्कूलों, कालिजों और बाजारों में हमारे लिए कार्य हैं। राजवाड़ों में और सीमाओं पर भी कार्य करना है। यहाँ पर अपनी तैयारियों का अधिक साकार रूप में वर्णन करना मेरे लिए सम्भव नहीं है। इतना ही कह देना पर्याप्त है कि हमें अत्यधिक कार्य करना है और प्रत्येक व्यक्ति के लिए कार्य है। बहुत-सा कार्य तो इसी समय किया जा रहा है। लेकिन अभी और विशाल कार्य करना बाकी है।

युवकों के अतिरिक्त इस समस्त कार्य को कौन पूरा कर सकता है ? क्या यह आशा करना अत्यधिक है कि हमारे विद्यार्थी, जिन्होंने अभी ही बड़ा गौरवपूर्ण उदाहरण उपस्थित किया है, अपने वीरतापूर्ण कार्यों का अनुसरण करते रहेंगे और जो वचन उन्होंने दिए हैं उनका पालन करेंगे ? स्वयं विद्यार्थी ही इसका उत्तर देंगे।

मुझे स्पष्ट कर देना चाहिए कि तैयारी का यह अर्थ नहीं है कि लड़ाई कुछ समय के लिए बन्द हो जाएगी। नहीं, 'झड़प', 'सीमा क्षेत्र की कार्रवाई', 'छोटी-मोटी मुठभेड़', 'लुका-छिपी की लड़ाई', 'गश्त'-यह सब जारी रहना चाहिए। यह तो आक्रमण की तैयारी ही है।

जनता में पूर्ण विश्वास और अपने लक्ष्य में श्रद्धा रखते हुए हमें आगे बढ़ना चाहिए। हमें दृढ़ता से कदम रखना चाहिए। हमारा हृदय दृढ़ निश्चय की भावना से पूर्ण और दृष्टिकोण स्पष्ट होना चाहिए। भारतीय स्वतन्त्रता का सूर्य क्षितिज से ऊपर निकल आया है। हमारे सन्देह और झगड़े, निष्क्रियता और अविश्वास के बादल इस सूर्य पर आवरण डालकर हमें कहीं अपने ही द्वारा उत्पन्न हुए अन्धकार में न डाल दें।

अन्त में, साथियो, मैं यह कहना चाहूँगा कि एक बार फिर आपके सम्मुख अपनी सेवाएँ प्रस्तुत करके मुझे अनिर्वचनीय सुख और गौरव का अनुभव हुआ है। आपकी सेवा करने में, हमारे नेता के अन्तिम शब्द 'करो या मरो' मेरा पथ-प्रदर्शन करेंगे, आपका सहयोग मेरी शक्ति और आपका आदेश मेरी प्रसन्नता होगी ।

भारत के किसी स्थान से-'जय प्रकाशनारायण'।

3

डाक्टर राममनोहर लोहिया

डाक्टर लोहिया का पालन-पोषण और शिक्षा बम्बई में हुई थी। आपने कलकत्ता विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा पास की। इसके उपरान्त आप उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए जर्मनी चले गए। वहाँ से लौटने पर आपको एक अच्छी सरकारी नौकरी मिल सकती थी; परन्तु आप प्रारम्भ से ही राष्ट्रवादी रहे हैं, इसी कारण आपकी मनोवृत्ति नौकरी करने की नहीं हुई। जर्मनी में आपने डाक्टरेट की डिग्री हासिल की थी। श्री लोहिया शरीर से अभी बिल्कुल युवा मालूम पड़ते हैं। इनका जन्म 1910 में हुआ था। ये जन्म से ही आदर्शवादी हैं। जब ये गया कांग्रेस अधिवेशन में प्रतिनिधि के रूप में गए थे, उनकी उम्र कुल 14 वर्ष की थी।

जिस समय वे जर्मनी में थे वह समय जर्मनी के लिए बड़ा महत्त्वपूर्ण था। उसका संसार पर बहुत दूरगामी प्रभाव पड़ा। उन्होंने हिटलर को शक्ति पकड़ते देखा। एक दार्शनिक तथा राजनीतिक होने के नाते वहाँ जो कुछ हो रहा था इन्होंने उसकी गुत्थी को ठीक-ठीक समझ लिया था।

श्रीयुत लोहिया 1933 में भारतवर्ष वापिस आए। जब वे मद्रास पहुँचे तो उनके पास एक पैसा भी न था। वे सीधे 'हिन्दू' पत्र के दफ्तर में गए। वहाँ के 'फोरेन एडीटर' से मिले। कुछ ही समय में इन्होंने उसको मना लिया। उसने इनको इस पत्र के लिए कुछ लिखने का काम दे दिया। वहाँ से उन्हें कुछ पैसे मिल गए; जिन्हें लेकर वे कलकत्ता के लिए विदा हुए।

जिस समय श्री लोहिया भारत पहुँचे यहाँ की स्थिति भी बड़ी गम्भीर थी। 1934 से 35 तक इन्होंने कलकत्ता में कांग्रेस समाजवादी दल की ओर से उग्रवादी साप्ताहिक पत्र 'कांग्रेस सोशलिस्ट' की नींव डाली और उसके सम्पादक भी रहे। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि श्रीयुत लोहिया के जोश, साधन एवं पूर्ण प्रतिभा से प्रभावित होकर बिरला जी ने अपने दिल्ली के पत्र 'हिन्दुस्तान टाइम्स' का काम उन्हें सौंपना चाहा, परन्तु इन्होंने इसे ठुकरा दिया।

सन् 1935 में पण्डित जवाहरलाल नेहरू के बहुत आग्रह करने पर वे इलाहाबाद में आल इंडिया कांग्रेस कमेटी के वैदेशिक विभाग के अध्यक्ष नियुक्त किये गए। सन् 1938

में कांग्रेस-आफिस को छोड़कर आप यू० पी० के किसानों तथा मजदूरों के बीच स्वतन्त्र रूप से कार्य करने चले गए। जब युद्ध छिड़ा तो ये उन थोड़े से भारतीय राजनीतिज्ञों में से थे जो अपने सूक्ष्म तथा तर्कपूर्ण मस्तिष्क एवं दार्शनिक कल्पना-शक्ति से युद्धजनित समस्याओं को ठीक तरह समझते थे। पहले कुछ धुँधले रूप में परन्तु बाद में स्पष्ट रूप से उन्होंने देश से अपील की कि वह उस युद्ध से अलग रहे और एक तीसरे कैम्प का निर्माण करे। यही कारण था कि 1942 के आरम्भ में वे जेल से छूटकर वापिस आ गए और आन्दोलन का नेतृत्व किया।

जब क्षय होते हुए इस लड़खड़ाते भयभीत साम्राज्य की पाशविक शक्ति के विरुद्ध किये गए आन्दोलन की क्रान्ति का इतिहास लिखा जाएगा तो नि:सन्देह डा० लोहिया का नाम आन्दोलन के नेताओं के बीच अत्युच्च स्थान पर अधिष्ठित होगा। डाक्टर लोहिया के साहस, सच्चाई, ईमानदारी और सद्गुणों की कहानियाँ आज देश की रग-रग में समा गई हैं। उनकी इन बातों के पीछे बड़े-बड़े महत्त्वपूर्ण कारनामे छिपे हैं।

डाक्टर लोहिया बड़े दार्शनिक और कार्यशील व्यक्ति हैं। उनके साथ वाद-विवाद करने में बड़ा आनन्द आता है। इनके व्याख्यान में रसिकता और प्रतिभा होती है। वे बातें सँभालकर करते हैं, परन्तु इन्हें इस काम के लिए रुकना नहीं पड़ता। ये शरीर के दुबले-पतले और काले रंग के हैं। ऐनक लगाते हैं। अपनी फरारी के दिनों में आपने बड़ी लम्बी-लम्बी मूँछें बढ़ा ली थीं। यही कारण था कि उनके घनिष्ठ मित्र भी उन्हें कठिनाई से ही पहचान पाते थे। साधारणतया बाहर आप बिना मूँछ-दाढ़ी के रहते थे। इनका स्वभाव इतना नम्र है कि उनका कट्टर-से-कट्टर दुश्मन भी उनसे मित्रता करने की इच्छा रखता है।

कांग्रेस-रेडियो का आयोजन

आप तीन यूरोपीय भाषाओं के विद्वान् हैं। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का आपको पूर्ण ज्ञान है। कांग्रेस के वैदेशिक विभाग में एक प्रवासी भारतीय विभाग भी खुला था, जो डाक्टर लोहिया की ही अनुपम सूझ थी। सन् 1938 से आप अधिकतर जेलों ही में रहे। अगस्त-आन्दोलन के दिनों में आप 18 महीने तक छिपे रहे और सर्वश्री पटवर्धन, जयप्रकाशनारायण, श्रीमती अरुणा आसफअली तथा उषा मेहता के साथ मिलकर कार्य करते रहे। आन्दोलन के कार्य को विस्तार देने के लिए आपने एक 'कांग्रेस-रेडियो', का भी आयोजन किया; जिससे आप अपने भाषण व सन्देश देकर भारतीय जनता को आन्दोलन के लिए तैयार करते थे। उन्हीं दिनों आपने युक्त प्रान्त के तत्कालीन गवर्नर सर मारिस हैलेट तथा भारत के तत्कालीन वायसराय लार्ड लिनलिथगो को एक खुला पत्र भी लिखा था, जिससे सरकार आतंकित हो उठी थी।

गिरफ्तारी और रिहाई

आप आन्दोलन का कार्य चुपचाप ज्यों-त्यों आगे बढ़ा ही रहे थे कि अचानक सन् 1944 में आप पंजाब पुलिस द्वारा गिरफ्तार करके लाहौर के शाही किले में नज़रबन्द कर

दिये गए। वहाँ पर आपको अनेक यातनाएँ दी गईं, जिनका आपके स्वास्थ्य पर बहुत ही घातक प्रभाव पड़ा। आपके जेल में रहते समय ही आपके पिताजी का लम्बी बीमारी के कारण कलकत्ता में स्वर्गवास हो गया; किन्तु सरकार ने उस अवसर पर भी अपको जेल से रिहा करके अपनी शिष्टता का परिचय नहीं दिया। बाद में जब यू० पी० आदि में जनता के मन्त्रिमण्डल बने तो आप बाबू जयप्रकाशनारायण के साथ ही आगरा जेल से रिहा कर दिये गए। आपको जयप्रकाश बाबू के साथ ही लाहौर से आगरा सेण्ट्रल जेल में बदल दिया गया था।

पुनः गिरफ्तारी और रिहाई

आप जेल से रिहा होकर भी चुप न बैठे और यत्र-तत्र जन-जागरण करना प्रारम्भ कर दिया। इसी सम्बन्ध में आप पुर्तगाल गए और वहाँ के मारमागोआ नामक स्थान में एक सार्वजनिक सभा में भाषण देते हुए 19 जून को पोर्च्युगीज गवर्नमेंट द्वारा गिरफ्तार कर लिये गए। वहाँ पर आपकी गिरफ्तारी पर पूर्ण हड़ताल रही। साथ ही जनता की ओर से यह भी घोषित किया गया कि यदि डाक्टर लोहिया को रिहा नहीं किया गया तो जनता बहुत शीघ्र ही एक आन्दोलन प्रारम्भ कर देगी। आपने 18 जून को गोआ से इस आशय का एक वक्तव्य दिया था कि यहाँ सभी प्रकार के सामाजिक, सांस्कृतिक और सुधार-सम्बन्धी कार्यों पर प्रतिबन्ध क्यों है ? बाद में आप रिहा कर दिये गए।

फिर भी हमारे देश में कुछ ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने उनके व्यक्तित्व पर आक्षेप किए और अनावश्यक प्रचार भी किया। प्रान्त की पुलिस ने उन्हें काफी बदनाम किया। आन्दोलन में उन्हें कई बार उससे मुकाबला करना पड़ा। कई बार तो वे पुलिस के सामने से ही उसकी आँखों में धूल झोंककर बच गए। जब कभी उनकी मुठभेड़ पुलिस से हुई तो वे सशस्त्र सुरक्षित रहते थे। इस कारण पुलिस भी आतंकित रहती थी। अन्त में जब श्री लोहिया पकड़े गए तो उन पर जो-जो अत्याचार किये गए वे अवर्णनीय हैं। परन्तु वह दिन दूर नहीं जबकि गिन-गिनकर इनका बदला चुकाया जाएगा।

अगस्त-क्रान्ति और डा० लोहिया

अगस्त-क्रान्ति के प्रमुख सेनानी डा० राममनोहर लोहिया ने आन्दोलन में जो कार्य किया वह सभी पाठकों पर अवगत है। उनकी कार्यशैली, राजनीतिक कुशलता की धाक सभी नेता मानते हैं। सुप्रसिद्ध पत्रकार श्री वाई० के० मेनन ने अगस्त-आन्दोलन के दिनों श्री लोहिया से भेंट के जो संस्मरण लिखे हैं, उनसे भली प्रकार परिचय मिलता है। संस्मरण इस प्रकार हैं:—

दो मंजिल सीढ़ियाँ चढ़ चुकने के पश्चात् उस महिला ने हाँफते हुए पूछा-क्या और ऊपर जाना होगा ?''

मैंने ढाढ़स देते हुए उत्तर दिया-''हाँ केवल दो मंजिल और।''

उसने मेरी ओर देखा और कहा-''बस।''

उसके इस 'बस' कहने में एक माधुर्य था, जिसे मैं भूल नहीं सकता।

साँस पर साँस लेते हुए शेष दो मंजिलों को तय कर वह एक अँधेरे मार्ग में पहुँची और बोली-''यहाँ तो इतना अँधेरा है कि कुछ दिखाई नहीं पड़ता।'' मैंने दियासलाई की एक सींक जलाई। स्थान बड़ा भयानक मालूम पड़ता था। मैंने सहारा देने के लिए उसकी बाँह पकड़ ली, कारण मैं उससे अधिक बलिष्ठ था। उसे सान्त्वना देने के लिए मैंने कहा-''मैं आपको आज एक बहुत बड़े प्रतिभाशाली क्रान्तिकारी से मिलाने के लिए ले जा रहा हूँ। आप देखेंगी कि वे कितने अच्छे हैं।''

वह काँप रही थी-मानो उसे किसी बात का भय हो रहा हो। उसने मुझसे पूछा—''क्या आपको निश्चय है कि मेरा मिलना उनके लिए हानिकारक न होगा ?'' फिर आगे बताया-''देखिए मुझे इसका तनिक भी भय नहीं कि मुझे क्या होगा, लेकिन मैं यह अवश्य आशा करती हूँ कि मेरे मिलने से उन्हें कोई आपत्ति न आएगी।''

मैंने धीरज देते हुए उससे कहा—''आप बिलकुल चिन्ता न करें, उन्होंने गत 6 मास से इस शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य की खूँखार खुफिया पुलिस को चकाचौंध कर रखा है। वे आज भी ऐसा कर लेंगे।''

मैंने उसे दरवाजे पर खड़ा कर दिया और स्वयं दूसरे दरवाजे से अन्दर चला गया। थोड़ी ही देर में मैंने वह अन्दर से खोल दिया जहाँ वह महिला प्रतीक्षा कर रही थी और अन्दर आने को कहा। उस कमरे में लाल बक्स से ढकी हुई बत्ती का धीमा प्रकाश हो रहा था। जब वह कमरे के अन्दर मेरे पीछे-पीछे आ रही थी, मैंने अपने गाल पर उसके गर्म और जल्दी-जल्दी निकलते हुए श्वास को अनुभव किया। मैंने उससे कहा—''यहाँ बैठ जाइए, वे अभी आते हैं।''

वह एक टूटी-फूटी बेंत की कुर्सी पर बैठ गई और भयभीत होकर इधर-उधर देखा। उस कमरे में एक सुन्दर लोहे का पलंग, दो और बेंत की कुर्सियाँ, एक राइटिंग-टेबल थी। उस टेबल के ऊपर एक लाल बक्स वाली बत्ती थी। दीवार पर एक कोट-स्टैण्ड लटक रहा था, जिस पर बहुत से कपड़े लदे थे।

इतने में ही वे जल्दी से एक दरवाजे से अन्दर आए। उनके प्रविष्ट होते ही इस कमरे के सम्पूर्ण वातावरण में सनसनी फैल गई।

बिना किसी हिचकिचाहट उन्होंने कहा-''मेरा नाम लोहिया है। मि०.....ने मुझे बताया है आपका नाम मिस.....है और आप.....की प्रतिनिधि हैं। आप-जैसी महिला से जो संसार-भ्रमण अभी कर आई हो मुझे मिलकर बड़ी प्रसन्नता है। मि० अ.....आपके पेपर के सम्पादकों में से हैं न ? मि० र..... ? ये दोनों ही जर्मनी में मेरे साथ थे।'' वे विगत दिनों की स्मृति में मानो विभोर हो रहे थे।

उन्होंने उस महिला को 'हाँ' कहते हुए सुना और फिर आगे बढ़े—''हमने नाजियों को शक्ति पकड़ते देखा। हम कुछ उग्रवादियों के लिए यह सौभाग्य की बात थी कि उन दिनों हम जर्मनी में थे। हमें वहाँ अद्‌भुत शिक्षा मिली। हमने यह निश्चय किया कि अब

हम उन कारणों को, जिनसे हिटलर शक्तिशाली बना, मिटाने के लिए ही जिएँगे। भारतवर्ष में हमने अपने ढंग से युद्ध छेड़ रखा है, लेकिन क्या आप बता सकती हैं कि मि० अ.....तथा क्या कर रहे हैं वे.....।''

बड़ी मुश्किल से उसने कुछ शब्द उत्तर में कहे होंगे—''लेकिन मेरी समझ में नहीं आता कि जब आप इस आन्दोलन के उग्रवादी नेता फासिज्म को जोर-जोर से अस्वीकार करते हैं तो ऐसा मालूम पड़ता है मानो आप लोग मित्रों के कैम्प में हिटलर के पंचम वर्ग के व्यक्ति हों।''

''आप नहीं समझती हैं, कारण आप हमें समझने से डरती हैं। हमारी स्थिति तो बिल्कुल स्पष्ट है। आप पश्चिमी बुद्धिमानों के सामने समस्या बिल्कुल भिन्न है और आप चाहते हैं कि अपना ही हल संसार-भर पर लागू करें ? आपके सामने हो सकता है, दो ही मार्ग हों- फैसिज्म या एन्टी फैसिज्म। पर आपको ज्ञात होना चाहिए कि यह विश्व अविभाज्य है। जो हल एक भाग के लिए सही है, वही सम्पूर्ण के लिए नहीं हो सकता। क्या आप यह अनुभव करती हैं कि जो रास्ते आप हमारे सामने रखती हैं दोनों के लिए ही फिफ्थ कालम का काम करते हैं ? तो यह स्वाभाविक है कि हम परतन्त्र इन दोनों में से किसी को भी नहीं चाहते।''

इसके पश्चात् उन्होंने अपना सहज और कटु तर्क देना आरम्भ किया। इस सिलसिले में उन्होंने अपना प्रसिद्ध थर्ड कैम्प थीसीस भी उसके सम्मुख रखा। महिला उनके मधुर, स्पष्ट, हृदयग्राही तथा धाराप्रवाह व्याख्यान पर चकित हो बैठी रही।

जब वे चुप हुए तो थोड़ी देर वहाँ बिलकुल शान्ति रही। फिर वह सम्हलकर बैठी और लगी प्रश्नों की बौछार करने। श्रीयुत लोहिया इस कमरे में अपने हाथों को पीछे किए एक तरफ से दूसरी तरफ लम्बे डग बढ़ा रहे थे। उन्होंने कुछ बिना छिपाए मिदनापुर, बलिया, चिमूर तथा अन्य स्थानों की क्रान्ति की सारी बातें उसे कह सुनाईं। जमशेदपुर और अहमदाबाद के बारे में भी बताया।

एक आदमी धीरे से अन्दर घुसा और चाय दी। जब वह महिला चाय-प्याला अपने होंठों के पास ले जा रही थी, उसके हाथ काँप रहे थे। पर निस्सन्देह वह श्री लोहिया के व्याख्यान से प्रभावित, आकर्षित और उत्तेजित हो गई थी।

चाय पीकर उसने एक सिगरेट जलाई और उठी। उसने उनके शरीर पर अपना हाथ रखते हुए पूछा—''क्या आप अमेरिका के लिए कुछ सन्देश देना चाहते हैं ?'' और नम्रता-पूर्वक उनसे हाथ मिलाकर विदा लेने लगी।

उन्होंने उत्तर दिया—''हाँ, आप अपने देश से अवश्य कह दीजिए कि यदि लफायट को भूल गया तो वह अपनी स्वतन्त्रता को देर तक सुरक्षित नहीं रख सकता।''

उस महिला ने धीमे और गम्भीर स्वर से कहा—''हाँ, मैं समझती हूँ।'' इसके पश्चात्-''आपका शुभ हो, आपका देश शीघ्र ही स्वतन्त्र हो''-कहकर उसने फिर अन्धकूप

में मेरा अनुसरण किया और उन सब सीढ़ियों को पार कर हम सड़क पा आ गए।

वह पीछे घूमी और उस घर की ओर देखा। मैंने उसे पीछे देखने से रोका। उसने नम्रतापूर्वक कहा, ''मुझे इसका अफसोस है, पर मैं अपने-आपको पीछे देखने से रोक न सकी।'' और फिर धीरे से कहा-''मैं स्वेज के पूर्व में सबसे अधिक आकर्षक व्यक्ति से मिली हूँ और प्राय:.....।''

उसने उस वाक्य को अपूर्ण ही छोड़ दिया। मैंने चेष्टा भी की; पर वह आगे कुछ न कह सकी।

भारतवर्ष आने से पहले वह अपने अमेरिका के एक समाचार-पत्र के लिए करीब 15 वर्ष तक युद्ध-संवाददाता के स्थान पर काम कर चुकी थी। वह यूरोप और रूस से संवाद भेजा करती थी।

और वे थे श्रीयुत डा० राममनोहर लोहिया। समय दिसम्बर 1942 का था और स्थान भारतवर्ष, भूमिगत।

जयप्रकाश और लोहिया वीर हैं !

श्री जयप्रकाश नारायण तथा श्री राममनोहर लोहिया की रिहाई का जिक्र करते हुए एक सार्वजनिक सभा में महात्मा गांधी ने कहा—''यह एक शुभ लक्षण है और इसके लिए हमें ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल, मिशन तथा वायसराय महोदय को धन्यवाद देना चाहिए। हिन्दुस्तान का यह अच्छा नसीब है कि भारत मन्त्री यहाँ आये हुए हैं। वे यह निश्चय करके आए हैं कि वे हिन्दुस्तान के शासन का सारा बोझ अपने ऊपर से हटा देंगे। उनकी नीयत के बारे में हमें सन्देह नहीं होना चाहिए।''

जलियाँवाला बाग में किस प्रकार 13 अप्रैल, सन् 1919 को डायर की गोलियों से 500 से अधिक व्यक्ति मारे गए और 1500 से अधिक घायल हुए थे। हम भूतकाल की याद नहीं दिलाना चाहते हैं। ब्रिटेन के चार महान् पुरुष, जिनमें एक वायसराय महोदय भी शामिल हैं, इस समय हिन्दुस्तान की समस्या को हल करने की बात सोच रहे हैं। इसलिए हम जलियाँवाला बाग जैसे हत्याकाण्ड और रक्तपात की पुरानी घटनाओं की याद करके उन्हें गालियाँ नहीं देना चाहते।

श्री जयप्रकाशनारायण और श्री राममनोहर लोहिया बहादुर और पढ़े-लिखे व्यक्ति हैं। अतएव स्वाभाविक तौर पर हिन्दुस्तान की विदेशी हकूमत ने उनको अपने लिए खतरनाक समझा, परन्तु हिन्दुस्तान के 40 करोड़ लोग उनको देशभक्त मानते हैं, क्योंकि उन्होंने अपने देश की आजादी के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया है। उनके तरीके को चाहे मैंने नापसन्द किया हो; परन्तु इसका उनकी रिहाई से कोई सम्बन्ध नहीं।

उनकी दिली तमन्ना यही थी कि हिन्दुस्तान किसी तरह से आजाद हो जाएगा। जब हम आजादी लेना चाहते हैं और अंग्रेज आजादी देना चाहते हैं, तो उनकी रिहाई किसी के लिए भी खतरनाक नहीं हो सकती।

4

वीरांगना अरुणा

अगस्त-क्रान्ति के सूत्रधारों में वीरांगना अरुणा आसफअली का नाम प्रमुख है। बम्बई में जब राष्ट्र के समस्त नेता ब्रिटिश नौकरशाही द्वारा बन्दी बना लिये गए तब गवालिया मैदान में असंख्य भीड़ पर आपने ही नियन्त्रण रखा और बड़ी ही सावधानी से उचित मार्ग-निर्देश किया। आपने वहाँ राष्ट्रीय झण्डे का अभिवादन करते हुए जो भाषण दिया था, वह ऐतिहासिक है। जब आप वहाँ भाषण दे रही थीं, पुलिस जनता पर 'अश्रु गैस' का प्रयोग कर रही थी।

बम्बई की अशान्ति के दिनों में आपने पुलिस-फौज के आक्रमणों से बचकर जो काम किया वह अद्वितीय है। आपका उस दिन का भाषण जनता में चिनगारी का कार्य कर गया। जो भावना का बारूद सरदार पटेल ने वहाँ की जनता में भरा था, वह वीरांगना अरुणा के भाषण की चिनगारी से एक साथ भड़क उठा। जनता में विद्रोह की भयंकर ज्वाला सुलग गई। आपने उस समय शक्ति की प्रचण्ड मूर्ति के रूप में जनता का नेतृत्व किया था। बम्बई की उस दिन की घटना के बाद आप न जाने कहाँ तिरोहित हो गईं ; और पुलिस लाख प्रयत्न करने पर भी आपको न पा सकी।

फरार घोषित

इसी बीच सरकार ने उन्हें फरार घोषित करके उनकी गिरफ्तारी पर 5000 रुपये का इनाम रख दिया। देश के कोने-कोने में जाल डाले गए, भारत की भूमि का चप्पा-चप्पा छान डाला गया। अरुणा न मिल सकीं। अपने फरार-जीवन में आपने बाबू जयप्रकाश नारायण, अच्युत पटवर्धन, डा० राममनोहर लोहिया आदि के साथ मिलकर कार्य किया और प्रति क्षण संकट मोल लेकर भी कार्य में जुटी रहीं। कई जगहों पर कई बार आप गिरफ्तार होते-होते बचीं और पुलिस सिर पीटकर रह गई। कई जगह अरुणा पुलिस की आँखों में धूल झोंककर साफ निकल गईं।

उनका व्यक्तित्व

एक बार की घटना है कि वे जिस अज्ञात स्थान में रहकर अपना समय बिता रही थीं, उसका रहस्य अधिकारी वर्ग को मिल चुका था। उन्हें क्षण-प्रतिक्षण पुलिस के आने

की आशंका रहती थी। वे स्थान बदलना आवश्यक समझती थीं। संयोग से उस नगर के एक प्रमुख दैनिक पत्र में छपे एक विज्ञापन पर उनकी निगाह पड़ी। उस विज्ञापन में एक अंग्रेज परिवार ने किसी यूरोपियन अतिथि को अपने परिवार में किराये पर स्थान देने की बात प्रकट की थी। विज्ञापन पढ़ते ही आनन-फानन में वे तुरन्त कार लेकर उक्त अंग्रेज परिवार में जा पहुँचीं। उस परिवार की अंग्रेज महिला श्रीमती अरुणा के व्यक्तित्व से इतनी प्रभावित हुईं कि उसने यूरोपियन के स्थान में हिन्दुस्तानी अतिथि को अपने यहाँ ठहरा लिया। पुलिस अधिकारी सिर पीटकर रह गए। एक पुराने मकान से बुर्के में एक स्त्री बाहर निकली ही थी कि पुलिस उस मकान की तलाशी लेने के लिए अन्दर दाखिल हुई।

जीवित इतिहास

एक बार की घटना है कि अरुणा को अतिसार की घातक बीमारी हो गई। खून उनके बदन में इतना कम हो गया था कि उनको पहचानना तक कठिन था। उनकी चिकित्सा के लिए एक नगर के धनी-मानी व्यक्ति के यहाँ प्रबन्ध किया गया और वे उस मकान में रहने लगीं। एक दिन अकस्मात् पुलिस का एक उच्च अधिकारी, जो उन सेठ महोदय का मित्र था, उनके घर पर आ टपका। अरुणा को वह सामने देखकर स्तब्ध रह गया; सेठजी भी चुप थे। ऐसी स्थिति में श्रीमती अरुणा ने ही स्तब्धता भंग की और मुसकराकर उन्होंने उस पुलिस अधिकारी से कुर्सी की ओर संकेत करके बैठने के लिए कहा और ठीक उसी प्रकार बातें करने लगीं, जैसे अपने ही घर में बातें कर रहीं हों। अरुणा के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर पुलिस-अधिकारी को पुलिस को सूचना देने के बजाय यह कहना पड़ा कि यह मेरा सौभाग्य था कि मैंने कुछ क्षणों तक 'जीवित इतिहास' के दर्शनों का लाभ किया।

ऐसी अनेक घटनाएँ घटीं, परन्तु फिर भी वे अन्त तक पुलिस की पकड़ में न आ सकीं।

अरुणा और गांधी

बम्बई में हुई घटनाओं के सम्बन्ध में गांधीजी ने एक वक्तव्य दिया था, जिसका खण्डन श्रीमती अरुणा आसफअली ने किया तथा उस खण्डन के सम्बन्ध में गांधीजी ने फिर एक वक्तव्य देते हुए कहा—"बम्बई की घटनाओं पर मैंने जो बयान दिया था, उसका हिम्मत के साथ खण्डन करने के लिए मैं श्रीमती अरुणा को बधाई देता हूँ। अगर श्रीमती अरुणा पोशीदा रहकर काम करने वालों की एक बड़ी तादाद की नुमाइन्दागी न करती होतीं तो मैंने उनके खण्डन पर ध्यान न दिया होता। श्रीमती अरुणा मेरी लड़की हैं, क्या हुआ कि उन्होंने मेरे घर में जन्म नहीं लिया या कि विद्रोही बन गई हैं। जब वह छिपकर रहती थीं तब भी मैं कई बार उनसे मिला हूँ। मैंने उनकी बहादुरी, नये-नये रास्ते खोजने की शक्ति और गहरे देशप्रेम की सराहना की है। परन्तु मेरी सराहना इससे आगे नहीं बढ़ी। मैंने उनके छिपकर काम करने को पसन्द नहीं किया। मैं छिपकर किए जाने वाले किसी भी काम

की सराहना नहीं करता। मैं जानता हूँ कि देश के करोड़ों स्त्री-पुरुष छिपकर कार्य नहीं कर सकते। कुछ मुट्ठीभर लोग सोच सकते हैं कि पोशीदा हलचलों के जरिये वे करोड़ों के लिए स्वराज्य ला सकेंगे। लेकिन क्या यह बच्चों को चम्मच से दूध पिलाने-जैसी बात न होगी ? आम जनता तो खुली चुनौती और खुले कामों का रास्ता ही अपना सकती है। असली स्वराज्य की झाँकी तो स्त्रियों, पुरुषों और बच्चों सभी को होनी चाहिए। ऐसे मकसद के लिए मेहनत करना ही सबसे बड़ी क्रान्ति होगी। हिन्दुस्तान दुनिया की सभी शोषित जातियों के लिए एक नमूना बन गया है, क्योंकि हिन्दुस्तान की लड़ाई खुली और बिना हथियारों के लड़ी जा रही है। इस लड़ाई में आजादी को हड़पकर बैठे हुओं को चोट पहुँचाए बिना सभी से कुर्बानी चाही जाती है। मगर यह लड़ाई खुली और निहत्थी नहीं होती। जब-जब इस सीधे रास्ते को छोड़ा गया तब-तब थोड़ी देर के लिए विकासशील क्रान्ति में रुकावट पड़ी है।

सन् 1942 की घटनाओं का यह बहादुर बहन जो अर्थ लगाती है, वह मैं नहीं लगाता। यह अच्छी बात थी कि लोग अपने-आप उठ खड़े हुए। मगर यह बात बुरी हुई कि कुछ लोगों ने या बहुत लोगों ने हिंसा की। उसमें कुछ फर्क नहीं पड़ता कि श्री किशोरलाल मशरूवाला, काका साहब और दूसरे काम करने वालों ने उस समय के उतावली भरे उत्साह की गलत व्याख्या की। उनके ऐसा करने से ही यह साबित होता है कि अहिंसा कितना नाजुक हथियार है। मैं जो तुलना कर रहा हूँ; उसका मतलब किसी आदमी पर लांछन लगाना नहीं है। हर एक ने अपनी-अपनी समझ के मुताबिक ठीक ही किया। जबरदस्त संगठित हिंसा के मुकाबले में हाथ पर हाथ धरकर बैठे रहना भी तो कायरता होगी। अगर मैं सन् 42 की घटनाओं के सम्बन्ध में अपना ख्याल जाहिर न करूँ तो कमजोरी का सबूत दूँगा या गलती करूँगा।

" श्रीमती अरुणा भले ही वैधानिक मोर्चे के बजाय लड़ाई के मोर्चे पर हिन्दू-मुसलमानों को इकट्ठा करना पसन्द करें। मगर हिंसा के ख्याल से भी यह एकदम गलत विचार हैं। अगर लड़ाई के मोर्चे पर डटे नहीं रहते। उनमें आत्मघात न करने जितनी अक्ल जरूर होती है। लड़ाई के मोर्चे के बाद हमेशा वैधानिक मोर्चा आता ही है। उसको हमेशा के लिए रद्द नहीं किया जा सकता।

" श्रीमती अरुणा का यह कहना सही है कि इस बार लड़ने वालों ने जैसी मजबूती दिखाई, वैसी पहले कभी नहीं दिखाई थी। मगर जब मजबूती कुसमय की और आत्मघाती हो जैसी कि इस मौके पर थी, तो वह मूर्खता बन जाती है। श्रीमती अरुणा को यह कहने का हक है कि-'लोगों को हिंसा या अहिंसा के सिद्धान्तों में कोई दिलचस्पी नहीं है।' मगर लोगों को यह जानने की जरूर दिलचस्पी है कि जनता को आजादी किस रास्ते से मिलेगी—हिंसा से या अहिंसा से ? लोग अब तक, अधूरे ही सही, अहिंसा के रास्ते पर चले हैं।

श्रीमती अरुणा और उनके साथियों को हर बार अपने से यह सवाल पूछना चाहिए कि अहिंसक रास्ते ने हिन्दुस्तान को उसकी सदियों की नींद से जगाया है या हिंसक रास्ते ने और स्वराज्य के लिए, चाहे धुँधली ही क्यों न हो, इच्छा किसने पैदा की है ? मेरी राय में इस सवाल में दूसरे भी ऐसे फिकरे हैं, जो मेरे ख्याल में विचारों की उलझन ज़ाहिर करते हैं। लेकिन उन पर तो बाद में भी गौर किया जा सकता है।

" हाँ, यह कहना गैर जरूरी है कि अखबारों में छपे उनके बयान पर मैंने जो विचार जाहिर किए हैं, सो यह मानकर किए हैं कि बयान उनकी अपनी राय का सूचक है। अगर ऐसा नहीं है तो मैं उनसे पहले ही माफी माँग लेता हूँ। अगर यह मालूम हो जाए कि खबर भेजने वाले ने उनको ठीक से समझा नहीं था तो भी उससे मेरी दलीलों पर कोई असर नहीं होता। क्योंकि मेरी दलीलें आखिर उसूली दलीलें हैं। वे किसी की शख्सियत से ताल्लुक नहीं रखतीं और सिर्फ उन्हीं बातों पर तवज्जह दिलाती हैं जिनसे आम रिआया के गुमराह होने का अन्देशा है, भले ही उनकी कहने वाला कोई क्यों न हो ! "

5

रेडियो-बेन उषा मेहता

अगस्त-आन्दोलन में भारत माता के जिन सपूतों और लाड़ली बेटियों ने भाग लिया था, उनमें रेडियो-बेन उषा मेहता का नाम भी प्रमुख है। अगस्त-क्रान्ति के दिनों में डा० राममनोहर लोहिया के प्रयत्न से जिस कांग्रेस-रेडियो का निर्माण हुआ था, उसकी प्रमुख संचालिका कुमारी उषा मेहता ही थीं, इसीलिए डा० लोहिया ने उनका नाम 'रेडियो-बेन' रख दिया था। अगस्त-क्रान्ति के सिलसिले में आयोजित कांग्रेस-रेडियो का जो विस्तृत हाल कुमारी उषा मेहता ने यूनाइटेड प्रेस के प्रतिनिधि से भेंट करने पर बतलाया है उसे हम आगे दे रहे हैं।

गिरफ्तारी

अपनी गिरफ्तारी की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा था कि—"पहले हमारे पास एक ब्राडकास्टिंग मशीन थी। कुछ ही दिनों में एक दूसरी बड़ी मशीन भी हमारे हाथ में आ गई, जो कि एक बड़े कांग्रेसवादी एडवोकेट के घर में रखी हुई थी। जिस समय पुलिस ने छापा मारा, उस समय कुछ महत्त्वपूर्ण सूचनाओं के साथ वह मशीन पुलिस के हाथ में चली गई।" आपको अपनी गिरफ्तारी और ब्राडकास्ट-केन्द्र पर पुलिस के आक्रमण करने की खबर पहले ही मिल चुकी थी, परन्तु फिर भी आपने अपना कार्य न छोड़ा और ब्राडकास्ट में लग गईं और रेडियो भी पुलिस के कब्जे में चला गया।

डा० लोहिया के सन्देश

गिरफ्तारी से पूर्व कुमारी उषा मेहता ने डा० लोहिया से जब यह आशंका प्रकट की तो उन्होंने यही कहा कि ब्राडकास्ट तो चालू रहना चाहिए, यदि गिरफ्तारी की सम्भावना हो तो तुम स्वयं विचार करो। दूसरे सहयोगियों ने रेडियो-बेन से आग्रह किया कि आज के कार्यक्रम में भाग न लें; परन्तु वे न मानीं और गिरफ्तार हो ही गईं। जेल में डा० लोहिया का उन्हें यह सन्देश मिला—

"इतिहास किसी दिन यह निर्णय करेगा कि तुम्हारी गिरफ्तारी के दिन ब्राडकास्ट को भेजने के लिए मैंने उचित किया या अनुचित ?"

पी-एच० डी० भी छोड़ी

जब अगस्त-आन्दोलन शुरू हुआ था उस समय आप पी-एच० डी० की तैयारी में संलग्न थीं, परन्तु क्रान्ति का भैरव नाद उन्होंने भी सुना और कार्यक्षेत्र में कूद पड़ीं। उन्होंने जो कार्य किया वह प्रत्येक व्यक्ति के लिए गौरव का कारण है। आपको 5 वर्ष की सजा हुई थी। अब कांग्रेस मन्त्रिमण्डल होने पर आप रिहा की गईं।

कांग्रेस-रेडियो

अगस्त-क्रान्ति के दिनों में अनेक व्यक्तियों के सहयोग से एक कांग्रेस-रेडियो का कार्य भी प्रारम्भ किया था। जिससे कांग्रेस का तत्कालीन प्रोग्राम ब्राडकास्ट किया जाता था। उसका मनोरंजक विवरण कुमारी उषा मेहता ने, जो ब्राडकास्ट में प्रमुख भाग लेती थीं, निम्न प्रकार दिया है :—

''जब 9 अगस्त, 1942 को देश के सभी प्रिय नेता जेलों के सींखचों में बन्द कर दिये गए, तब हमने हिन्दुस्तान के किसी भी हिस्से से 'आजादी की आवाज' के नाम से अपने रेडियो का प्रारम्भ करने की तैयारियाँ कीं; देश की आजादी हासिल करने में अपनी तुच्छ सेवाएँ समर्पित करने की हमारी हार्दिक इच्छा थी। इसलिए मैं और कुछ साथी यह सोचने में व्यस्त थे कि यदि आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ तो हमें क्या करना चाहिए। प्रदर्शन अथवा सार्वजनिक सभाओं में हमारा पहले से ही कोई विश्वास न था। गत आन्दोलन के इतिहास का मनन करने पर हमने अनुभव किया कि इस आन्दोलन को सफल बनाने के लिए शायद एक ट्रांसमीटर अधिक उपयुक्त होगा। ऐसे समय में जब प्रेस और पत्रों पर जबरदस्त प्रतिबन्ध थे, जब जनता को समाचारों की सत्यता जाहिर करने के लिए रेडियो का साधन अति उत्तम था। अत: श्री बाबूभाई और मैंने महसूस किया कि रेडियो, प्रचार का अमूल्य साधन है। देश-विदेश में खबरें प्रचारित करने के लिए उच्च कोटि के ट्रांसमीटर की हमने आवश्यकता समझी। लेकिन इसके लिए रुपये कहाँ से आएँ। मेरी एक रिश्तेदार ने अपने सारे जेवर इस कार्य के लिए प्रदान किए। हम पशोपेश में थे कि उन जेवरों को लिया जाए या नहीं, बाद में श्री बाबूभाई ने किसी प्रकार एक होशियार कारीगर से एक सैट तैयार कराया। अन्त में वही कारीगर सरकारी गवाह बना।''

अनेक सहकारी दल

श्री बिट्ठलभाई झवेरी, जो आजकल गांधीजी के जन्म-दिवस के ग्रन्थ के सम्पादकों में से एक हैं और 'जयहिन्द' के भी सम्पादक हैं, उनके अधीन एक दूसरा दल हमारे अलावा अपना रेडियो कार्यान्वित करने में प्रयत्नशील था। इन दो दलों के अलावा और कई दल इस दिशा में कदम बढ़ा रहे थे। डा० राममनोहर लोहिया जो इन सबसे परिचित थे, इन सभी का एकीकरण करना चाहते थे। दूसरे दलों ने कोई खास काम नहीं किया। लेकिन श्री बाबूभाई और बिट्ठलभाई के दलों ने गिरफ्तारी तक एक साथ मिलकर कार्य किया।

ये सभी दल एक साथ कांग्रेस रेडियो के नाम से कार्य कर रहे थे। उनके कार्य-काल में अनेक रोमांचक एवं रहस्यमयी घटनाएँ घटीं।

कांग्रेस रेडियो नाम मात्र के लिए नहीं था। उसके पास निज का ट्रांसमीटर, स्टेशन और रेकार्डिंग स्टेशन था। इन सबके अलावा इस रेडियो की वेवलैंथ (लहरों की लम्बाई) भी बहुत काफी और स्पष्ट थी। 14 अगस्त, 1942 को हमने अपना ब्राडकास्ट शुरू किया, "यह कांग्रेस रेडियो हिन्दुस्तान के किसी भी हिस्से से 42-43 मीटर पर बोल रहा है।"

हमारी कठिनाइयाँ

ट्रांसमीटर के अलावा दूसरे यन्त्रों का मिलना बेहद मुश्किल था। श्री बाबूभाई को उन वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए अनेक बार सोचना पड़ता था। किसी भी तरह से वे और श्री बिट्ठलभाई ये चीजें ले आए। कभी ये जेब में और कभी टिफिन-कैरियर में रखकर ले आया करते थे। पुलिस की निगाहों से और लगातार पीछा करने वाली उनकी खुफिया गाड़ियों से बचते हुए ये सब सामान लाना आसान नहीं था। हमारे रेडियो और उनकी खुफिया गाड़ियों में एक तरह से लुका-छिपी का खेल हुआ करता था। कभी पुलिस समझती थी कि अब चन्द मिनटों मे ट्रांसमीटर हाथ आया, पर कुछ समय के अन्दर हममें और इसमें मीलों तक फर्क हो जाता। कभी हममें कोई चाचा बनकर बाहर से आता, तब तक कोई भतीजा दूसरी जगह ठीक करता। इसी तरह हमारा ट्रांसमीटिंग स्टेशन अपनी जगह से कभी रेलवे स्टेशन पर आता और फिर कहीं किसी और जगह नया ट्रांसमीटिंग स्टेशन बनाता। एक बार मैंने और श्री बाबूभाई ने एक अत्यन्त उपयुक्त एवं सुरक्षित स्थान पाया। हम बेहद खुश हुए कि अब कम से कम महीने-दो महीने तक हमारा कार्य सुचारु रूप से होगा। हम मकान-मालिक को किराया जमा करने गए। वहाँ हमने एक विचित्र मशीन देखी, कौतूहलवश हमने पूछा, "सेठजी, यह क्या है ?" उत्तर मिला-"गैरकानूनी रेडियो खोजने की (डिटेक्टिव) मशीन।" मैं क्षण-भर के लिए आश्चर्य में पड़ गई, किन्तु आन्तरिक भावना चेहरे पर आने न पाई। उधर बाबूभाई बड़ी चालाकी के साथ साहब की हाँ में हाँ मिलाने लगे और रेडियो वालों को उन्होंने उसी दम दो-चार खरी-खोटी सुना डालीं। भाग्य को धन्यवाद देते हुए हम वहाँ से खिसके। वहाँ से निकलने के बाद बाबूभाई ने पहला वाक्य मुझसे कहा—"बहन, आज हम शेर के पंजों से बचे हैं।" उन्होंने मुझे हिदायत दी कि मैं खादी की साड़ी न पहनूँ और इस बात पर इन्होंने जोर भी दिया। मैंने भी बात मान ली ताकि खुफिया की नजरों में मैं जल्दी न आ सकूँ।

हमारे रास्ते में दूसरा बड़ा काँटा था ए० आई० आर० (आल इण्डिया रेडियो); जो हमारे ब्राडकास्ट को हमेशा खराब करने का प्रयत्न करता था। वे अपनी शरारतों से हैरान करने लगे तो हमने भी वही शरारतें उनके खिलाफ करनी शुरू कर दीं।

एक ही ट्रांसमीटिंग स्टेशन होना भी बड़ा खतरनाक था। अत: हमने हिन्दुस्तान भर

में ट्रांसमीटिंग स्टेशनों का जाल बिछाने का निश्चय किया। ताकि अगर एक पुलिस के हाथ लगे तो दूसरे कार्य करते रहें। कुछ काल तक हम दो ट्रांसमीटर इस्तेमाल करते रहे। जो कि बारी-बारी से प्रयुक्त किए जाते थे। इनमें से एक बिट्ठलभाई का था। इन दोनों के ट्रांसमीटिंग स्टेशन अलग थे। बिट्ठलभाई के ट्रांसमीटर का बहुत कम प्रयोग हुआ।

हमने रेकार्डिंग क्यों शुरू की ?

समाचार, भाषण, सुझाव, अपीलें आदि विभिन्न वर्गों के लोगों के लिए हम प्रस्तुत करते थे। इसके लिए बोलने और लिखने वालों का एक दल था। उन सबको ब्राडकास्टिंग स्टेशन पर साथ ले जाना सुरक्षित न था। इसलिए हमने निश्चय किया कि भाषणों के रेकार्ड लिये जाएँ और रेकार्डों के जरिये ब्राडकास्टिंग हो। रेकार्ड लेने का स्थान ब्राडकास्ट-स्टेशन से अलग था। इस तरह खतरा कम था। बिट्ठलभाई इस विभाग का संचालन करते थे और बाबूभाई ब्राडकास्टिंग स्टेशन का।

हमारा कार्यक्रम

सत्य समाचार देना हमारे कार्य का मुख्य अंग था। अपने विशेष संवाददाताओं के जरिये सारे हिन्दुस्तान की खबरें हमें मिला करती थीं। चटगाँव का हवाई हमला, जमशेदपुर की हड़ताल और बलिया के दमन की खबर सबसे पहले हमने ही दी थी। आष्टी और चिमूर में किये गए नौकरशाही के काले कारनामों का सच्चा चित्र हमने खींचा था। जबकि अखबार सच्ची खबरें देने से डरते थे या सच्ची खबरों पर झूठ की कालिख लगाकर उनके पास भेजी जाती थी, उस वक्त हिन्दुस्तान में सिर्फ कांग्रेस रेडियो था, जो जनता को जुल्मों की सच्ची खबरें दिया करता था। हमारे श्रोता भी हमें सच्ची खबरें देने में सहायता पहुँचाया करते थे।

अपने भाषणों में जनता को कांग्रेस की नीति और उद्देश्य, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही दृष्टिकोणों से बताया करते थे। विश्वशान्ति के सम्बन्ध में हमारे ब्राडकास्ट में से एक का उदाहरण इस प्रकार है :—

"दुनिया के सभी लोगों के लिए कांग्रेस शुभकामनाएँ और शान्ति का सन्देश भेजती है। सन्देश उन समस्त रंगीन चेहरे वाली जातियों के लिए है जो गुलामी की जंजीरों में जकड़े हुए हैं और जिनकी अपनी सरकारों ने ही उनको धोखा दिया है। हिन्दुस्तान अभी तक इन तकलीफों को झेल रहा है। दुनिया के मनुष्य मात्र को हिन्दुस्तान आशा, शुभकामना और शान्ति का सन्देश देता है। दुनिया को शान्तिमय और सुन्दर बनाने के लिए हमें हर एक देश की दोस्ती, दया, हर आदमी की स्वतन्त्र कार्य-शक्ति की जरूरत है। हमें जर्मनी की कारीगरी, उसकी वैज्ञानिक कुशलता, उसके संगीत की जरूरत है। हमें इंग्लैण्ड की स्वतन्त्रता की भावना, उसके साहस और साहित्य की जरूरत है। हमें चीन के चातुर्य और नवीन आशा की जरूरत है। हमें रूस की अपूर्व सफलता और विजय की जरूरत है। हमें

पुरातन पुरुषों के ज्ञान, बच्चों की सादगी की जरूरत है और हमें जरूरत है समस्त मनुष्य जाति की शान्ति और अपने गौरव की। हिन्दुस्तान का कोई दुश्मन नहीं है। हम उस विधान के खिलाफ लड़ रहे हैं जो मनुष्य को उसके जन्मसिद्ध अधिकारों से वंचित रखता है। हम अपने उद्देश्य की पूर्ति अपने दुश्मन को मारकर नहीं करना चाहते हैं।'' आखिरी वाक्य होता था—''आपको हम आने वाली ताज़गी की आशाएँ भेजते हैं।''

बिहार, युक्तप्रान्त, कर्नाटक और सतारा में आन्दोलन पूरे जोर पर था। 14 अक्टूबर, 1942 को या उसके करीब, गोरे सिपाहियों ने तीन पुलिसियों को जान से मार डाला; क्योंकि गोली चलाने से उन लोगों ने इन्कार किया था। करीब सारे हिन्दुस्तान की पुलिस इस आन्दोलन के प्रति सहानुभूति रखती थी। अत: कांग्रेस-रेडियो ने पुलिस से निम्नलिखित अपील की :—

''क्या आप हिन्दुस्तान के अच्छे नागरिक बनना चाहते हैं ? वह मौका जल्द आ रहा है। क्या आप हमेशा के लिए हिन्दुस्तान के दुश्मन बनना चाहते हैं ? आपके कितने भाइयों ने आन्दोलन में भाग लेने का निश्चय किया है, लेकिन आपमें से कितने ही ऐसे हैं जो अपने भाइयों की हत्या में आनन्द पाते हैं। आपको अपने शासकों की आज्ञा का बहिष्कार करना चाहिए और उन्हें अपना दुश्मन समझना चाहिए।''

मजदूरों और किसानों से कांग्रेस-रेडियो ने अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी की ओर से प्रार्थना की थी कि आजाद हिन्दुस्तान मजदूर और किसानों का होगा, जो कि किसान-मजदूर राज्य होगा।

अक्सर हम कुछ प्रश्नों के जवाब दिया करते थे। यह बड़ा मजेदार कार्यक्रम होता था। जब आष्टी और चिमूर के हत्याकाण्ड और नादिरशाही से लोगों की आँखें शर्म से नीचे झुक गईं और जब भारतीय नारी की लज्जा परदेशियों के पैरों-तले रौंदी जाने लगी, तब सवाल उठा कि इनसे बचने का उपाय क्या हो ? उत्तर था—बिना हिचकिचाहट के हम जवाब देते थे, जो कुछ भी आप कर सकें कीजिए। मारकर या मरकर आप ऐसी हरकतें हर हालत में रोकें।

'हिन्दुस्तान छोड़ो' आन्दोलन को समझाते हुए हमने कहा था, ''कभी हम आन्दोलन करते थे किन्तु अब हम क्रान्ति कर रहे हैं। क्रान्ति में हार या जीत दो ही बातें होती हैं। यह क्रान्ति एक दल या जाति की नहीं है, बल्कि सारे हिन्दुस्तान की है। हम आशा करते हैं कि जब तक अंग्रेजी साम्राज्य जलकर खाक नहीं हो जाता तब तक आप सन्तुष्ट होकर बैठे न रहेंगे।''

जब जापानियों के हमले निकट थे और चटगाँव पर बम-वर्षा हुई तब हमने ब्राडकास्ट किया था, ''जापानियों के हवाई हमले का मतलब है जमीन की लड़ाई। ऐसी लड़ाई के वक्त शहरों को छोड़ देना बेहतर है ! जब ऐसी लड़ाई होगी तो अंग्रेज जल्द

हट जाएँगे जैसा कि और जगहों में उन्होंने किया है, लेकिन उनके हटने से पहले हमें उनको आखिरी धक्का देना होगा। जापानी हमलों के वक्त चुपचाप बैठना अपने प्रति विश्वासघात होगा। अंग्रेजी हुकूमत से अपने सम्बन्ध तोड़िए। आँखों में आजादी का नशा और दिमाग में स्वतन्त्रता का ज्वर आने दीजिए।''

भाषण बहुधा डा० लोहिया देते थे अथवा प्रमुख पत्रकार अध्यापक या अन्य कांग्रेस के कार्यकर्त्ता दिया करते थे। पहले हम एक ही बार ब्राडकास्ट करते थे। लेकिन बाद में सुबह-शाम दो बार ब्राडकास्ट करने लगे। ब्राडकास्टिंग अंग्रेजी और हिन्दुस्तानी में होती थी। शुरुआत इकबाल के गीत 'हिन्दुस्तान हमारा' से होती, और अन्त 'बन्देमातरम्' से।

पहला छापा

12 नवम्बर, 1942, गिरफ्तारी के दिन हमारे कार्यकर्त्ताओं की एक बैठक हुई जिसका विषय था, ''यदि गिरफ्तारी हुई तो हरएक को क्या कहना होगा।'' निश्चय हुआ कि कोई किसी दूसरे का नाम न बताए और सब कुछ गुप्त ही रखा जाए।

गिरफ्तारी के एक हफ्ता पहले नगर के अनेकों रेडियो के व्यापारी गिरफ्तार किये गए थे। जिनसे पुलिस को मालूम हुआ कि कांग्रेस रेडियो की आड़ में बाबूभाई और बिट्टलभाई का प्रमुख हाथ था। 12 नवम्बर की दोपहर को पुलिस ने हमारे उस कमरे का दरवाजा खटखटाया जिसमें मैं ब्राडकास्ट किया करती थी। उस समय 'बन्देमातरम्' गान हो रहा था। मैं रिकार्ड बजाने में व्यस्त थी कि पुलिस कमरे का दरवाजा तोड़कर अन्दर धडाधड़ घुस आई। मुझसे रिकार्ड बन्द कर देने के लिए कहा गया। मेरे एक साथी ने लपककर रेडियो बन्द कर दिया। बाद में मालूम हुआ कि हमारा वह साथी सी० आई० डी० का व्यक्ति था। इतने में कमरे में सहसा बिल्कुल अन्धकार छा गया। बिजली-लाइन 'फ्यूज' कर दी गई और मैं गिरफ्तार कर ली गई।

6

गोरखपुर के गांधी बाबा राघवदास

अगस्त, 42 की विद्रोह की घड़ियों में ही गोरखपुर की विक्षुब्ध जनता को जब बाबा राघवदास को अचानक लखनऊ स्टेशन पर वहाँ की सी० आई० डी० पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लेने की सूचना मिली तो वह और भी उग्र हो उठी। उसके परिणामस्वरूप गोरखपुर में और भी अधिक कार्य हुआ। यद्यपि बाबा राघवदास बहुत दिन तक भूमिगत रहे थे, उन्होंने गोरखपुर ही नहीं प्रत्युत समस्त भारतवर्ष की जनता को गाँव-गाँव घूमकर जो विद्रोही सन्देश दिया, वह क्रान्ति की चिनगारी का काम कर गया।

वे लाख-लाख जनता के पथ-प्रदर्शक और अभिनेता थे। उनकी तलाश में समस्त भारत की पुलिस पागल हो उठी थी। गरीबों के सहायक और त्रस्तों के उपचारक के रूप में वे गोरखपुर में पुज्य रहे थे। अपनी कल्याणी वाणी का प्रसाद उन्होंने गोरखपुर की जनता को देकर उसे भावी सफर के लिए तैयार कर दिया था। गुलाम देश में ऐसे वीतराग तपस्वी संन्यासी का विश्व-कल्याण का उपदेश देना भी अभिशाप के रूप में परिवर्तित हो गया और नौकरशाही उनसे सदा सशंक रहने लगी। फलस्वरूप उनको अगस्त-क्रान्ति के सेनानी के रूप में वह न देख सकी।

बाबा राघवदास जी यों तो महाराष्ट्रीय हैं, मगर उनके जीवन का सारा महत्त्वपूर्ण भाग गोरखपुर में ही बीता है। बाबा जी सन् 1920 से ही इस जिले के राजनैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में सक्रिय भाग ले रहे थे। जिले की बेहद गरीबी और भयानक दुर्दशा ने ही एक वीतराग संन्यासी को कर्म-क्षेत्र का मूक निमन्त्रण दिया और उन्होंने वहाँ की जनता की वह सेवा की कि जिसके परिणामस्वरूप आज उस प्रान्त का बच्चा-बच्चा उन्हें 'गोरखपुर के गांधी' के रूप में जानता है। गोरखपुर जिले में जो जागृति और बलिदान की भावना हमें इस आन्दोलन में दृष्टिगत हुई, वह सब बाबा जी के ही अथक परिश्रम तथा त्याग का परिणाम है।

योग-साधना की ओर

कालिज की शिक्षा छोड़कर उनकी प्रवृत्ति योग-साधना की ओर हुई और वे इसी अभिलाषा में दर-दर की खाक छानते इधर से उधर भटकते रहे। आज के बाबा राघवदास

उस समय के राघवेन्द्र थे। उनका पूर्व नाम यही था। घूमते-घूमते आप गोरखपुर के समीप बरहज नामक स्थान में पहुँचे और वहाँ के परमहंस श्री अनन्त महाप्रभु की सेवा में ही लीन हो गए। बीच में परिस्थितिवश बाबा जी को वह स्थान छोड़ना पड़ा तथा वर्षों तक आप उत्तर भारत की प्रसिद्ध शिक्षा-संस्था ज्वाला महाविद्यालय में भी रहे। फिर महाप्रभु के देहावसान के बाद आप फिर गोरखपुर चले गए और बरहज के परमहंस आश्रम को ही अपनी विविध प्रवृत्तियों का केन्द्र बनाया। वहाँ पर बाबा जी अपने गुरुदेव की गुफा में पूरे एक वर्ष तक रहकर तपस्या करते रहे। उन दिनों आप केवल दूध ही पीते थे।

सन् 1920 में बापू का आह्वान हुआ। सविनय अवज्ञा आन्दोलन प्रारम्भ हुआ और बाबाजी ने अपनी सब प्रवृत्तियाँ बापू के चरणों में अर्पित कर दीं। उसी समय से गांधीजी के मार्ग पर आप निरन्तर इन्हीं के सिद्धान्तों के अनुसार कार्य करते रहे।

जनसेवा

आपके द्वारा संस्थापित 'परमहंस आश्रम बरहज' सबसे बड़ी संस्था है, जिसमें संस्कृत कालिज, श्रीकृष्ण हाई स्कूल, ग्रामोद्योग विद्यालय, राष्ट्र भाषा विद्यालय, परशुराम चण्डिका वेद विद्यालय, श्री लाजपत अनाथालय मुख्य हैं। श्री लाजपत अनाथालय सन् 42 के विद्रोह में नौकरशाही की आज्ञा से नष्ट-भ्रष्ट कर दिया गया।

इसके अतिरिक्त बाबा जी ने बीस मिडिल स्कूल, कसिया में बुद्ध हाई स्कूल और बुद्ध धर्मशाला, विरला जी के सहयोग से बनवाई। सन् 1935-36 की ऐतिहासिक बाढ़ में आपने गोरखपुर की बाढ़-पीड़ित जनता की अन्न तथा वस्त्रों द्वारा अकथनीय सेवा की। वहाँ के किसान बाबा जी को अपना प्राण-रक्षक समझते हैं।

गगहा, बाँसगाँव के बाँध का निर्माण करने में युक्तप्रान्तीय सरकार परेशान थी और उस पर हजारों रुपये व्यय करने की योजना बना रही थी। बाबाजी ने देखते-देखते स्वयं कुदाल अपने हाथ में उठाकर, जनता के सहयोग से वह बाँध बात की बात में अविलम्ब तैयार करा दिया। बाबा जी की सक्रिय भावना ही इसमें काम कर रही थी।

42 की क्रान्ति के सेनानी

42 में फिर रणभेरी बजी और बाबा जी उसे इधर-उधर प्रसारित करने में सबसे आगे रहे। उन्होंने अपने फरार जीवन में बड़ी-बड़ी विपत्तियों का सामना किया, परन्तु फिर भी आपका उत्साह मन्द नहीं पड़ा। एक दिन अचानक आप गिरफ्तार कर लिये गए और जेल के सींखचों में बन्द कर दिये गए। इस बार के जेल-जीवन में बाबा जी को अनेक यातनाएँ दी गईं। उनके गिरते हुए स्वास्थ्य का समाचार पाकर जनता में बराबर उनकी रिहाई के लिए आन्दोलन हुआ; परन्तु अन्यायी सरकार पत्थर की तरह अडिग रही। अन्त में जब कांग्रेसी सरकार बनी तो आपको 1946 के अप्रैल मास में रिहा किया गया। आप जैसे कर्मठ सेनानियों पर किसी भी भारतीय को गर्व हो सकता है।

बाबा जी का फरार जीवन

अगस्त-आन्दोलन के दिनों में बाबा राघवदास ने अपने फरार जीवन का वर्णन इस प्रकार किया है—"कुछ लोगों का कहना है कि मैं सूट-बूट और हैट धारण करता था और रेल में ऊँचे दर्जे में यात्रा करता था; किन्तु ये दोनों बातें सर्वथा भ्रमपूर्ण हैं। मैं सदा से यह मानता आया हूँ कि हमें वही कार्य करना है, जिससे हमारे साथियों में भी दृढ़ता और नैतिकता बनी रहे। जुलाई 1942 में जब मैं जेल से मुक्त हुआ तो बाहर आने पर शारीरिक दुर्बलता में ही मुझे सभी काम करने पड़े। मैंने उचित नहीं समझा कि शारीरिक कमजोरी को सहन करते हुए अपनी नैतिक कमजोरी बढ़ा दूँ। इसीलिए मैं स्वाभाविक वेश और नाम में आवश्यकतानुसार घूमा करता था। इतना ही नहीं, दिल्ली, मद्रास और बड़ौदा आदि बड़े-बड़े स्टेशनों पर, जहाँ यात्रियों का सामान रखने की व्यवस्था है, अपने हस्ताक्षर करके अपने दैनिक ढंग से ही कार्य किया करता था। 8 सितम्बर, 1942 को दिल्ली, 29 अक्तूबर 1942 को मद्रास और 24 अगस्त को बम्बई के स्टेशनों पर मेरे हस्ताक्षर हैं।

" मैं अपने स्वभावानुसार सदा तीसरे दर्जे में ही यात्रा किया करता था। ट्रेन खुलने से आधे घंटे पूर्व ही मैं कभी-कभी स्टेशनों पर पहुँचकर गाड़ी में बैठ जाया करता था। मैं प्रायः प्रयाग, कानपुर, बनारस और लखनऊ आदि स्टेशनों पर अपने इसी वेश में कभी-कभी तो दिन में भी गया हूँ। कहा जाता है कि पुलिस हर समय मेरी ताक में रहती थी, किन्तु मुझे तो ऐसा ज्ञात होता है कि मुझ पर उसकी कृपा थी।

" मेरा तो निजी अनुभव यह है कि जहाँ कहीं भी फरारों की गिरफ्तारियाँ हुईं, वे तरह-तरह के नाम धारण करने वाले और पहले के कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओं द्वारा हुईं। इसके बदले में उन्हें बड़ी-बड़ी रक़में हाथ लगीं। इस आन्दोलन में हमें वहाँ से सहानुभूति प्राप्त हुई जहाँ से कभी भी आशा नहीं थी और ऐसे स्थानों पर हमें धोखा खाना पड़ा जहाँ से स्वप्न में भी धोखा होने की कल्पना नहीं की जा सकती थी। अब की बार राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओं को यह शिक्षा मिली कि उन्हें कहाँ विश्वास करना चाहिए और कहाँ नहीं? उन्हें यह भी अनुभव हुआ कि देहातों के साधारण लोगों और छात्रों में कितना असीम उत्साह और बल है। उससे युक्तिपूर्वक लाभ उठाया जा सकता है।"

नौकरशाही कहती थी कि हमने कांग्रेस को कुचल दिया है; परन्तु अहमदाबाद के मिल मजदूरों की सफल हड़ताल, चिमूर-काण्ड की पीड़ित बहनों के प्रति सहानुभूति तथा न्याय प्राप्त करने के लिए प्रोफेसर भंसाली भाई के 74 दिन के अनशन में हजारों स्त्रियों और पुरुषों का उनके पास जाकर सहानुभूति दिखलाना; पूज्य बापू के अनशन के समय उनकी स्वास्थ्य-रक्षा और चिरायु के लिए देश के कोने-कोने में की जाने वाली प्रार्थनाएँ आदि बातें कांग्रेस के जीवित होने का प्रमाण देती हैं।

जून, 1943 में कुछ मित्रों ने निश्चय किया कि पूना में सत्याग्रह करने के लिए बाहर से अधिक संख्या में भाई-बहनों को भेजा जाए। उस समय सभी प्रकार की रुकावटों के होते हुए भी प्राय: सभी प्रान्तों से छ:-सात सौ भाई-बहन पूना और बम्बई पहुँचे, जिनमें दो-तीन सौ की गिरफतारी मार्ग में ही हो गई थीं।

26 जवनरी, सन् 1944 को जब बड़े लाट की कोठी के सामने दिल्ली में स्वाधीनता दिवस मनाया गया था, उस अवसर पर कुछ मित्रों को अन्देशा था कि वहाँ जो जाएगा, गोली का शिकार बन जाएगा। उस अवस्था में भी श्री श्रीराम शर्मा 'प्रेम' के नेतृत्व में 25 स्वयंसेवक खादी की वर्दी में तिरंगें झंडों के साथ ताँगों में बैठकर वहाँ जा पहुँचे। वहाँ पर राष्ट्रीय नारों और झंडाभिवादन के बाद सैकड़ों दर्शकों में स्वाधीनता दिवस के छपे प्रतिज्ञा-पत्र बाँटे गए। उन दर्शकों में अधिकांश वायसराय के दफ्तर में काम करने वाले भारतीय कर्मचारी थे। इसी प्रकार 13 अप्रैल, 1944 को लखनऊ में कौंसिल हाउस के सामने राष्ट्रीय झंडों के साथ तेरह-चौदह स्वयंसेवकों ने, श्री मर्यादा तिवारी के तत्त्वावधान में पहुँचकर झंडा अभिवादन किया, जबकि हैलेटशाही के आतंक से झंडा लेकर चलना भी मृत्यु को आमन्त्रण देना था।

इन बातों से यह स्पष्ट है कि कांग्रेस को जीवित रखने कि लिए भीतर ही भीतर स्वातन्त्र्य भावना की आग सुलग रही थी और उसका सदुपयोग करना ही हमारा काम था। इससे यह भी सिद्ध हो गया कि नौकरशाही का यह कहना कि उसने कांग्रेस को कुचल दिया था, निरा भ्रम था।

7

हवलदार रामानन्द तिवारी

1857 के सिपाही विद्रोह के बाद यह पहला अवसर था जब सिपाहियों ने ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध खुलकर बगावत की। इसलिए जमशेदपुर के सात सौ हथियारबन्द सिपाहियों का यह विद्रोह 42 की क्रान्ति का एक अत्यन्त गौरवमय पृष्ठ है और इसका नेतृत्व किया था शाहाबाद जिले के बहादुर सिपाही श्री रामानन्द तिवारी ने।

'हरिजन' का प्रभाव

रामानन्द तिवारी उस समय जमशेदपुर में हवलदार थे। शुरू से ही उन्हें कांग्रेस से दिलचस्पी थी। इसलिए वे सदा खादी पहनते और गांधीजी का 'हरिजन' पढ़ते। 'हरिजन' पढ़ने से 1942 का जून आते-आते उन्हें यह साफ दीख पड़ने लगा कि एक बार फिर गांधीजी बगावत का झण्डा तुरन्त खड़ा करेंगे। देर करना हानिकारक होता, इसलिए जून महीने में ही आपने 'इन्कलाबी सिपाही दल' नामक एक गुप्त संस्था का संगठन किया। शुरू में इसके तीन ही सदस्य थे। लेकिन अगस्त-क्रान्ति के बढ़ने के साथ ही इसके सदस्य भी बढ़ने लगे और उनकी संख्या सात सौ तक पहुँच गई।

टाटानगर की हड़ताल

और इस क्रान्ति का आरम्भ जहाँ तक जमशेदपुर के सिपहियों का सम्बन्ध था—9 अगस्त के अनशन से हुआ, जिसमें सभी सिपाहियों ने भाग लिया। 10 तारीख को रामानन्द तिवारी ने सभी सिपाहियों को साथ लेकर टाटानगर की मिल की हड़ताल को सफल बनाने में पूरा सहयोग दिया।

उसी दिन रात को तिवारीजी ने सभी सिपाहियों की एक सभा की। वहाँ निश्चय किया गया कि कोई भी सिपाही, आन्दोलन को कुचलने के लिए किये गए किसी भी काम में सहयोग न करे। 15 अगस्त तक आपने 12,000 पर्चे छपवा लिए। जिनमें सिपाहियों को बगावत का सन्देश दिया गया था। इन पर्चों को बिहार के सभी हिस्सों में भेजा गया। कुछ पर्चे बंगाल भी गए।

हथियारों, बैंकों पर कब्जा

पुलिस के अफसर हैरत में थे। आखिर क्या किया जाए—उनकी समझ में कुछ नहीं

आ रहा था। सात सौ वर्दी पहने हुए हथियारबन्द सिपाहियों का जुलूस हर रोज जनता में एक नया उत्साह भर रहा था। पुलिस-चौकियाँ, थाने, इम्पीरियल बैंक, डाकखाना, मैगजीन, खजाना सभी पर बागी सिपाहियों का कब्जा था।

4 सितम्बर को बिहार-पुलिस के इन्सपेक्टर जनरल क्रीड जमशेदपुर पहुँचे। उन्होंने तिवारीजी से पाँच घण्टे बातें कीं। तिवारीजी को सब तरह का लालच दिया गया। उनको हवलदार से इन्सपेक्टर बनाने का वादा किया गया। लेकिन तिवारीजी अपने पथ से नहीं हटे। सिपाहियों को भी फोड़ने की कोशिश की गई। बिहार के सिपाहियों के वेतन में स्थायी और अस्थायी तौर पर वृद्धि भी की गई और महँगाई भत्ता भी बढ़ाया गया। लेकिन वह सब भी बेकार हुआ।

जमशेदपुर का घेरा : गिरफ्तारी

अन्ततः ब्रिटिश संगीनें आईं। मशीनगनों से लैस 15,000 गोरे और गोरखे जमशेदपुर पहुँचे। समूचा शहर घेर लिया गया। रामानन्द तिवारी 33 सिपाहियों के साथ गिरफ्तार कर लिये गए और हजारी बाग सेन्ट्रल जेल में रखे गए। कचहरी में उन्होंने अपनी तरफ से बचाव की कोई सिफारिश नहीं की। एक लिखित बयान दिया, जिसे बयान न कहकर एक बागी के उद्‌गार ही कह सकते हैं।

उसमें आपने साफ कह दिया कि मैं ब्रिटिश सरकार को एकदम नहीं मानता और कांग्रेस को ही हिन्दुस्तान के शासन की अधिकारी समझता हूँ। एक साल कैद की सजा इनाम में मिली।

जयप्रकाश के साथ

6 जुलाई, 1943 में जेल से छूटने के बाद आपने श्री जयप्रकाशनारायण के मातहत उनके गुप्त संगठन में पूरा हिस्सा लिया। देश के एक कोने से दूसरे कोने तक जाना और सिपाहियों को लड़ाई के लिए तैयार करना—यही आपका काम था। 'इनकलाबी सिपाही दल' की फिर से स्थापना की गई। इस तरह आपने डेढ़ वर्ष तक फरारी की हालत में काम किया। 26 दिसम्बर, 1944 को आप फिर पकड़ लिये गए।

31 जनवरी, 1946 को फिर रिहा कर दिये गए। बक्सर सेण्ट्रल जेल के वार्डरों और सिपाहियों ने आपकी रिहाई के समय दावत दी थी। तब से आप बिहार के सभी हिस्सों में 'पुलिसमैन एसोसिएशन' कायम कर रहे हैं और आने वाले संग्राम के लिए सब सिपाहियों को तैयार कर रहे हैं।

पाँचवाँ भाग

अगस्त-क्रान्ति पर नेताओं के उद्‌गार

'तिलक' और 'गांधी' का सपना
सबने मिल साकार किया।
ध्येय-प्राप्ति के हित बढ़-चढ़कर
तन, मन, धन उपहार दिया॥

पा संकेत तुम्हारा लाखों,
युवक बने अनुयायी।
सुप्त सिंह-से क्षुभित देश ने
निज ताकत अजमाई॥

1. पं० जवाहरलाल नेहरू

अल्मोड़ा जेल से 15 जून, 1945 को रिहा होने के उपरान्त पं० जवाहरलाल नेहरू ने वहाँ की एक सार्वजनिक सभा में जो भाषण दिया था, वह निम्न प्रकार है :—

"मैं 1041 दिन के बाद जेल से रिहा हुआ हूँ। अब तक मैं जेल में रहते हुए संसार की घटनाओं के सम्पर्क में नहीं रहा और बाहर जो कुछ हुआ उसका मुख्यत: ज्ञान मुझे पत्रों से हुआ। जब मैं रिहा हुआ तो मुझे थोड़ा आश्चर्य हुआ। लार्ड वेवल ने अपनी योजना में क्या कहा है, इसके सम्बन्ध में मुझे पत्रों में प्रकाशित योजना के अतिरिक्त कुछ मालूम नहीं है। कांग्रेस कार्यसमिति के सदस्य भी जेलों से रिहा कर दिये गए हैं; किन्तु सैकड़ों देशभक्त जेलों में ही हैं।"

सन् 42 का उल्लेख

मुझे यह ज्ञात नहीं कि अगस्त 42 में और उसके बाद के दिनों में क्या हुआ ? मैंने कई बातें पढ़ीं और सुनी हैं, जिनमें से कुछ को ठीक मानता हूँ और कुछ को ठीक नहीं मानता; किन्तु मैं इस सम्बन्ध में निर्णायक बनना नहीं चाहता।

अहमदनगर से तबादला

अहमदनगर जेल में हम 22 व्यक्ति थे। उनमें से 3 अजीब ढंग से युक्त प्रान्त के लिए तबदील कर दिये गए। सहकारी व्यवस्था पेचीदा थी; लेकिन हमें यह व्यवस्था पसन्द थी। बरेली जेल में अन्य राजबन्दी भी थे, कुछ को हम मिले और कुछ को हमने दूर से देखा। हमारे सैकड़ों साथी आज भी जेल में हैं, यह हमारे लिए कोई खुशी का विषय नहीं

सरलादेवी को सजा

नेहरू जी ने फरार लोगों व राजनीतिक कार्यकत्ताओं के परिवारों की सहायता करने वालों के साथ सरकार द्वारा किये गए व्यवहार की तीव्र निन्दा की। इस सिलसिले में महात्मा गांधी की अंग्रेज शिष्या कुमारी कैथराइन हीलमैन उर्फ सरलादेवी को एक वर्ष की सख्त कैद की सजा का आपने उल्लेख किया। आगे आपने कहा कि, "मैंने कई वर्षों से कानून का अध्ययन छोड़ रखा है, लेकिन मैं पूछता हूँ कि क्या किसी अन्य सरकार के लिए विशुद्ध कानूनी दृष्टि से यह उचित है कि प्यासे को पानी से और भूखे को अन्न से वंचित रखा जाए ? यदि ऐसा ही हो, तो ऐसी सरकार की तीव्र निन्दा की जानी चाहिए।"

अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति

तत्कालीन अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति पर प्रकाश डालते हुए नेहरू जी ने आगे कहा कि "युद्ध समाप्त हो चुका; अन्य अनेक कठिनाइयाँ पैदा हो रही हैं। भारत में क्या होगा, यह मैं नहीं जानता। आज के क्रान्तिकारी विश्व में हमें अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति का अध्ययन करना चाहिए और हमें समय आने पर कोई भी बलिदान करने के लिए तैयार रहना चाहिए। मैं आप लोगों से अपील करूँगा कि आप लोग अनावश्यक नारे न लगाया करें और विगत घटनाओं के अनुभवों से लाभ उठाकर काम करें।"

श्रीमती अरुणा आसफअली

अन्त में नेहरू जी ने श्रीमती अरुणा आसफअली का भी जिक्र किया। आपने कहा कि "जेल से रिहा होने के बाद मैं यह घोषित करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ कि उन सैकड़ों देशभक्तों में से जिनकी जानें चली जा चुकी हैं, जिन्हें फाँसी दी जा चुकी है और जो अभी तक जेलों में सड़ रहे हैं, श्रीमती अरुणा आसफअली जहाँ कहीं भी हों उन तक मेरी यह आवाज जानी चाहिए कि उन्होंने देश के लिए जो कुछ किया है, उसे मैं भूल न सकूँगा।"

कांग्रेस मरी नहीं

प्रयाग में आनन्द भवन में अपने स्वागत के लिए एकत्रित जनता के सामने भाषण देते हुए आपने कहा—"कुछ लोग कहते हैं कि कांग्रेस कुचल दी गई है या वह मर गई है। आप इस बात पर कभी विश्वास मत कीजिए। अब भी आपका उत्साह देखकर मुझे अगस्त, 1942 की याद आ जाती है। मुझे उन दिनों के पूरे समाचार मालूम नहीं हैं, परन्तु वे कुछ भी हों, मेरे देशवासियों ने चाहे उचित किया या अनुचित; मेरा मस्तक उन निर्भय बलिदानी वीरों के लिए झुक जाता है, जिन्होंने देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने प्राण दे दिए। मैं अपना सिर अपने उन असंख्य नागरिकों, प्रान्तवासियों और देशवासियों के लिए भी झुकाता हूँ जो उस ऊँचे ध्येय के लिए लड़े हैं और अब भी लड़ रहे हैं। मैंने बलिया, आजमगढ़ और गोरखपुर जिले के लोगों के वीरतापूर्ण कार्यों और कष्ट सहने का हाल सुना है। मैं उनको भी अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करता हूँ। उनके कष्ट सहने, उनके त्याग और उनकी वीरता हमारे युद्ध के इतिहास का एक अध्याय होंगे।"

अहमदनगर के अनुभव

अहमदनगर जेल के अनुभव बताते हुए नेहरू जी ने कहा—"आज तक मैं जितनी जेलों में रह चुका हूँ, उन सबमें अहमदनगर की जेल सबसे अच्छी रही है। यह पहला

अवसर था जब मुझे जेल में बिजली मिली। कमरे काफी बड़े-बड़े थे। खाना अन्तिम समय तक खराब रहा। यही वजह है कि मैं इतना दुबला हो गया हूँ। खाना गन्दा होने का कारण यह था कि बनाने की ठीक व्यवस्था न थी। बाहर के किसी भी रसोइये को जेल में रखना कठिन था; क्योंकि उसे भी राजदरबारियों की तरह बन्दी जीवन बिताना पड़ता। फलस्वरूप रसोई का काम एक ऐसे व्यक्ति को सौंपा गया था, जिसने पहले कभी खाना नहीं बनाया था। कार्यसमिति के सब सदस्य खाना एक साथ बैठकर ही खाते थे। वे जब चाहते थे आपस में मिल भी लेते थे। लेकिन मुलाकातियों से उन्हें मुलाकात नहीं करने दी जाती थी। अहमदनगर के 3 वर्ष के जीवन में मैं एक भी बच्चे व स्त्री को न देख सका। मैं नियमपूर्वक कसरत करता था। औरों की तरह मेरी भी एक बगीची थी।''

2. आचार्य नरेन्द्रदेव

स्वतन्त्रता और प्रजातन्त्र के लिए जो भी सहर्ष बलिदान किया जाए, वह कभी बेकार नहीं जाता। विगत चार वर्षों में हमारे लोगों ने बहुत आश्चर्यजनक भावना प्रकट की है और उन्होंने संसार को यह बता दिया है कि वे स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए कटिबद्ध हैं। मेरा यह स्पष्ट मत है कि इस आन्दोलन के फलस्वरूप राष्ट्रीय शक्तियों का एक बहुत शक्तिशाली संगठन बना रहा। मैं उन लोगों में से नहीं हूँ, जो उस महान् संस्था को जिसने कि हिन्दुस्तान को स्वतन्त्र बनाने के लिए बहुत ऊँचा उठाया है, नीचा दिखाऊँ। मैं उन्हें बधाई देता हूँ, क्योंकि वही भारत के भावी नेता होंगे। यह एक शुभ लक्षण है और इससे मुझे यह आशा होती है कि हमारे देश का भविष्य बहुत उज्ज्वल है।

3. आचार्य कृपलानी

विगत चार वर्षों में जनता को जिन मुसीबातों का सामना करना पड़ा, उन्हें और खासकर कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओं को होने वाली तकलीफों को हम नहीं भूल सकते। आज भी हम जलियाँवाला बाग को नहीं भूले। लेकिन 9 अगस्त, 42 के बाद जो दमन हुआ उसके सामने जलियाँवाला बाग की घटनाएँ भी गौण हो गई हैं। अब हम अपने जख्मों को हरा न होने देंगे। स्वाधीनता-संग्राम अभी तक समाप्त नहीं हुआ। वह अभी तक जारी है। जब तक हमें पूर्ण स्वाधीनता नहीं मिल जाती तब तक हमें अपना संग्राम जारी रखना होगा, फिर चाहे उसका स्वरूप समय के अनुसार कोई भी क्यों न हो ?

4. शिब्बनलाल सक्सेना

अगस्त-क्रान्ति के सम्बन्ध में यू० पी० के प्रतिष्ठित नेता श्री शिब्बनलाल सक्सेना ने निम्न विचार प्रकट किए हैं :—

''अगस्त-आन्दोलन के असली नेता महात्मा गांधी, सरदार पटेल और राजेन्द्र बाबू

ही थे। गांधीजी ने उक्त विचार को जन्म दिया तथा पटेल और राजेन्द्र बाबू ने उसे कार्यान्वित किया।''

प्राणों की आहुति चाहिए

आन्दोलन छिड़ने से पूर्व महात्मा गांधी ने कहा था कि इस बार हम आपको जेल भेजना नहीं चाहते हैं। इस बार हमें प्राणों की आहुति चाहिए। उनकी इच्छा थी कि देश में एक ऐसी आम हड़ताल हो, जिसमें देश के सभी वर्ग सम्मिलित हों। उनका विचार जेल में जाकर चुपके से बैठने का नहीं, प्रत्युत अनशन करके प्राण दे देने का था। उन्होंने 'करो या मरो' का प्रण कांग्रेस कार्यसमिति के सामने रखा था। आपने देखा कि क्या हुआ ? सारे देश में एक होड़ लग गई कि हम किस प्रकार अंग्रेजी हुकूमत को मिटाएँ। मैंने देखा कि बम्बई में एक स्थान पर घण्टेभर गोली चलती रही; पर जनता अपने स्थान पर अडिग, अडोल खड़ी रही। जब मैं गिरफ्तार किया गया तो मुझे फाँसी की कोठरी में रखा गया था। बाहर सशस्त्र पुलिस का पहरा था। इन पहरेदारों ने मुझे बताया कि आन्दोलन के प्रथम पखवारे में अंग्रेजों का तख्ता उलट गया था और एक महीने तक हुकूमत डाँवाँडोल अवस्था में रही थी। हम अन्त तक पूर्णतया अहिंसक बने रहे। यदि चाहते तो स्वयं गोरखपुर जिले में एक भी सरकारी अफसर के प्राण नहीं बचते। हम खामोश थे। हम अहिंसा के पथ से डिगे नहीं, यद्यपि हम पर बार-बार कायरतापूर्ण हमले किये गए।

समझौते का विरोधी हूँ

अगस्त-आन्दोलन के इतिहास पर भली-भाँति विचार करने के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि आन्दोलन की असफलता का सबसे मुख्य कारण जनता की अनभिज्ञता ही है। उसे उसके लिए तैयार नहीं किया गया था। मैं दिल्ली में होने वाले समझौते का विरोधी हूँ। सच्ची आजादी मिलने तक न तो मैं स्वयं चैन से बैठूँगा और न आपको बैठने दूँगा। प्रान्तों का संघ बनाने अथवा समानता का अधिकार देने से हमें आजादी न मिलेगी। यदि वार्ता के फलस्वरूप कार्य होता है तो हमें आगामी क्रान्ति की तैयारी अभी करनी चाहिए।

तोड़-फोड़ से लाभ कम

मेरा यह निश्चय मत है कि तोड़-फोड़ से लाभ के स्थान पर हानि ही अधिक हुई है। स्वयं मैंने भी तोड़-फोड़ में उस समय भाग लिया था; मैं उसके लिए लज्जित नहीं हूँ। परन्तु अब मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि आम हड़ताल तोड़-फोड़ से अधिक सफल होती।

आजाद हिन्द फौज आदर्श

सुभाष बाबू की आजाद हिन्द फौज ने एक नवीन जीवन पैदा कर दिया है। उसने भारतीय सेना के सम्मुख एक आदर्श रखा है। फलस्वरूप वह सेना जो अगस्त-आन्दोलन को निर्दयतापूर्वक कुचल रही थी, आज भिन्न मत की हो गई है। बम्बई और कराची का नाविक विद्रोह तथा जबलपुर की सैनिक हड़ताल इसके प्रबल प्रमाण हैं।

सफल क्रान्ति कैसे सम्भव ?

अगली क्रान्ति को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि रेलें बन्द हो जाएँ। इसके लिए छात्रों, मजदूरों, कृषकों तथा सभी वर्गों का संगठन होना अत्यावश्यक है। बच्चों को अपने जीवन का एक क्षण भी बर्बाद नहीं करना चाहिए। दिल्ली, पटना, लखनऊ आदि केन्द्र-स्थानों पर हमें सर्वप्रथम राष्ट्रीय झंडा फहराना होगा।

गांधीजी ही एक मात्र नेता

गांधीजी लेनिन से कहीं आगे हैं। वे समय से एक शताब्दी आगे की बातें सोचते हैं। उनको दक्रियानूसी कहना गलत है। वास्तविक कम्युनिस्ट तो गांधीजी ही हैं। उन्होंने दुनिया के सामने एक नई चीज रखी है। सुभाष बोस ने कहा था—"मेरे मार्क्स, मेरे गुरु गांधीजी ही हैं। एटम बम का मुकाबला मार्क्सवाद नहीं, प्रत्युत गांधीवाद ही कर सकता है।"

सक्सेना-योजना

श्री शिब्बनलाल सक्सेना ने कांग्रेस के अन्दर घुसी समझौता-प्रवृत्ति को दूर करने के लिए उग्र गांधीवादी कांग्रेस का संगठन करने की योजना बनाई। आपने इस नवीन पार्टी के लिए निम्न कार्यक्रम बनाया है :—

(1) श्रमिकों का देशव्यापी संगठन इस प्रकार किया जाए कि आवश्यकता पड़ने पर सारे देश में ऐसी जबरदस्त हड़ताल कराई जा सके जैसी ब्रिटेन में 1926 में हुई थी। साम्राज्य को व्यस्त करने के लिए छुटपुट कार्य करने के स्थान पर वह सर्वोत्तम तरीका होगा। (2) आजाद हिन्द फौज के सैनिकों को कांग्रेस के अन्दर लाने का प्रयत्न किया जाए तथा उनको संगठित कर उन्हें साम्राज्यवाद-विरोधी कार्यक्रम समझाया जाए। (3) पुलिस और फौज में स्वदेशाभिमान की आन्तरिक प्रवृत्ति को जागृत कर उनको अपने साथ कर लिया जाए, जिससे भावी आन्दोलन में वे हमारे विरुद्ध न जा सकें। (4) राष्ट्रीय और कांग्रेसी मुसलमानों के अन्दर क्रान्ति के बीज बोये जाएँ और उनका अधिकाधिक सहयोग इस कार्य के लिए हो। (5) छात्रों को भावी आन्दोलन का नेतृत्व करने की शिक्षा दी जाए। (6) किसानों के अन्दर गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम के अनुसार कार्य किया जाए और (7) गत 25 वर्षों से जो लोग देश के लिए बलिदान करते आए हैं उनकी क्रान्तिकारी प्रवृत्तियों को अधिकाधिक तीव्र बनाया जाए जिससे वे किसी भी अवस्था में रह सकें।

5. जगतनारायणलाल

बिहार के सुप्रसिद्ध नेता श्री जगतनारायणलाल 'एम० एल० ए०' का नाम 1942 की क्रान्ति के इतिहास में प्रमुख है। प्रयाग में हुई कांग्रेस कमेटी में स्वीकृत अखण्ड भारत प्रस्ताव के साथ भी आपका नाम जुड़ा हुआ है। बिहार की अगस्त-क्रान्ति इतिहास में अपना

विशेष स्थान रखती है। उस क्रान्ति में श्री जगतनारायणलाल का सबसे बड़ा हाथ था। आपने उन्हीं दिनों की कहानी नीचे की पंक्तियों में लिखी है :—

महात्मा जी के प्रेरणादायी अन्तिम भाषण के साथ बम्बई में 8 अगस्त, 1942 को अ० भा० महासमिति की बैठक रात में समाप्त हो गई। महात्मा जी ने उस समय के एकमात्र अधिनायक प्रत्येक प्रान्त से कुछ सदस्यों को मिलने के लिए अगले दिन सुबह बुलाया था जबकि गांधीजी सरकार के साथ की जाने वाली समझौते की बातचीत के टूट जाने की अवस्था में क्या करना होगा, इस बारे में हिदायतें और निर्देश देने वाले थे।

कांग्रेस कार्यसमिति और अ० भा० कांग्रेस कमेटी के सदस्यों की गिरफ्तारी की अफवाहें और उनका खण्डन पिछले दो दिनों में शहर में चर्चा का विषय बना हुआ था। इसमें कोई विस्मय की बात नहीं थी, यदि ऐसा होता, क्योंकि हम सब इसके लिए वहाँ पहले से तैयार होकर गए थे। मगर यह किसी ने नहीं सोचा था कि सरकार इतनी अधिक मूर्ख होगी कि वह सन्धि-चर्चा को न चलने देगी, जो कि कांग्रेस की ओर से प्रत्यक्ष आन्दोलन शुरू किए जाने से पहले की जाने वाली थी।

महात्मा जी पकड़े गए

विदेशी गवर्नमेंट से बुद्धिमानी और विवेक की आशा करना ही व्यर्थ है, जो ऐसे लोगों की सलाह से चलती है जो कि इस देश की जनता के मतामत, विचारधारा से सर्वथा अछूते हैं। अगले दिन भोर में महात्मा गांधी गिरफ्तार कर लिये गए। आपके साथ ही कांग्रेस-कार्यसमिति के सब सदस्य भी गिरफ्तार कर लिये गए। शहर के विशिष्ट भाग के अन्दर फोन की सब लाइनें बन्द थीं। बिना पूर्व अनुमति के निजी ट्रंक-काल भी नहीं हो सकता था।

अगले रोज सुबह जब हम महात्मा जी से मिलने गए, तो हमें बताया गया कि वे कार्यसमिति के सदस्यों के साथ पहले ही गिरफ्तार किए जा चुके हैं। अपने प्रान्त के मन्त्री से मिलने चले, जो कि मालावार हिल के समीप ठहरे हुए थे। पर वहाँ जाने पर मालूम हुआ कि वे इस बात का पता लगाने गए हैं कि गांधीजी गिरफ्तार होने से पहले राष्ट्र के वास्ते क्या संदेश छोड़ गए हैं। इसके बाद हम मृदुला बेन के निवास-स्थान पर गए और हमें वहाँ मालूम हुआ कि गांधीजी राष्ट्र के नाम 'करो या मरो' का सन्देश दे गए हैं। इसके बाद मैं अपने आतिथेय के साथ कार में बैठकर शहर की स्थिति देखने गया। सरदार-गृह में ठहरे अ० भा० कांग्रेस कमेटी के सदस्यों से भी मिलना चाहता था कि वहाँ क्या हो रहा है ? ज्यों-ज्यों हम ग्वालियर टैंक शहर की ओर बढ़ते गए हमें हर सड़क और गली में लोगों की बड़ी भीड़ घूमती दिखाई दी। उत्तेजित भीड़ कारों को रोक रही थी और बसों और अन्य सवारियों का चलना उसने सर्वथा रोक दिया था। बड़ी कठिनाई से मेजवानों और पिकेटरों को यह बताने पर कि मैं अ० भा० कांग्रेस कमेटी का सदस्य हूँ, काम से जा रहा हूँ, हमारी कार जाने दी गई।

दावानल के समान

सरदार-गृह पहुँचने पर मैं श्री रविशंकर शुक्ल और सी० पी० और यू० पी० के अन्य सदस्यों से मिला। उनसे मालूम हुआ कि उन्होंने अपने-अपने प्रान्तों की स्थिति जानने के लिए ट्रंक-काल करना चाहा था, पर वे असफल रहे। इस समय तक सारे शहर में दावानल के समान महात्मा गांधी और कार्यसमिति के सदस्यों की गिरफ्तारी का समाचार फैल गया था। बम्बई प्रान्त के कुछ प्रमुख कांग्रेसजन भी अब तक गिरफ्तार किए जा चुके थे। हमने सुना कि अ० भा० कांग्रेस कमेटी के अन्य प्रान्तों के सदस्य बम्बई में गिरफ्तार नहीं किए जाएँगे और वे अपने प्रान्त में पहुँचने के बाद पकड़े जाएँगे।

यह भी पता चला कि गांधीजी और उनके साथी किसी अज्ञात स्थान पर ले जाये गए हैं, वह रेलवे अधिकारियों तक को भी पता नहीं था। हमने निश्चय किया कि अपने-अपने प्रान्तों को रवाना हुआ जाए और उसी रात हम गाड़ी पर सवार हो गए। मगर यह कोई नहीं जानता था कि कौन कहाँ गिरफ्तार हो जाएगा। आफवाहें बराबर सब तरह की उड़ रही थीं। गाड़ी में बैठे शुभेच्छु लोगों ने हमें राय दी कि हम गिरफ्तार होने के लिए तैयार रहें, क्योंकि हम गाड़ी में ही इस या उस स्टेशन पर गिरफ्तार कर लिये जाएँगे। गाड़ी सी० आई० डी० पुलिस से भरी मालूम देती थी। इस बात का कोई आभास नहीं था कि वे कब और क्या करने वाले हैं।

मगर हमारी रात शान्ति से गुजरी। अगले दिन प्रातःकाल जब हमारी गाड़ी सी० पी० प्रदेश में दाखिल हुई तो जबलपुर से कुछ स्टेशन इधर ही एक स्टेशन पर रोकी गई और पुलिस अधिकारी सदल-बल हमारे डब्बे में घुस गए और उन्होंने सारे डब्बे की जाँच-पड़ताल की। प्रतीत होता था कि वे जिस व्यक्ति की खोज कर रहे थे, वह इस गाड़ी से सफर नहीं कर रहा था, क्योंकि उन्होंने किसी को गिरफ्तार नहीं किया। मगर जब गाड़ी स्टेशन को छोड़कर आगे बढ़ने लगी तब मैंने देखा कि पुलिस के पास एक दरी बिछी पड़ी है। यह प्रकट था कि उनके द्वारा गिरफ्तार व्यक्ति के साथ चलने के लिए वे वहाँ जमा हुए थे।

मेल ट्रेन जबलपुर स्टेशन पर पहुँची। पुलिस अफसरों का एक बड़ा दस्ता, जिसमें यूरोपियन और भारतीय दोनों थे; कांस्टेबलों की एक बड़ी सेना के साथ अपने से भी अधिक बड़ी भीड़ के साथ गाड़ी के प्लेटफार्म पर आने की प्रतीक्षा में खड़ा था। गाड़ी की एक सिरे से दूसरे सिरे तक तलाशी ली गई। अनेक कांग्रेस-जन वहाँ उतर गए। मगर मैं जहाँ तक देख सका पुलिस द्वारा चाहे हुए व्यक्ति इनमें नहीं पाये गए और इसलिए वहाँ कोई गिरफ्तारी नहीं की गई।

रात में हमारी गाड़ी इलाहाबाद पहुँची। मुगलसराय जाने के लिए हमें वहाँ गाड़ी बदलनी थी; पर उसके लिए हमें कुछ घण्टे प्लेटफार्म पर बैठकर इन्तजार करना पड़ा। इसी

बीच एक पुलिस-दस्ता आया और हममें से एक को, जो 'आज' दैनिक के सहायक सम्पादक थे, और हमारे साथ सफर कर रहे थे, गिरफ्तार कर ले गया। बाद में हमें मालूम हुआ कि उनको, खुसरो बाग जेल ले जाया गया था।

सतर्क हो गए

अब हम और अधिक सतर्क और चौकन्ने हो गए। हमने योजना बनाई कि पहले उन लोगों को पटना भेजा जाए, जो अधिक प्रसिद्ध नहीं हैं और वे बम्बई महात्मा गांधी का दर्शन करने तथा अ० भा० कांग्रेस कमेटी का अधिवेशन देखने के लिए गए थे। उनको यह भी निर्देश दिया कि मार्ग के किसी स्टेशन पर वे कार या दूसरी सवारी लेकर आएँ, जिससे हम असावधानी में अनजाने और अपने प्रान्त के लोगों को कांग्रेस का संदेश देने से पहले ही गिरफ्तार न कर लिये जाएँ।

मेरे अन्य साथी मुगलसराय चले गए और मैं बनारस उतर गया। निश्चय यह हुआ था कि मैं कुछ घंटे बनारस ठहरकर अपने साथियों को मुगलसराय मिल जाऊँगा और सब एक साथ दिन की गाड़ी से पटना के लिए रवाना होंगे। मेरे पास जो समय था, उसमें मैंने गंगाजी में स्नान किया और श्री विश्वनाथ मन्दिर के दर्शन किए और श्री शिवप्रसाद गुप्त तथा रमाकान्त मालवीय से भी मिला। उस समय मेरे मन में यह एक बार भी ध्यान में नहीं आया कि मैं इनसे अन्तिम बार मिल रहा हूँ; क्योंकि उसके कुछ दिनों बाद दोनों महानुभावों का स्वर्गवास हो गया। महादेव और इस युग के ब्रह्मर्षि श्रद्धेय महामना मालवीय जी का आशीर्वाद लेकर, मैं तीर्थ-धाम से क्रान्ति को अपने यौवन पर देखने और अपना तुच्छ भाग अदा करने के लिए अपने प्रान्त की ओर चल पड़ा।

मैं बनारस से दोपहर की पैसेन्जर ट्रेन से चला, जो सीधी पहुँचती है। मेरे साथी, जो मुगलसराय में मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे, मेरे साथ आ मिले और हम सब एक ही डब्बे में बैठकर रवाना हुए। जब गाड़ी दिलदारनगर पहुँची और वहाँ से छूटने वाली थी तो छात्रों की एक बड़ी भीड़ गाड़ी में चढ़ गई और उसने जंजीर खींच दी। गाड़ी दूर सिगनल पर रुक गई। एक भारी भीड़ वहीं इकट्ठी हो गई।

इंजिन पर झंडा

कुछ देर बाद गाड़ी रवाना हुई। हमने जब बाहर झाँका तो देखा कि तेजी से दौड़ रहे इंजिन पर तिरंगा झंडा लगा हुआ गाड़ी के चलने के साथ हवा के झोकों के साथ इधर-उधर फहरा रहा है। खेतों में काम करने वाले किसान भौंचक्के होकर और चकित नेत्रों से इस दृश्य को देख रहे थे। लाइन के साथ खड़े लोग और चलने वाले लोग भी विस्मय के साथ आँख फाड़-फाड़कर वह दृश्य देख रहे थे। बात यह थी कि छात्रों ने गाड़ी पर पूर्ण अधिकार कर लिया था और उन्होंने क्रान्ति की पताका उस पर फहरा दी थी। ड्राइवर पूर्णत: नहीं तो आंशिक रूप से उनके नियन्त्रण और निर्देश से गाड़ी को ले जा रहा था।

बक्सर

गाड़ी बक्सर पहुँची। वहाँ अकल्पनीय भारी भीड़ प्लेटफार्म और स्टेशनों के पुलों पर दिखाई दी। पुलिस अफसर और कांस्टेबल भी बड़ी संख्या में वहाँ दिखाई दिए। वहाँ पहले से भी अधिक संख्या में छात्र गाड़ी में सवार हुए और वे पहले, दूसरे तथा अन्य दर्जे के डिब्बों में फैलकर बैठ गए। पुलिस-अफसर किसी की खोज कर रहे थे, ऐसा प्रतीत होता था। मगर उन्होंने किसी को रोका नहीं।

बक्सर से रवाना होकर हमारी गाड़ी डुमराँव पहुँची। वहाँ पर छात्रों की भीड़ उतर गई। वहाँ पर शाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष श्री सूरजनाथ चौबे गाड़ी से उतरे, जो कि हमारे साथ बम्बई से चले आ रहे थे। हमारी गाड़ी हरएक स्टेशन पर रोकी गई और सर्वत्र हमें बड़ी उत्तेजना और उत्साह का दृश्य दिखलाई दिया। बाहिया में हम एक पुराने उत्साही कार्यकर्त्ता से मिले और उससे बातें कीं। दु:ख है कि अब वे इस संसार में नहीं रहे। जब हम आरा पहुँचे तब एक यूरोपियन अफसर, सम्भवत: वह एस० पी० था, एक पुलिस दस्ते के साथ आया और गाड़ी के हर एक डब्बे की जाँच-पड़ताल करने लगा। उसने प्लेटफार्म के कई चक्कर लगाए। वे सब शाहाबाद कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष श्री सूरजनाथ चौबे को ढूँढ़ रहे थे। मगर वे यहाँ कैसे मिल सकते थे ? वे तो डुमराँव में पहले ही गाड़ी से उतर गए थे। आरा स्टेशन का प्लेटफार्म, स्टेशन पर आने के रास्ते तथा पुल जनता की भीड़ से खचाखच भरे हुए थे। सर्वत्र शोर-गुल, उत्तेजना और जोश नज़र आ रहा था।

सेक्रेटेरियट में गोली चली

गाड़ी कई घण्टे लेट थी। वह आरा से रवाना हुई और कोइलवर का रेलवे पुल इसने पार किया और बिहटा स्टेशन के पास पहुँची थी, जब गाड़ी में कुछ लोगों ने बताया कि आज ही प्रात:काल छात्रों के जुलूस पर सेक्रेटेरियट पर गोली चलाई गई है, जो कि वहाँ जा रहा था और बहुत से छात्र मारे गए हैं। उनसे मुझे यह भी मालूम हुआ कि मेरे पुत्र श्री कृष्णचन्द्र ने, जो कि पटना कालेज के चतुर्थ वर्ष का उस समय छात्र था, उसमें अन्य छात्रों के साथ जुलूसों में प्रमुख भाग लिया है। मेरे दिल में ख्याल उत्पन्न हुआ कि गोली का वह भी शायद शिकार हुआ होगा, पर पहुँचने पर मालूम हुआ कि गोली चलने से पहले ही वह गिरफ्तार कर लिया गया था।

जब गाड़ी नेऊरा स्टेशन पर पहुँची, जो कि 'दानापुर' से पहला स्टेशन है, तब हम उतर गए। अपना सामान हमने अपने साथियों के सुपुर्द किया। हमारे निर्देश के अनुसार सब काम किया गया। नेऊरा स्टेशन के बाहर एक कार हमारी प्रतीक्षा कर रही थी। मैं और श्री जगजीवनराम उस कार से पटना आए और इस बात का पक्का पता लगाने के बाद कि पुलिस हमें वहाँ पहुँचते ही पकड़ लेने की प्रतीक्षा में नहीं है, हम अपने निवास-स्थान पर गए।

पटना में 11 ता. तक जो कुछ हुआ था वह विस्तार से मैंने मालूम किया और अपने-आपको अगले काम के वास्ते तैयार किया। अगले दिन प्रातःकाल से मैं अपने काम में लग गया। प्रातः समाचार मिला कि पटना सिटी से सिख कड़ा जुलूस बनाकर पटना जिला जेल तोड़ने और जेल में पकड़कर रखे कैदियों को बचाने के लिए आ रहे हैं। अन्य अफवाहें शहर में उड़ रही थीं।

इसलिए तीसरे पहर स्थानीय कांग्रेस के मैदान में सार्वजनिक सभा करने की घोषणा की गई। मैं जब सभा-स्थल की ओर रवाना हुआ, तो देखता हूँ कि एक बड़ी भीड़ नारे लगाती हुई सड़क पर चली जा रही है। एक वकील ने कहा कि भीड़ ने हाल ही में एक डाकखाने पर हमला किया था और वहाँ से चली आ रही है। मैंने उनसे कहा कि हिंसा न करें, पर अहिंसात्मक रहते हुए शासन-व्यवस्था को लुंज-पुंज कर दें। फोन काटने आरम्भ हो चुके थे और भीड़ का एक भाग रेलवे-लाइन की ओर मुड़ चुका था।

कांग्रेस-मैदान में

तीसरे पहर कांग्रेस-मैदान में सभा में हजारों की संख्या में छात्र और जनता सम्मिलित हुई। वहाँ मैंने बम्बई में हुई अ० भा० कांग्रेस कमेटी का सन्देश सुनाया और गांधीजी का 'करो या मरो' सन्देश भी बताया और जनता से कहा कि शासन को लुंज-पुंज करने के लिए वे जो कुछ कर सकते हैं, करें; मगर वे अहिंसा की सीमा के अन्दर ही रहें।

सभा समाप्त होते ही मैं अपने एक परखे हुए साथी श्री रामकेवल शर्मा के साथ गाँवों के लिए रवाना हो गया। मैं स्टेशन रोड से फुलवारी और खगौल की ओर बढ़ा, पर जमाल रोड पर मेरी गाड़ी रोक ली गई, जहाँ पुलिस-अफसर सशस्त्र पुलिस या सैनिकों के साथ तैनात थे। सौभाग्य से मेरी पत्नी ने एक बच्चे को लेकर साथ में चलने का आग्रह किया। अँधेरा हो चुका था। पुलिस-अफसर ने समझा कि कोई मुसाफिर स्टेशन पर जा रहे हैं। इसलिए उन्होंने गाड़ी ज्यादा देर वहाँ नहीं रोकी। स्टेशन पर, स्टेशन के दोनों दरवाजों पर, पुलिस-अफसर सार्जेन्ट और सशस्त्र पुलिस इसी प्रकार तैनात थी। मगर मेरी गाड़ी नहीं रोकी गई।

मैं वहाँ से फुलवारी, खगौल और दानापुर गया। स्थानीय कार्यकर्त्ताओं से मिला और उनको प्रोग्राम बताया। खगौल से वापस लौटते हुए मैंने अपनी पत्नी और बच्चे को वापस भेज दिया और हम दूर के देहातों के अन्दर एक गाँव से दूसरे गाँव जाकर क्रान्ति का संदेश सुनाने लगे। हम जब आगे बढ़े तो देखा कि रेलें उखड़ी पड़ी हैं, रेलगाड़ियों का चलना एकदम रुका पड़ा है। भोर से लेकर रात तक रेलवे-फिटरों और सैनिकों से भरी सफेद रेलवे कार इन लाइनों की मरम्मत करती रहती और रेलवे लाइन के दोनों ओर नजदीक में जहाँ कहीं लोगों की भीड़ दिखाई देती वहाँ तुरन्त गोली चला दी जाती थी।

नौबतपुर थाने पर हमला

हमने जनता में अपार उत्साह पाया। जहाँ गए वहीं उत्साह का समुद्र लहराता हुआ देखा। हमने जनता से दृढ़ रहने और न झुकने के लिए कहा, पर साथ ही कहा कि वह अहिंसात्मक रहे। नौबतपुर बाजार में एक बड़ा जमाव जमा हुआ और वहाँ मैंने जनता के सामने भाषण दिया। सड़क पर पेड़ गिराकर लोगों ने नौबतपुर रोड रोक दी थी और स्थानीय स्कूल के छात्र हड़ताल पर थे और थाने पर झंडा फहराने की कोशिश कर रहे थे।

सभा में बोलकर ज्यों ही मैं आगे बढ़ा, जनता हजारों की संख्या में थाने की ओर बढ़ी। उसका उद्देश्य थाने पर अधिकार करना और झंडा फहराना था। मुझे यह ख्याल नहीं था कि लोग ऐसा करेंगे और मैंने कार्यकत्ताओं को सलाह दी थी कि वे संघर्ष को बचावें। मैंने सुना कि एस० आई० ने अपनी मदद के लिए थाने के सब चौकीदारों को बुला लिया था। इसके अतिरिक्त थानों की पुलिस और एक-दो जमींदार राइफलों के साथ मदद के लिए पहुँचे हुए थे। बहरहाल मेरा भाषण समाप्त होने और मेरे रवाना होते ही एक कार्यकर्त्ता ने अकस्मात् ही घोषणा कर दी कि लोग थाने पर कूच करें और थाने पर कब्जा कर लें।

तड़ातड़ गोली

मैं अभी बाजार से बाहर भी नहीं पहुँचा था कि मुझे तड़ातड़ गोली चलने की आवाज सुनाई देने लगी। मैंने लोगों से कहा, जाओ और भीड़ को वापस बुला लो, मगर तब बहुत देर हो चुकी थी। मुझे भय था कि पुलिस की गोली से बहुत लोग मारे जाएँगे। घायल व्यक्ति हस्पताल लाये गए और मेरे साथी श्री रामकेवल शर्मा और अन्य लोग उनकी सेवा-शुश्रूषा के लिए पीछे रह गए। पर सौभाग्य से वहाँ कोई मरा नहीं; मगर कई लोगों के भयंकर और गहरे जख्म आए थे। उसी शाम को केनाल रोड से लौटते हुए मैंने ताँगे को छोड़ दिया और खगौल से एक मील दूर एक गाँव में कार्यकत्ताओं के साथ रात बिताई।

फुलवारी कैम्प जेल की रोशनी में मेरे साथियों में से कुछ ने जागने पर देखा कि फौजी लारियाँ फुलवारी रोड से आ रही हैं, जो कि इससे पहले लोगों ने रोक दी थीं। आधी रात के बाद उन्होंने मुझे सड़क की ओर आगे चले जाने के लिए कहा और पास के एक दूसरे गाँव में ले गए और एक घर में सोने का इन्तजाम किया। यह गाँव सड़क के किनारे को था, पर बिल्कुल सामने नहीं था।

अगले रोज सुबह हम अभी नित्य कर्मों से निवृत्त हो रहे थे, तब टामियों और सैनिकों से भरी कारें और लारियाँ उसी सड़क पर से गुजरीं जिस पर कि वह मकान था, जहाँ कि हम उस समय ठहरे हुए थे। हमारे कार्यकर्त्ताओं ने अपने दफ्तर से हमें हटाकर यहाँ लाने में उचित दिशा में सहज बुद्धि का परिचय दिया था। क्योंकि सैनिक क्रुद्ध थे और बड़े रोष

से सड़क को रोकने के लिए बाधाओं को दूर कर रहे थे और दफ्तर में जिन कार्यकर्त्ताओं को पाते उन्हीं पर वे अपना गुस्सा निकालते।

पैदल चले

शाम को हमने सुना कि सैनिकों ने एक मील पहले ही अपनी लारी छोड़ दी और केनाल-रोड से वे पैदल ही नौबतपुर गए और पुलिस-अफसर ने जिस किसी की ओर अंगुली उठाई उसी को उन्होंने गिरफ्तार कर लिया। जुलूस में भाग लेने और जुलूस में थाने की ओर कूच करने के अभियोग में अन्धाधुन्ध गिरफ्तारियाँ हुईं। उन्होंने बाजार और पास के गाँव के लोगों पर आतंक जमाया और वहाँ से वे दानापुर छावनी चले गए।

जोरदार दमन

गवर्नमेंट की सशस्त्र सेना के प्रदर्शन से उत्साहित होकर नौबतपुर की पुलिस ने आतंक और दमन का राज्य स्थापित कर दिया। बाजार और आस-पास के गाँवों के साधन-सम्पन्न लोगों को पुलिस ने धमकाया कि यदि वे बड़ी-बड़ी रकमें बचने के लिए नहीं देंगे तो वे सब नौबतपुर थाना हमला केस में बाँध लिये जाएँगे। घूस, दुष्टता और अत्याचार रोजमर्रा की बात हो गई।

हम और अन्दर के देहातों की ओर पैदल ही बढ़े। हम एक गाँव से दूसरे गाँव जाते और लोगों का हौसला बढ़ाते और कहते कि दमन और अत्याचार से भयभीत न हों और नग्न पाशविक शक्ति के प्रदर्शन से घबराएँ नहीं। अहिंसात्मक रीति से वे अपना कार्य निडर और निर्भय होकर करते रहें।

जब मैं साथियों के साथ जा रहा था, तब मैंने देखा कि रेल की पटरी जहाँ-तहाँ टूटी पड़ी है। रेल के दो-तीन डिब्बे सैनिक और मिस्त्रियों से भरे हुए लाइन के साथ धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे थे और जगह-जगह की रेलवे लाइन की मरम्मत कर रहे थे और जब कभी लाइन के पास लोगों को देखते तो सैनिक गोली चला देते। दूसरी ओर जब दो-तीन रेलवे के डिब्बों में भरे हुए फौजियों और मिस्त्रियों को पार्टी को लोग देखते, तो वे लाइन से हट जाते और ज्यों ही यह पार्टी आगे बढ़ जाती, लोग गाँवों से आ जाते और फिर लाइनों को तोड़ देते। लाइन की रक्षा में सैनिकों ने जो गोली चलाई इससे अनेक लोग मारे गए। मगर इससे लोग डरे नहीं, और न पीछे रहे; बल्कि उन्होंने जिस काम को उत्साह और जोश से उठाया था उसको अविचलित भाव से बराबर जारी रखा।

मेरा दल और पश्चिम में चला गया और हम गाँवों में चक्कर लगा रहे थे, तब हमने सुना कि बिहटा में हाल ही में सरकारी सम्पत्ति की भारी लूट हुई है और सारी गाड़ी, जो फौज के लिए रसद और अन्य आवश्यक सामग्री से भरी पड़ी थी, लोगों ने रोक दी है और गाड़ी का सारा माल पास और दूर के गाँव वाले ले गए हैं। इससे मुझे बहुत चिन्ता और भय हुआ। मैंने अनुभव किया कि यह दुर्घटना शोचनीय और बुरी सलाह की होने के अलावा

अधिकारी वर्ग इसका लाभ जनता पर आतंक जमाने और नाना प्रकार का दण्ड देने में लेगा।

मैं विष्णुपुर गाँव गया और वहाँ के एक प्रमुख कांग्रेस कार्यकर्त्ता के घर रात को ठहरा। मैंने देखा कि लोग इस समाचार से घबराये हुए हैं कि पुलिस और फौज गाँवों में आ रही है और लूट का सामान बरामद कर रही है और जिनके घर से लूट का माल निकलता है वे गिरफ्तार कर लिए जाते हैं। मैंने उनसे कहा कि लूटना ठीक नहीं था और कोई व्यक्ति लूट के माल को अपने पास न रखे या वैयक्तिक रूप से उसका इस्तेमाल न करे और अब वे स्थिति को साहस के साथ सामना करें, भयभीत न हों और कायरता न दिखाएँ।

शाम को लोग जमा हुए और बड़ी देर उन्होंने इस विषय में विचार किया, मगर वे अगली रात से पहले कुछ नहीं कर सकते थे। अगले रोज सुबह समाचार फैल गया कि पुलिस और फौज पास के गाँवों में आ गई है, लूट का माल बरामद कर रही है, लोगों को गिरफ्तार कर रही है, और जहाँ-तहाँ गोली चला रही है। मैंने एक-दो आदमियों को इस समाचार की सत्यता जानने के लिए भेजा और उन्होंने कहा कि वह बिलकुल ठीक है।

मार्मिक दृश्य

नर-नारी और बच्चे गाँव को छोड़कर पूर्व और दक्षिण की ओर के गाँवों में जाने लगे। बड़ी संख्या में युवतियों और प्रौढ़ा स्त्रियों को गोद में बच्चे लिये हुए नंगे पाँव जाते हुए देखना सचमुच एक हृदयद्रावक दृश्य था। कांग्रेसजनों के परिवारों को मैंने सलाह दी कि वे गाँव न छोड़ें, बल्कि दृढ़ता से स्थिति का सामना करें। यह सलाह साहसपूर्ण थी। पर गिरती हिम्मत को रोकने के लिए मैंने यह सलाह दी। इसी समय लोग समाचार लाए कि सेना पास के गाँव तक आ गई है। मैं अपनी पार्टी के साथ गिरफ्तारी से बचने के लिए दूसरे गाँव की ओर चल पड़ा, जो कि चारों ओर से पानी से घिरा हुआ था।

हम रेलवे-लाइन को पार कर सदीसापुर बाजार में जा रहे थे कि हमें खबर मिली कि फौज गाँव में घुस आई है। मुझे यह भी पता चल गया था कि जो कोई भागता है, उस पर फौजी लोग गोली चला देते हैं। मैं यह भी नहीं चाहता था कि लोग हिम्मत हार दें। पर हमको गिरफ्तारी से बचना भी जरूरी था, क्योंकि हम बाहर रहना चाहते थे और बाहर रहकर और अधिक समय तक काम करना चाहते थे। इसलिए मैं अपनी पार्टी के साथ बाजार की राह चला गया और लोगों को कहता गया कि लूट का माल अपने पास न रखें और हिम्मत से काम लें। हमारी राह पानी में से होकर जाती थी। गहरा पानी पार कर हम एक गाँव में पहुँचे और रात में हमने सारी स्थिति और गाँव वालों की टूटती हिम्मत को बढ़ाने के उपायों पर विचार किया।

विक्रम में गोली चली

प्रात: उस गाँव को हमने छोड़ दिया और नौबतपुर थाने के एक गाँव से गुजरे। साथियों और कार्यकर्त्ताओं से मिले और उनको हिम्मत बँधाई और कहा कि दिव्य परीक्षा में साहस,

धैर्य और बहादुरी से काम लें। मैं विक्रम जाने और उस थाने के कार्यकत्ताओं तथा जनता से मिलने के लिए बहुत उत्सुक था। मुझे समाचार मिला था कि एक या दो रोज पहले जब गाँव वाले बड़ी संख्या में कूच करते हुए थाने पर झंडा फहराने जा रहे थे उन पर गोली चलाई गई है। गोली चलाने से तीन आदमी मर गए और बहुत से जख्मी हुए। पालीगंज थाने की भी यही हालत थी और वहाँ भी एक आदमी मर गया था। सेना पहुँची हुई थी और सड़कों पर गश्त लगा रही थी और गाँव के लोगों को अनेक तरह से डरा-धमकाकर आतंक फैला रही थी।

जमींदार शूट कर दिया गया

मुझे यह भी पता लगा कि बाबू टीकमसिंह, एक सम्भ्रान्त जमींदार बिहटा के पास, अपने घर से बाहर आँगन में झाँकते हुए शूट कर दिये गए। विक्रम थाने का एक अन्य गाँव कांग्रेसी प्रसिद्ध होने के कारण सैनिकों द्वारा घेर लिया गया और उसके कई ओर मशीनगनें लगाकर तमाम गाँव को भून देने की धमकी दी गई। लोगों को खपरैल की छतें उतारने और लाठी से नष्ट करने के लिए बाध्य किया गया। गोरख टोली गाँव से, जिसमें एक स्कूली छात्र गोलीकाण्ड में मर गया था, इससे भी बुरा और कठोर बर्त्ताव किया गया। पटोट, डाटलाते और अन्य गाँवों की ऐसी ही अवस्था थी।

मेरे साथियों ने मुझे सलाह दी कि यदि मैं बाहर रहकर और अधिक समय काम करना चाहता हूँ तो विक्रम थाने में से न जाऊँ। मुझे इस बात से मार्मिक वेदना पहुँची कि एक युवक जो हमारा आतिथ्य करना चाहता था अपने माता-पिता द्वारा केवल कायरतावश वैसा करने से रोक दिया गया। इसके विपरीत यह देखकर हृदय उल्लास से भर गया कि एक बूढ़ी विधवा ने मेरी और मेरे साथियों की खातिरदारी करने में कुछ उठा नहीं रखा। मैंने विक्रम और पालीगंज के किसान कार्यकत्ताओं से सम्पर्क जमाने की कोशिश की, पर सफल न हुआ। पानी और कीचड़ से भरे खेतों को पार कर एक गाँव से दूसरे गाँव घूमते हुए फुलवारी थाने के प्रसिद्ध कांग्रेस-भक्त नेता श्री देवप्रसादसिंह के घर पहुँचा। उनके पास एक या दो दिन रहा। उसी इलाके की दूसरी यात्रा करने के लिए निकल पड़ा जिससे अभी लौटा था। वे भी मेरे साथ हो लिए और जब तक उनकी जरूरत रही, मेरे साथ रहे। फिर वे अपने घर नवादा लौट गए और वहाँ से जाने के कुछ दिनों बाद वे गिरफ्तार कर लिये गए।

परिवार के व्यक्ति गिरफ्तार

उनके घर पहुँचने पर उनको न पाकर उनकी अनुपस्थिति अनुभव हुई। मगर उनके बूढ़े पिता और परिवार को निराश और हताश होने के बजाय उत्साह, साहसपूर्ण देखकर चित्त को बड़ी प्रसन्नता हुई। यहाँ एक या अधिक दिन रहा। यहीं मुझे मालूम हुआ कि मेरी पत्नी और बच्चे और मेरे घर में और जो लोग पाये गए कुछ दिन पहले वे सब गिरफ्तार

कर लिये गए हैं। मेरे केवल दो बच्चे मेरी बूढ़ी बहन के पास पीछे रह गए हैं। एक भक्त कार्यकर्त्ता द्वारा वे दोनों बच्चे पहरे से घिरे शहर में किसी तरह मेरे पास भेंट कराने के लिए लाये गए। मुझे मालूम हुआ कि पटना शहर जाने के सब प्रवेश-मार्गों की नाकाबन्दी की हुई है और बड़ा पहरा है और पटना के पूर्व में सेना पहरे पर तैनात खड़ी है और बिना पास के शहर में जाना सम्भव नहीं है। दक्षिण का सारा इलाका पानी से भरा हुआ था। मेरे मन में ख्याल आया कि मेरा काम पूरा हो गया है और अब मुझे अपने को छिपाकर रखने की जरूरत नहीं और मैंने तकरीबन बिना पास के खुले तौर पर पटना शहर जाने और गिरफ्तार होने या जो कुछ भी हो उसको सहने का निश्चय कर लिया।

छठा भाग

अगस्त-क्रान्ति के शहीद

मरना वीरों का जीवन है
आत्मार्पण धीरों का धन है।
इससे बढ़कर है पुण्य कहाँ
यदि देह देश हित अर्पण है॥

मर मिटने की आकांक्षा में
हम सभी बढ़े अनुराग लिए।
औ' चढ़े प्रलय-रथ पर स्वर में
विकराल क्रान्ति का राग लिए॥

1. महादेव देसाई

महादेव भाई महात्मा गांधी के प्राइवेट सेक्रेटरी थे। गांधीजी के साथ ही उनका राजनैतिक जीवन प्रारम्भ हुआ। वे एक उच्चकोटि के पत्रकार थे। उन्होंने वर्षों तक गांधीजी के 'हरिजन' का सम्पादन भी किया था। वे 9 अगस्त के प्रात: गिरफ्तार हुए थे और 15 अगस्त, 1942 को उनका शरीरान्त भी आगाखाँ महल में हुआ। गिरफ्तारी से पूर्व की गर्मी के मौसम में उनकी तबीयत काफी बिगड़ गई थी। वे सन् 1918 के चम्पारन सत्याग्रह से महात्मा जी के सम्पर्क में आए थे । उस समय वे वकालत करते थे। महादेव भाई के निधन से गांधीजी का दाहिना हाथ बिलकुल निकम्मा हो गया। उनकी कमी गांधीजी को पग-पग पर खटकती है। उनकी कार्यकुशलता और अध्यवसायिता का वर्णन हम इन पंक्तियों में करने में सर्वथा असमर्थ हैं। इसके लिए तो स्वयं महात्मा गांधी के हाथों द्वारा लिखी हुई पुस्तक ही उपयुक्त हो सकती है।

अगस्त-क्रान्ति के सिलसिले में आगाखाँ महल का यह प्रथम बलिदान इतिहास में सदा अमर रहेगा।

2. राष्ट्रमाता कस्तूरबा गांधी

दिवंगता राष्ट्रमाता कस्तूरबा गांधी भारतीय नारीत्व की परम्परा में वही स्थान रखती हैं, जो गौरवपूर्ण स्थान, सीता, सावित्री, तारामती तथा दमयन्ती आदि को प्राप्त है। महात्मा गांधी के साथ राष्ट्रीय जागरण में उन्होंने जो महत्त्वपूर्ण योग दिया वह उल्लेखनीय है। उन्होंने देशपूज्य बापू के साथ अनेक बार जेल-यात्राएँ कीं और निरन्तर अपने को दृढ़ से दृढ़तर ही बनाए रखा। अगस्त की क्रान्ति भारत के राजनैतिक गगन में एक भयंकर झंझावात ले आई, जिसमें हमारे अनेक नेता तथा युवक हँसते-हँसते अपने प्राणों की बलि दे गए। माता कस्तूरबा गांधी भी उन्हीं में से एक हैं। 9 अगस्त को आप भी गांधीजी के साथ ही सहर्ष गिरफ्तार हुईं। आगाखाँ महल में आपका स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन बिगड़ता ही गया और अन्त में उन्होंने पूर्णतया खाट का आश्रय ले लिया। ऐसी स्थिति में भी सरकार ने आपको जेल से रिहा नहीं किया और अन्त में वहीं पर चल बसीं। महा शिवरात्रि के पुण्य पर्व के दिन 22 फरवरी, 1944 को आपने इस नश्वर लोक से प्रयाण किया। आप पत्नी, आदर्श माता और आदर्श देशभक्त थीं।

3. अमर शहीद राजनारायण मिश्र

''हम देश के लिए मर रहे हैं, फिर पैदा होंगे और फिर मरेंगे'' ये वाक्य थे जो 9 दिसम्बर, 1944 को संसार से प्राणाधिका पत्नी से, जिगर के टुकड़े बच्चों से सदा के लिए विदा लेते हुए अमर शहीद राजनारायण मिश्र ने आखिरी मुलाकात में कहे।

पत्नी की आँखों से आँसू गिरते देखकर इस अद्वितीय वीर ने कहा—''रोती हो.....मेरे सामने से चली जाओ !'' छोटे बच्चे ने चलते समय हाथ जोड़कर अपने उस पिता को नमस्ते किया, जिसे दूसरे दिन फाँसी की रस्सी उससे हमेशा के लिए छीन लेने वाली थी। मिश्र जी ने पत्नी से कहा—''देखो, इन बच्चों को भी ऐसी शिक्षा देना कि मेरी ही भाँति राष्ट्र पर अपने को निछावर कर दें।'' आज यह बच्चा जिसे यह वीर पिता राष्ट्र को धरोहर बनाकर दे गया, मैडिकल कालेज लखनऊ अस्पताल में बीमार पड़ा है।

फाँसी के तख्ते पर क्रांति का नारा

फाँसी के पहले श्री राजनारायण ने जेल-अधिकारियों से अपने हाथ खोल देने को कहा। इच्छानुसार फंदा ढीला कर दिया गया और वे फाँसी के तख्ते पर उछलकर चढ़ गए और दृढ़ स्वर में राष्ट्रीय वन्दना की। उनका अन्तिम शब्द था, 'इनक्लाब जिन्दाबाद'।

एक जेल-अधिकारी का कहना था कि अन्तिम शब्द तक उनकी मुखमुद्रा प्रसन्न थी। आने वाली भयानक मृत्यु की छाया उसे म्लान न कर सकी। मृत्यु के आसन्न क्षणों में भी उनका वजन 6 पौंड बढ़ गया। मरने पर भी शहीद के मुख पर कोई विकलता का चिन्ह नहीं था। उस पर वह शान्ति थी जो कर्त्तव्य की वेदी पर बलि हो जाने वाले साधु पुरुषों के प्रसन्न अन्तःकरण की चमक है और जो रोटी के टुकड़ों पर अपना स्थान और मातृभूमि की शान बेचने वाले पातकियों को स्वर्ग में भी नसीब नहीं। मिश्र जी के तीन भाई अगस्त आन्दोलन के सिलसिले में 32 वर्ष, 26 वर्ष और 23 वर्ष की सजाएँ भोगते हुए कारागार में बन्द पड़े हैं। राजनारायण मिश्र 1942 के आन्दोलन में फाँसी के शिकार होने वाले पहले कांग्रेसजन थे। फाँसी की रस्सी उनके जीवन में बचपन में ही गुँथ गई थी। जब वे केवल दो साल के थे उनकी माता तुलसी देवी ने, जो अत्यन्त मनस्विनी महिला थीं, किसी असह्य अपमान से आहत होकर फाँसी लगाकर अपनी जान दे दी थी।

भगतसिंह की छाप

फाँसी की दूसरी छाप पड़ी बालक राजनारायण पर जब सरदार भगतसिंह की फाँसी की कहानी गाँव में पहुँची। यह घटना बालक पर अमिट छाप छोड़ गई और उसके मानस में आत्मबलिदान के बीज बो गई। भगतसिंह की गाथा सुनकर राजनारायण ने उन्हीं के पदचिन्हों के अनुसरण की टेक ली और अपने को भगतसिंह कहने भी लगे।

माँ की मृत्यु के बाद बहन रमादेवी ने राजनारायण का पालन-पोषण किया। पिता

श्री बलदेव मिश्र अत्यन्त साधु प्रकृति के थे। सबसे छोटे होने के कारण इन्हें भाइयों का प्यार मिला और उन्होंने इनको सब प्रकार से उत्तेजन दिया। ये बचपन में बड़े ही नटखट, ऊधमी और मार-पीट में तेज थे। वे कहते थे, 'हमें इसे शेर बनाना है।'

1930 का आन्दोलन

जब वे गाँव के स्कूल में थे, 1930 के अविनय अवज्ञा आन्दोलन की आँधी उठी। भीखनपुर गाँव में भी उसके झकोरे आए। बाहर के लोग झंडा लेकर गाँव में आए। गाँव के बहुत थोड़े लोग आगे बढ़े। पर बालक राजनारायण ने बेहिचक झंडा उठा लिया। इस दु:साहस के लिए मास्टरों ने बेंतों की सजा दी। यह भी देशभक्ति का प्रथम पुरस्कार था। इस मौके पर बड़े भाइयों ने आपका पूरा साथ दिया और मास्टरों को उनकी बुजदिली पर फटकारते हुए बालक को शाबाशी दी। वह घटना इनके जीवन में निर्णायक सिद्ध हुई। जन्मजात निर्भीकता और देशप्रेम से और भी प्रबल हो उठे।

आन्दोलन समाप्त हो गया, पर उसकी चेतना राजनारायण को सजीव कर गई। गाँव की पाठशाला से निकलकर वे सिकन्दराबाद मिडिल स्कूल के नायक हो गए और अपने स्वभावगत नेतृत्व से कांग्रेसी छात्रों की टोली कायम कर ली। यह वह समय था जब सब स्थानों में अमन सभाओं का जोर था। अध्यापक विद्यार्थियों को सरकारी प्रशंसा से भरे हुए गाने याद कराते और सभा में कहलवाते थे। इनके स्काउट-मास्टर साहब ने भी इनसे गाना याद करने को कहा। इन्होंने साफ इन्कार कर दिया और कहा—"हम केवल भगतसिंह का गाना गा सकते हैं।" इसी समय इन्होंने पढ़ाई छोड़ दी। एक साल के बाद गोला गोकर्णनाथ के अंग्रेजी स्कूल में छठी कक्षा में दाखिल हुए। यहीं से इनका राजनैतिक जीवन प्रारम्भ हुआ।

राजनैतिक जीवन

छठी कक्षा से ही इन्होंने खद्दर पहनने की प्रतिज्ञा की। यह होली का दिन था। अपने सारे कपड़े निर्धनों को बाँटकर खद्दर पहना। इसके ठीक दो महीने बाद सीतापुर में श्री एम० एन० राय के सभापतित्व में युक्तप्रान्तीय नवयुवक संघ की कांग्रेस हुई। उसमें वालण्टियर की हैसियत से गए। यह पहला अवसर था जब ये सूबे के अधिकतर नवयुवक कार्यकर्त्ताओं के सम्पर्क में आए।

वहाँ से लौटकर अपने स्कूल में भी इन्होंने नवयुवक संघ स्थापित करने का प्रयत्न किया। पैसे की समस्या सुलझाने के लिए इन्होंने अपनी साइकिल बेच दी। इन्होंने एक सुसंगठित टुकड़ी स्थापित की जिसका मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश सत्ता को भारत से उखाड़ फेंकना था। अपनी इस संस्था को पूर्ण रूप से चला भी न पाए थे कि एक धनी लड़के से झगड़ा हो जाने के कारण उस स्कूल से निकाल दिये गए। तब क्षत्रिय स्कूल लखीमपुर से कक्षा 7 और 8 पास किया।

नवीं कक्षा में ये धर्म सभा स्कूल में दाखिल हुए। अब इन्हें देश की राजनैतिक परिस्थिति का काफी ज्ञान हो चुका था। इनका स्वाभाविक झुकाव क्रान्तिकारी और उग्र राजनीति की ओर था। इनके बड़े भाई पण्डित बाबूराम मिश्र, जो आजकल 32 वर्ष की सजा पाए हुए लखनऊ सेण्ट्रल जेल में कठिन तनहाई भोग रहे हैं, अपने जिले के प्रमुख नेता थे।

पहली जेल-यात्रा

सन् 1941 ई० में राजद्रोहात्मक भाषण देने के जुर्म में राजनारायण को एक वर्ष का कठिन कारागार दण्ड मिला। इनके जेल जाते ही पुलिस ने इनके गाँव धावा मारा। इनके तथा गाँव के अन्य मित्रों के घरों की तलाशी ली। पूछने पर मालूम हुआ कि राजनारायण जी पर उन्नाव के सब इन्सपेक्टर का रिवाल्वर उठाने का अभियोग चलने वाला है। जेल जाने के बाद पुलिस ने उन्हें फँसाने के लिए भरसक प्रयत्न किया, परन्तु कोई परिणाम न निकला।

अगस्त-आन्दोलन

एक वर्ष की सजा काटकर घर लौटे तो इन्हें पिताजी के शव का दर्शन हुआ। पिताजी की अन्तिम क्रिया से अवकाश पाए चार माह भी न हुए थे कि अगस्त 1942 की आग बम्बई ने जला दी। राजनारायण जी के गाँव में भी उसकी लपट आई। राजनारायण जी के हाथ में नेतृत्व आया। गाँव के सारे युवकों को एकत्र कर धार्मिक व्याख्यान द्वारा उनमें वीरता का संचार किया और सबसे प्रतिज्ञा करवाई कि जब तक हम लोग अन्य जिलों की भाँति अपने जिले पर पूर्ण अधिकार न कर लेंगे, तब तक घर वापस न लौटेंगे। लगभग 300 नवयुवकों ने प्रतिज्ञा करके गाँव के बाहर मार्च किया। युवकों के इस दल ने सर्वप्रथम निकटवर्ती जमींदारों तथा सरकार के खैरख्वाहों की बन्दूकें छीनने और उसके बाद तहसील तथा जिले पर कब्जा करने का निश्चय किया। इन लोगों ने चार घण्टे के अन्दर अपने पड़ौस की सारी बन्दूकें छीन लीं और अन्तिम बन्दूक अपने गाँव के समीपवर्ती महमूदाबाद रियासत के जिलेदार से लेने के लिए आगे बढ़े। जिलेदार ने इन लोगों को देखते ही अपनी बन्दूक ऊपर सीधी कर दी। इसी गड़बड़ी में 'धाँय-धाँय' की दो आवाजें सुनाई दीं और जिलेदार मारा गया।

पुलिस और फौज का धावा

इस घटना के पश्चात् तीन दिन तक वे लोग गाँव में ही रहे; परन्तु पुलिस के किसी भी कर्मचारी का साहस गाँव में घुसने का नहीं हुआ। चौथे दिन गोरी पलटन की सहायता से पुलिस गाँव में घुसी; तब ये लोग निकटवर्ती जंगल में चले गए। गाँव के निवासियों को हर प्रकार से अपमानित किया गया। बहुत से मकान खुदवा डाले गए और उनमें नमक बुवाया गया। मकानों में हल चलाये गए। उनके गाँव के भले आदमी बैलों की जगह हलों

में जोते गए और बैल हाँकने वाले चाबुक से मारे भी गए। सारा गाँव-का-गाँव तबाह हो गया। जो लोग भागे हुए थे उनका परिवार तो तबाह हुआ ही, उसके साथ गाँव के अन्य परिवार भी तबाह कर दिये गए। तीन दिन के बाद भागे हुए लोग एक-एक करके तितर-बितर हो गए।

फरार होने पर भी जेल

राजनारायण जी पहले तो तीन थे, परन्तु बाद में अकेले ही रह गए। फरारी की हालत में भी ये चुप न बैठे। इन्होंने देश के प्रमुख स्थानों का भ्रमण किया। दो बार दूसरे नामों से सजा भी काटी। एक बार दो माह और दूसरी बार गांधीजी के अनशन के समय हड़ताल कराने के सम्बन्ध में 6 माह की कड़ी सजा भोगी। फिरोजपुर जेल से 1943 के अन्त में सजा काटकर आप रिहा हुए। जेल से छूटते ही इनको घोर आर्थिक कष्ट का सामना करना पड़ा। पुराने साथी सब जेल में थे। देश में दमन अपनी चरम सीमा पर था। कोई व्यक्ति आर्थिक सहायता करने का साहस भी न करता था। अन्त में विवश होकर जब वे घूमते-घामते लखनऊ आ रहे थे, तब मेरठ गांधी आश्रम के एक महाशय से इनकी भेंट हुई। उन्होंने इनको मेरठ आने का निमन्त्रण दिया। मेरठ में जाकर दोस्ती और प्रेम की बातों में फँसकर इन्होंने अपना भेद खोल दिया। दो वर्षों में यह पहला अवसर था, जब इन्होंने अपना परिचय किसी को दिया। इसके बाद ही ये पुलिस की हथकड़ियों में बँधे पकड़कर जेल लाये गए। दो मास के अन्दर ही आपका फैसला हो गया। सारे सम्बन्धी इतने डर गए थे कि किसी ने भी इनसे मिलने तक का साहस नहीं किया; पैरवी करना तो अलग रहा। मुकदमे की पैरवी ठीक से न हो सकी और इसमें उनकी स्त्री के जेवर तक बिक गए। 27 जून को लखीमपुर के दौरा जज ने उन्हें फाँसी की सजा सुनाई। अपील तथा दया की प्रार्थना बेकार रही। प्रिवी कौंसिल से 6 महीने की मुहलत भी न मिली। जिस समय आपको फाँसी की सजा सुनाई गई, उस समय आपने 'इन्कलाब जिन्दाबाद', 'नौकरशाही का नाश हो', 'अत्याचारी शासन का नाश हो' आदि नारे लगाए। वहाँ से तीन दिन बाद वे लखनऊ जिला जेल लाये गए। यहाँ पर कर्मवीर श्री राजनारायण मिश्र 10 दिसम्बर, 1944 को फाँसी के तख्ते पर चढ़ गए। अपने खून से रँगने वाले शहीदों की लिस्ट में आपने भी अपना नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित कर लिया। मिश्र जी तो मरने को मर गए, परन्तु चेहरे पर शिकन न आई। यही सच्चे देशप्रेम और उबलते हुए खून की पहचान है। मरने की अन्तिम घड़ी तक वे नारे ही लगाते रहे। फाँसी लगाने वाले जल्लाद तथा जेल-अधिकारियों की आँखों से भी पानी बहने लगा। परन्तु उनका चेहरा पहले से अधिक तमतमा रहा था। अपने सभी परिचितों से उन्होंने कहा—"हम जीवनभर हँसते रहे। अन्तिम समय भी हँसते हुए ही जाना चाहते हैं। यदि हम अपने परिचितों को यहाँ से हँसता हुआ न भेज सके, तो हम अपनी तपस्या में कमी समझेंगे।"

देश की शोषित जनता को उनका सन्देश था, ''भारत के प्रत्येक नवयुवक का कर्त्तव्य है कि वह देश की स्वतन्त्रता के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर दे। आज मैं आप लोगों से अलग हो रहा हूँ; परन्तु मेरा अन्तिम सन्देश यही है कि आगामी जन-क्रान्ति में सभी लोग जी-जान से भाग लें और साम्राज्यवाद ही नहीं, प्रत्युत उसके समर्थकों को भी समाप्त कर दें। हमारे किसानों और मजदूरों को इस संग्राम में पूर्ण रूप से भाग लेना चाहिए; जिससे क्रान्ति के बाद देश की सत्ता उन्हीं के हाथों में आ जाए।''

अपनी पत्नी से उन्होंने कहा था, ''तुमको इस बात पर गर्व होना चाहिए कि तुम्हारा पति एक शुभ कार्य में अपनी जान दे रहा है। मरने को तो सभी मरते हैं, राधेश्याम (समवयस्क मित्र, जो हाल ही में बीमारी से मरे) को कौन रोक सका है। पता नहीं, कौन व्यक्ति किस समय सबको छोड़कर चल दे। मेरे बाद तुमसे जो कुछ भी हो सके देश का काम अवश्य करना। अगर तुम चाहो तो वर्धा चली जाओ। वहाँ देश-सेवा को ही अपने जीवन का उद्देश्य समझकर रहना।''

अन्तिम विदा

मरे हुए शहीद से भी सरकार भयभीत थी और उसके सम्बन्धियों को उसका शव देने में आनाकानी कर रही थी। परन्तु स्थानीय कांग्रेस-कार्यकर्त्ताओं की जमानत पर शव दिया गया। तिरंगे झण्डे और फूलों से लदा शव लारी द्वारा गंगा घाट कानपुर ले जाया गया और चिता को समर्पित किया गया।

संवत् 1976 की वसन्त पंचमी को जब सारी धरती केसरिया बाना पहने थी, इस शहीद राजनारायण ने जन्म लिया और अपनी 24 वर्ष की मचलती जवानी देश की बलिवेदी पर न्योछावर कर दी। पर अपने छोटे-से जीवन में राजनारायण ने युग-युग को जीत लिया। आज उनके पदचिन्हों पर भारत की आकुल जावानी चल रही है।

4. श्रीदेव 'सुमन'

शहीद श्रीदेव 'सुमन' का जन्म 25 मई, सन् 1916 ई० को टिहरी गढ़वाल राज्य की पट्टी बमुण्ड के जौल नामक ग्राम में हुआ था। उनके पिता अपने क्षेत्र के एक लोकप्रिय वैद्य थे। अपने त्यागी कर्मठ पिता के चरण-चिन्हों पर चलकर वीर श्रीदेव ने उनका तथा गढ़ देश का मस्तक उन्नत कर दिया। अपनी जन्म-प्राप्ति के उपरान्त आपने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया और सफलतापूर्वक 'हिन्दू' तथा 'राष्ट्रमत' इत्यादि पत्रों में कार्य किया। दिल्ली में उन्होंने अपने कतिपय मित्रों के सहयोग से 'देवनागरी महाविद्यालय' की भी स्थापना सन् 1935 में की थी। आपके राजनैतिक जीवन का श्रीगणेश सन् 38 से हुआ और थोड़े-से समय में ही आपने अपनी कार्यकुशलता, अनुपम त्याग एवं साहस द्वारा वह कार्य कर दिखाया, जो बड़े-बड़े, साधन-सम्पन्न व्यक्ति अनेक वर्षों में भी नहीं कर सके।

आपने गढ़वाल की जनता के राजनैतिक अधिकारों की रक्षा के लिए वहाँ प्रजामण्डल की स्थापना की।

42 के आन्दोलन में आप नज़रबन्द कर लिये गए और लगभग सवा वर्ष की नज़रबन्दी के उपरान्त नवम्बर, 42 में वे आगरा सेन्ट्रल जेल से रिहा हुए। जेल से छूटते ही वे फिर गढ़वाल गए और उन्होंने जन-जागरण का कार्य प्रारम्भ कर दिया। वे कार्य कर ही रहे थे कि फिर 28 दिसम्बर, 42 को स्टेट-पुलिस द्वारा गिरफ्तार करके नज़रबन्द कर लिये गए; जहाँ से फिर उनका मृत शव ही बाहर निकला।

30 दिसम्बर, 43 से 25 जुलाई, 44 तक वे टिहरी की जेल में रहे। इन सात महीनों में उन पर क्या बीती, यह कौन जानता है? जेल अधिकारी की नृशंसता एवं बर्बरता से तंग आकर अन्त में उन्होंने 3 मई से आमरण अनशन किया; और इसी अनशन में उन्होंने अपने शरीर को हँसते-हँसते त्याग दिया।

वे एक उज्ज्वल विभूति थे। मूक पद-दलित प्रजा की सेवा करना ही उनका एक-मात्र लक्ष्य था। उनके निधन से सचमुच गढ़वाल का एक अनुपम तरुण व्यक्तित्व खो गया।

5. रमेशचन्द्र आर्य

शहीद रमेशचन्द्र आर्य का नाम सामने आते ही कलेजा मुँह को आता है। मेरा उनसे वर्षों से परिचय था। जब मिलते, हँसते हुए अल्हड़ता नस-नस में भरकर। मुस्कराहट प्रति क्षण उनके मुख पर अठखेलियाँ करती रहती थी। गठीला बदन, छोटा कद, शरीर पर खद्दर का कुर्ता तथा धोती, सिर पर बड़े-बड़े पीछे को लटके हुए बाल और पैरों में चप्पल; यही था उनका नक्शा। मैंने अपने परिचय के पाँच वर्षों में उन्हें इसी रूप में देखा था। अप्रैल, सन् 38 में मेरा उनसे परिचय हुआ था; जब वे 'वीर अर्जुन' में सहकारी सम्पादक थे। मैं उन दिनों 'आर्यमित्र' का सहकारी सम्पादक था। हैदराबाद-सत्याग्रह के दिनों में उन्होंने जी-तोड़कर कार्य किया था। उन्हीं के त्याग, अनवरत परिश्रम तथा अपूर्व कौशल से दिल्ली में उस समय कार्य हो सका था।

वे राष्ट्रीयता में पले थे। विजयगढ़ के प्रसिद्ध आर्य एवं देशभक्त परिवार में उनका जन्म हुआ था। जेल जाना और हँसते-हँसते अभावों का सामना करना तो मानो उन्हें विरासत में मिला था। बयालीस की आँधी आते ही उन्होंने अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया और उसका उपहार हमें उनके बलिदान में मिला। नौकरशाही के कुत्तों ने उन्हें गिरफ्तार करके दिन के 11 बजे अलीगढ़ जेल में पहुँचाया और रात को नौ बजे उनकी लाश जेल के कुएँ में पड़ी हुई मिली। उनकी इस रहस्यमयी शहादत का अभी तक भी ठीक-ठीक पता नहीं चल सका। उनकी लाश को देखने से ऐसा मालूम हुआ था कि उनके शरीर पर अनेक घाव थे और पैर सूजे हुए थे। वहाँ के एक जमादार ने उसी जेल के एक राजनैतिक बन्दी को उनकी

मृत्यु का कारण पुलिस तथा जेल अधिकारियों द्वारा उन्हें बहुत अधिक शारीरिक यन्त्रणाएँ दिया जाना बतलाया है।

शहीद रमेश तो हमारे बीच से गए; किन्तु उनका त्याग, शौर्य और साहस अपनी अमर कहानी छोड़ गया है। उनकी इस रहस्यपूर्ण शहादत का बदला कभी-न-कभी तो अवश्य ही लिया जाएगा। नौकरशाही इन बलिदानों के लिए पूर्ण उत्तरदायी है।

भाई रमेशचन्द्र आर्य केवल एक कट्टर देशभक्त ही नहीं, प्रत्युत सफल लेखक और उद्‌भट कार्यकर्त्ता थे। उनकी कई पुस्तकें हिन्दी साहित्य के लिए गौरव की वस्तु हैं। उनमें मौलाना आजाद तथा सुभाष की जीवनी और 'समाज के शिकार' विशेष उल्लेखनीय हैं।

6. देवशरणसिंह

बिहार के छपरा जिले के सिहौता बंगरा नामक गाँव में इस शेरे दिल युवक का जन्म हुआ था। उसने अभी अपने जीवन के 26 बसन्त देखे थे। पटना सेक्रेटरियेट के गोलीकाण्ड में इस अमर युवक ने अपनी बलि हँसते-हँसते दी थी। वह निहत्थी जनता पर गोली चलाने वाले सिपाहियों को चेतावनी दे रहा था कि एक गोली उसके हाथ को आर-पार करके निकल गई। फिर भी वह आगे बढ़ा और दूसरी गोली कलेजे में लगी। वह एक कदम ही बढ़ पाया था कि तीसरी गोली उसकी जाँघ में लगी और वह धड़ाम से जमीन पर गिर पड़ा और अस्पताल में जाकर सदा के लिए हँसते-हँसते सो गया। उसने जीवन में हँसना और मुस्कराना ही सीखा था, रोना नहीं।

7. देवीपद चौधरी

देवीपद चौधरी का जन्म 16 अगस्त, सन् 1928 को सिलहट जिले के एक कुलीन ब्राह्मण-परिवार में हुआ था। इनके पिता श्री देवेन्द्रनाथ चौधरी पटना हाईस्कूल के बंगाली स्कूल में अध्यापक थे। 1942 की क्रान्ति धधकी और यह 14 वर्ष का बालक भी हाथ में तिरंगा झंडा लेकर सेक्रेटरियेट की ओर चल पड़ा। वह बन्दूक और गोलियों से सुसज्जित सरकारी फौज से घिरे हुए सेक्रेटरियेट के भवन पर तिरंगा झंडा फहराना चाहता था। आजादी के दीवानों की टोली सिर पर कफन बाँधकर बढ़ी चली आ रही थी और उसमें वह भी था। निहत्थी जनता पर गोलियाँ चलाई गईं और 7 व्यक्ति मारे गए। 11 अगस्त, 1942 की रात में 9 बजे देवीपद चौधरी की आत्मा सदा के लिए इस संसार से कूंच कर गई।

8. रामगोविन्द

बिहार का प्रथम शहीद ही कहना होगा इसे। पटना सेक्रेटरियेट की इम्मारत पर झंडा फहराने का प्रयत्न करते हुए ही यह तरुण शहीद हुआ था। इसका जन्म बिहार के पटना जिले के दशरथा नामक गाँव में हुआ था। वह पुनपुन के हाईस्कूल की दसवीं कक्षा में अभी पढ़ता था। वह अपने पिता की एक मात्र सन्तान था। उसने स्वाधीनता के प्रयत्न में अपने प्राणों की बलि देकर उनका नाम अमर कर दिया।

9. रामनन्दन

शहीद रामनन्दन का जन्म पटना जिले के फतुहा थाने के शहादतनगर नामक गाँव में हुआ था। यह भी मैट्रिक का ही छात्र था। इसकी अवस्था केवल 18 वर्ष की थी। सबसे बड़े सन्ताप की बात तो यह थी कि वह विवाहित था। उसके शोक से उसकी नवविवाहिता पत्नी भी उसकी चरण-अनुगामिनी हुई।

10. राजेन्द्रप्रसाद

पटना जिले के धीराचक नामक गाँव में इसका जन्म हुआ था। इसकी अवस्था केवल 19 वर्ष की थी। इसका भी विवाह हो चुका था। यह गर्दनी बाग हाई स्कूल में पढ़ता था। इसके पिता का नाम श्री शिवनारायणसिंह है। उनके समस्त परिवार वालों की आशाएँ उसी पर केन्द्रित थीं।

11. सतीश झा

सतीश झा भागलपुर जिले के बदापुरा नामक गाँव के रत्न थे। इनके पिता का नाम श्री मथुराप्रसाद था। ये पटना कौलिजियट के छात्र थे। आपने अपने शहीद होने से पूर्व यह कहा था कि "भारत में किसी तरह भी अंग्रेजों का टिकना कठिन है-स्वातन्त्र्य प्रभात हो चुका है।"

12. उमाकान्तसिंह

उमाकान्तसिंह जन्म से ही वीरता के गौरव प्रतीक थे। अपने छात्र-जीवन के प्रारम्भ से ही उन्होंने ला० लाजपतराय, रूस की राज्य क्रान्ति, फ्रांस की राज्य-क्रान्ति और सन् 1857 के विद्रोह की कहानियाँ पढ़ी थीं। उनकी अवस्था केवल 15 वर्ष की थी।

आप पटना के प्रसिद्ध वकील श्री सतयुगशरण के भाई थे। बी० एन० कालिज के द्वितीय वर्ष में आप अध्ययन कर रहे थे। आपका दिल शेर का दिल था। विद्यार्थी-आन्दोलन तथा पटना की हलचल के आप मूल स्रोत थे। राष्ट्र की पुकार पर आप कभी पीछें नहीं रहे। गोली लगने के समय भी आपके मुख पर मुस्कराहट खेल रही थी।

13. विन्ध्येश्वरीप्रसाद

शहीद विन्ध्येश्वरीप्रसाद की आयु केवल 16 वर्ष की थी। चंडी थाने पर राष्ट्रीय झंडा फहराने से पूर्व उसने दरोगा से कहा था कि "हम बच्चे होकर मातृभूमि की सेवा करते हैं और आप तो हमसे बड़े हैं, अत्यधिक शिक्षित हैं, इसलिए मातृभूमि के नाम पर अपनी नौकरी का परित्याग ही कर दीजिए।" इसका उत्तर तो कुछ नहीं मिला दरोगा की ओर से वहाँ, एक गोली ने युवक विन्ध्येश्वरी के उक्त कथन का उसकी छाती में धँसकर स्वागत किया; जो दरोगा की मनोभावना की प्रतीक थी। गोली से सन्तोष न हुआ और एक चौकीदार ने गँडासा मारकर उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिए।

14. महेन्द्र चौधरी

महेन्द्र का जन्म मुंगेर जिले के पिपरा नामक ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम रामकृष्ण चौधरी है। अगस्त-आन्दोलन प्रारम्भ होने तक आप काशी के गांधी आश्रम में कार्य करते थे। इनका जीवन प्रारम्भ से ही राजनैतिक था। सन् 1932 और 33 में भी उन्हें जेल-यात्रा करनी पड़ी थी। अगस्त-आन्दोलन के दिनों में डाके डालने तथा खून करने के अपराध में बिहार सरकार ने उन पर कई अभियोग चलाए। परिणामस्वरूप अदालत द्वारा इन्हें फाँसी की सजा दी गई और नौकरशाही ने इस युवक को फाँसी के तख्ते पर लटकाकर चैन लिया। देशरत्न डा० राजेन्द्रप्रसाद की क्षमा की भीख ने भी नौकरशाही पर कोई प्रभाव न डाला।

15. फुलैनाप्रसाद श्रीवास्तव

सिवान गोलीकाण्ड के सिलसिले में श्री फुलैनाप्रसाद श्रीवास्तव का नाम नहीं भुलाया जा सकता। एक ओर थी उस अटल व्रती की खुली हुई छाती और दूसरी ओर दानवी शक्तियों का जमघट। उधर से आवाज हुई धाँय-धाँय और गोली लगी.....नंबर एक दो.....दो....इस प्रकार एक के बाद एक गोली चलीं और आठ गोलियाँ उस अमर वीर के शरीर को बेध गईं। नवीं गोली से उसके सिर के टुकड़े-टुकड़े हो गए और निर्जीव शरीर धराशायी हो गया। बल्कि यों कहिए कि रण-प्रांगण में वह सिंह सदा के लिए सो गया। भारतीय स्वातन्त्र्य-आन्दोलन के इतिहास में यद्यपि अनेक वीरों ने वीरगति पाई है तथापि सारन के श्री फुलैनाप्रसाद श्रीवास्तव के प्रयाण पर संसार के किसी भी अहिंसक योद्धा को ईर्ष्या हो सकती है।

16. प्रभुनारायण

प्रभुनारायण का जन्म मुंगेर जिले के माहर नामक गाँव के एक किसान-परिवार में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा खगड़िया राष्ट्रीय विद्यालय और उच्च शिक्षा काशी विद्यापीठ में हुई थी। 1940 में भी उन्हें 2 वर्ष की सजा हुई थी। अगस्त-क्रान्ति के समय वे 13 अगस्त को खगड़िया आए। उन्होंने शान्तिमय तरीकों से एक विराट् जुलूस निकाला। जुलूस को पुलिस-अधिकारियों ने लौटाना चाहा। इस पर जब जुलूस वापिस न लौटा तो पुलिस वालों ने गोलियाँ चला दीं। फलस्वरूप प्रभुनारायण की छाती को गोली बेध गई। रेलवे की सड़क के किनारे एक पीपल के पेड़ के नीचे उस युवक की लाश पड़ी थी; जिसने खगड़िया के क्षेत्र को अपने बलिदान से जागरण का पाठ पढ़ाया।

17. पटना कैम्प जेल के शहीद

बिहार ने अगस्त-आन्दोलन को बढ़ाने में अपने अनेक नवयुवकों के अमूल्य बलिदान दिए हैं। वहाँ की पटना कैम्प जेल इन अत्याचारों के लिए बदनाम है। अगस्त-आन्दोलन के सिलसिले में नज़रबन्द व सजा पाये हुए अनेक नवयुवकों को वह आसानी से निगल गई। नीचे की पंक्तियों से पाठक इसका अनुमान लगा सकेंगे—

अनुमानतः पाँच हजार स्वतन्त्रता के हिरावलों से समाकीर्ण कैम्प जेल में, जिसे फुलवारी संज्ञा से सम्बोधित किया है, मानवता पर जैसा नृशंस प्रहार हुआ है, उसे स्मरण कर आज भी कलेजा मुँह को आ जाता है। स्वतन्त्रता के हिरावलों को उस तपोभूमि में जीवित ही घुला-घुलाकर मार डाला गया है। उनके जीवन को बरबाद कर डाला गया है। अधिकांश को मुर्दे से बदतर बनाकर छोड़ दिया है। उस तपोभूमि में बिहार के विभिन्न जिलों से स्वतन्त्रता के साधक कैद कर रख दिए जाते थे। 1930 में उसका निर्माण हुआ और 1932 में तो उसमें मुझे एक साल तक प्रगतिशील साहित्य के क्रांन्तिकारी लेखक एवं विचारक श्री बेनीपुरी जी के सम्पर्क में रहना पड़ा; किन्तु दमनचक्र 1942 में ही चला। जरा-जरा सी बात पर 'पगली' हो जाती और सैकड़ों बहादुर लाठी के शिकार बन जाते। उन वीरों के सिर से खून के फव्वारे छूटने लगते। अंग-प्रत्यंग चूर-चूर हो उठते। लोग पशु की तरह पीटे जाते। कम-से-कम एक महीने में सैकड़ों बार 'पगली' होती और हजारों बहादुर दानवों की लाठियों से आहत होकर बेहोश हो जाते। पटना कैम्प जेल विश्व में दानवों द्वारा स्थापित सबसे बड़ा कसाईखाना थी। यही कारण है कि 1942 में बिहार प्रान्त के विभिन्न जिलों में जहाँ-जहाँ गोली चली है और उसके परिणामस्वरूप लगभग पाँच-सात सौ वीर शहादत को प्राप्त कर चुके हैं, उसका एक चौथाई भाग सिर्फ पटना कैम्प जेल के शहीदों का है। 1930 और 1932 के शहीदों की चर्चा इसमें नहीं की जा रही है। इसमें तो सिर्फ 1942 के ही शहीद हैं। पटना कैम्प जेल में शासन की ओर से जैसा पाशविक अत्याचार हुआ उसके समकक्ष जार, और नीरो का अत्याचार भी फीका है। छोटे-छोटे वार्डर से लेकर जेल के जमादार, जेलर और सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब तक साक्षात् नृशंसता के अवतार बने हुए थे :—

भरा दुःख से है, फसाना कफस का।
निराला यह है, तराना कफस का॥

वास्तव में वहाँ की गाथा निराली है। जर्मनी के नाजी दरिन्दों की क्रूरता की हम निन्दा करते हैं, जापान के फासिस्टों की दानवी लीला पर हम घृणा का भाव अभिव्यक्त करते हैं और मानवता की रक्षा के लिए दुहाई देने वाली गोरी सरकार की हम भर्त्सना तक नहीं करते ! लोग आज उसके काले कारनामे और लगे धब्बे पर एक कृत्रिम पर्दा डाले रहना चाहते हैं। यह हमारी निर्बलता है और विश्व के लिए हानिकारक भी। विश्व को विश्व में होने वाली सारी घटनाओं से भली भाँति परिचित कराना ही चाहिए। इस प्रकार पटना कैम्प जेल में होने वाले शहीदों के सम्बन्ध में अगर छानबीन करें तो हमें निःसंकोच होकर एक स्वर में कहना पड़ेगा कि गोरी सरकार की बर्बरता ने उन्हें शहीद बनाने में सफलता पाई है। स्वतन्त्रता के सैकड़ों साधक आज हमारे बीच नहीं हैं। उन साधकों के वियोग में

हम रोते हैं। हमारा परिवार रोता है, राष्ट्र अविरत क्रन्दन कर रहा है। वे सब ऐसे बहादुर थे जो गोरी सरकार की दानवी लीला के सामने घुटने नहीं टेक सके। वे अविरल गति से जीवन की अन्तिम घड़ी तक गोरी सरकार से संघर्ष करते रहे। बिछावन पर भी संग्राम करते हुए उन्होंने प्राणोत्सर्ग किया। वे वास्तव में स्वाधीनता के साधक और क्रान्ति के पुजारी थे। वे लड़ना जानते थे अत: उनकी हार कभी नहीं हुई। ऐसे वीर पुंजों, ऐसे योद्धाओं को हमने खो दिया है। उनको भुला दिया है। आज तक उनकी परवाह नहीं की। हमने पटना कैम्प जेल में अपनी आँखों से तिल-तिल कर स्वाधीनता की दीपशिखा पर जलते उन्हें देखा है। पतंगों की तरह उसकी लौ पर उन्हें उत्सर्ग होते देखा है। उन वीरों की भीषण यन्त्रणा के सामने दानवों की गोलियाँ तुच्छ हैं। फाँसी के तख्ते सुगम हैं। शरवन नामक बहादुर तरुण को पन्द्रह बेंत की सजा थी और उस बहादुर को इस सजा में नंगा करके ऐसी निर्ममता के साथ पीटा गया कि अन्त में वह वीर शहीद होकर रहा। घुट-घुटकर मरने से लाख दर्जे अच्छा है कि गोलियाँ खाकर मरें और फाँसी की डोरियों में झूला झूलकर जीवनोत्सर्ग करें। पटना कैम्प जेल के वीर पुंगवगण ऐसा नहीं कर सके। अत: क्या वे कायर थे ? ऐसा सोचना तो हमारी कृतघ्नता होगी। वे महान् थे, नारायण थे। उनकी पूजा होनी चाहिए। अपनी स्वतन्त्रता के लिए और अपनी माता के लिए उन वीरों का बलिदान हमारे लिए अनुकरणीय है। दरअसल उन पर ही, उनके खून, उनकी मज्जा और पसीने पर स्वाधीनता का सौध निर्मित होगा और स्वाधीनता के सौध के लिए उन वीरों ने अपने जीवन को दान किया है। इस स्थल पर उन वीरों की नामावली अंकित करना परमावश्यक प्रतीत होता है :—

नाम	*शहादत पाने की तिथि*	*जिला*
श्रीयुत मोतीलाल साव	27-9-42	पटना
श्रीयुत अवधबिहारी राम	31-11-42	दरभंगा
श्रीयुत अनन्त अहीर	17-1-43	पटना
श्रीयुत भवानी गोप	22-1-43	पटना
श्रीयुत ठोगा भगत	26-1-43	राँची
श्रीयुत कादन उराँव	10-2-43	राँची
श्रीयुत जीतू साब	18-2-43	पटना
श्रीयुत घटक ठाकुर	19-2-43	दरभंगा
श्रीयुत सोनी उराँव	23-2-43	पलामू
श्रीयुत परमेश्वरी नारायण	4-3-43	मुंगेर
श्रीयुत परमासिंह	6-3-43	पटना
श्रीयुत सुखलाल	6-3-43	मुजफ्फरपुर
श्रीयुत पाँचू भगत	18-3-43	राँची

श्रीयुत परमेश्वरी महतो	19-3-43	पटना
श्रीयुत सीताराम पंडित विशारद	24-3-43	शाहाबाद
श्रीयुत राघोसिंह	24-3-43	पटना
श्रीयुत रामजीसिंह	25-3-43	पलामू
श्रीयुत मुरारीसिंह	31-3-43	पलामू
श्रीयुत शिवदयाल	5-4-43	हजारी बाग
श्रीयुत जगदीश मिश्र	5-4-43	गया
श्रीयुत सिकूम संथाल	6-4-43	संथाल परगना
श्रीयुत खखूनसिंह	6-4-43	पटना
श्रीयुत साधुशरण मुण्डे	7-4-43	सिंहभूमि
श्रीयुत गोदुरा भगत	12-4-43	राँची
श्रीयुत रामसिंह	12-4-43	राँची
श्रीयुत बक्का लेथु	16-4-43	राँची
श्रीयुत मंगरु भगत	20-4-43	राँची
श्रीयुत साधु महतो	21-4-43	पटना
श्रीयुत उजागर गोप	28-4-43	पटना
श्रीयुत वधुत भगत	3-5-43	राँची
श्रीयुत मलवा माँझी	29-5-43	पटना
श्रीयुत बेणी भगत	30-5-43	राँची
श्रीयुत खेदन टाना	19-6-43	राँची
श्रीयुत हरिशंकर मिस्त्री	19-6-43	दरभंगा
श्रीयुत रमाकांत मिश्र	27-6-43	दरभंगा
श्रीयुत योगेश्वर गोप	29-6-43	पटना
श्रीयुत जीबन बनिया	30-6-43	पटना
श्रीयुत तिलक भगत	2-7-43	राँची
श्रीयुत जगमंगल	2-7-43	मुजफ्फरपुर
श्रीयुत बुधिया टाना	27-7-43	राँची
श्रीयुत बूटू भगत	27-7-43	राँची
श्रीयुत खोहया भगत	27-7-43	राँची
श्रीयुत पाँचू भगत	27-7-43	राँची
श्रीयुत मँगरा भगत	27-7-43	राँची

श्रीयुत सीर का भगत	27-7-43	राँची
श्रीयुत शिबशोरन	27-7-43	राँची

यहाँ जिन शहीदों के नाम दिये गए हैं; वे केवल पटना कैम्प जेल में शहादत प्राप्त करके वीरगति को प्राप्त हुए हैं। पटना के जनरल हस्पताल में भी बहुत-से वीर शहीद हुए हैं; जिनका पूरा विवरण प्राप्त नहीं हो सका।

18. दत्ता जोशी

26 जनवरी, सन् 1943 को पूना के एक स्थानीय 'सिनेमा हाउस' में एक बम फटा जिससे 4 गोरे सिपाही तत्काल मर गए और 10 घायल हुए।

अपराधियों की प्रान्तभर में खोज आरम्भ की गई। सैकड़ों मकानों की तलाशियाँ ली गईं और लगभग इतने ही व्यक्ति गिरफ्तार कर लिये गए। परन्तु पुलिस फिर भी किसी अन्तिम निर्णय पर नहीं पहुँच सकी। इन सब व्यक्तियों के साथ अत्यन्त अमानुषिक व्यवहार किया गया। गिरफ्तार हुए व्यक्तियों में हरि लिमये और दत्ता जोशी नामक दो नवयुवक विद्यार्थी भी थे। उनको उस मामले में, जो अब 'कैपीटल बम केस' के नाम से प्रसिद्ध है, मुखबिर बनाने के लिए विवश किया गया, परन्तु जब अदालत में मुकदमे की कार्रवाई प्रारम्भ हुई; तो हरि तथा दत्ता ने विस्तारपूर्वक उन यातनाओं की कहानियाँ सुनाईं, जो कि उनको दी गई थीं। और पुलिस को दिये गए अपने बयान वापिस ले लिए। अन्त में जज को सब अभियुक्त बरी करने पड़े तो भी कई अन्य व्यक्तियों के साथ ये दोनों युवक नजरबन्द रखे गए। अन्त में वीर युवक दत्ता जेल में ही चल बसा। हरि को कांग्रेस मन्त्रिमण्डल होने पर रिहा किया गया। जो यातनाएँ और कष्ट हरि को झेलने पड़े उन्होंने हरि को एक दृढ़ कांग्रेस-जन बना दिया। रिहाई के तुरन्त बाद हरि 'राष्ट्र सेवा दल' में सम्मिलित हो गया और 'शिविर शिक्षण' में बहुत दिलचस्पी ले रहा है। इस शिक्षण को पूना के 'राष्ट्रीय सेवादल' ने अभी प्रारम्भ किया है। जेल की काल-कोठरी से परेड-ग्राउण्ड तक की यात्रा बहुत लम्बी है; परन्तु उसने उसे बिना किसी दिक्कत के प्रसन्नतापूर्वक तय किया। वह केवल ये शब्द ही अपने मुख से निकालता है—"मुझे दत्ता की मृत्यु का दु:ख है।"

19. उदयचन्द

बिहार का पटना, यू० पी० का बलिया तथा मध्यप्रान्त का आष्टी तथा चिमूर अपने बलिदान के लिए प्रसिद्ध हो चुके हैं। अगस्त-क्रान्ति में मध्यप्रान्त के मंडला जिले का बलिदान कम महत्त्व नहीं रखता। उसने रानी दुर्गावती के नाम को फिर से जीवित कर दिया है। एक सार्वजनिक सभा में अमर वीर उदयचन्द गोली का शिकार हुआ। उसने अपनी कमीज फाड़कर खुला सीना मजिस्ट्रेट के आगे कर दिया और सीना तानकर कहा—"लो चलाओ गोली।" गोली उदयचन्द के पेट में घुस गई। 'भारत माता की जय' की ध्वनि के साथ उदयचन्द धराशायी हो गया और 16 अगस्त, 42 को वह चल बसा।

20. बसन्त दाते

बम्बई प्रान्त के कोलाबा जिले का एक छोटा-सा कस्बा महाद है। वह भी हड़तालों और प्रदर्शनों के साथ भारत छोड़ो आन्दोलन में सम्मिलित हो गया, परन्तु उसे केवल प्रदर्शनों पर ही सन्तोष न हुआ। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के वयोवृद्ध कार्यकर्त्ता नाना पुरोहित के नेतृत्व में गाँव के लोगों ने एक योजना सोची। वह योजना यह थी कि सब डिवीजनल आफीसर के आफिस के सामने एक मोर्चा लगाया जाए, पुलिस को नि:शस्त्र किया जाए और एक प्रजातन्त्र की घोषणा की जाए। यदि महाद के लोग योजना के विस्तार की बातों के बारे में ध्यान रखते तो उनका प्रजातन्त्र स्थापित होकर रहता।

सितम्बर, 1942 के एक दिन प्रात:काल महाद के सब डिवीजनल आफीसर को अपने घर के दरवाजे के सामने लोगों की भारी भीड़ खड़ी देखकर बहुत आश्चर्य हुआ। लोगों ने उनको बताया कि ब्रिटिश राज्य समाप्त हो चुका है, और आगे से उन्हें जनता के सच्चे सेवक के रूप में कार्य करना होगा। वे इससे सहमत हो गए और शहर कोतवाली तक जुलूस का नेतृत्व करने के लिए भी राजी हो गए। परन्तु इस बीच में पुलिस को इस सारी कार्रवाई का पता लग गया और उसने उच्च अधिकारियों को सूचित कर दिया। कुछ समय लेने के लिए उन्होंने मोंचे वालों को उत्तेजित नहीं किया। अपनी प्रारम्भिक सफलता पर जनता इतना फूल गई कि उसे अपने पीछे के पुल का बिलकुल भी ध्यान नहीं रहा। इस बात का पूरा विश्वास होने के बाद कि फौजें पुल पार करके महाद में घुस सकती हैं; पुलिस ने गोली चलानी प्रारम्भ कर दी। उस गोलीकाण्ड के शहीदों में पूना के एस० पी० कालिज के एक विद्यार्थी बसन्त दाते भी थे। नाना पुरोहित को इस योजना में विशेष सहायता देने के उद्देश्य से ही वे बसन्त नागरकर के साथ महाद गए थे। ऐसा करते हुए उन्होंने अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया। दाते कालिज के सुप्रसिद्ध खिलाड़ी युवकों में थे। साधारणतया यह विश्वास है कि कालिज के खिलाड़ी लड़के उसमें ही लगे रहते हैं; परन्तु दाते ने यह धारणा निर्मूल सिद्ध कर दी। 'भारत छोड़ो' के आह्वान ने उनके हृदय-प्रदेश में एक प्रेरणा भरी, और उन्होंने उसी वीरता से उसको फलीभूत किया।

सातवाँ भाग

करो या मरो

अमर समर सत्याग्रह-स्वामी
हम सब तेरे हैं अनुगामी
थे निश्चय ही अखिल जगत की
तुम ही शुचितर सुखद शरण हे !
मानवता के प्रथम चरण हे !

देव तुम्हारे संयम द्वारा
पैशाचिक बल था सब हारा
आजादी की नवल वधू के
सत्, शिव, सुन्दर रक्ष वरण हे !
मानवता के प्रथम चरण हे !

महात्मा जी का मन्त्र-दान

जिस पावन प्रेरणा को लेकर अगस्त-क्रान्ति का सूत्रपात हुआ था, वह था महात्मा गांधी का बम्बई की कांग्रेस-कार्य-समिति के खुले अधिवेशन में 8 अगस्त, सन् 42 को दिया हुआ भाषण। उस दिन गांधीजी ने अपने अन्तर के उफनते हुए भावों को जनता के सामने इस रूप में रखा कि सारा वातावरण ही बदल गया। सबके मन में देश की पराधीनता के प्रति एक भारी क्षोभ, वेदना और अकुलाहट थी। बम्बई की जिस पावन भूमि पर कांग्रेस की नींव रखी गई थी उसी स्थान पर कांग्रेस के एकनिष्ठ सूत्रधार गांधीजी का जनता को 'करो या मरो' का मन्त्र-दान करना एक उल्लेखनीय घटना थी। इन्होंने मन्त्रमुग्ध जनता के सामने लगभग ढाई घंटे तक हिन्दुस्तानी तथा अंग्रेजी में भाषण दिया। अगस्त-प्रस्ताव पास हो जाने के बाद भी महात्मा जी ने आन्दोलन को प्रारम्भ करने से पूर्व ब्रिटिश सरकार को अपने निश्चय की सूचना देने का विचार उस भाषण में प्रकट किया था। परन्तु भाषण में प्रयुक्त हुए भावों एवं शब्दों से सरकार आतंकित हो गई और उसने महात्मा जी को उसी रात्रि में प्रात: 4 बजे बन्दी बना लिया। राष्ट्र के उस कर्णधार तप:पूत महात्मा का 'करो या मरो' का अविस्मरणीय मन्त्रदान इस प्रकार है :—

"एक जमाना था जब मुसलमान कहते थे कि हिन्दुस्तान हमारा मुल्क है। उस समय वे नाटक नहीं करते थे। वे हमारे साथ लड़े थे। खिलाफत में शरीक हुए थे। उनके साथ मैं बरसों रहा। लोग कहते हैं कि मैं भोला हूँ। पर इसके माने यह थोड़े ही हैं कि मैं यह मान लेता हूँ। पर मैं सुन लेता हूँ। मुझे धोखेबाज बनने के बजाय भोला कहलाना अच्छा लगता है। मेरा तो यह स्वभाव है कि जब तक कोई चीज सामने नहीं आती, मैं ऐतबार कर लेता हूँ। यह चीज प्रस्ताव में भरी है। मुसलमान और हिन्दू भी कहते हैं कि हिन्दू-मुस्लिम एकता होनी चाहिए। दूसरी सभी कौमों का भी इत्तिहाद होना चाहिए। होता है, तो अच्छा ही है। कुछ लोग मुझसे आकर कहते हैं कि तू जब तक जिन्दा है, तभी तक यह बनेगा। लेकिन मेरा हृदय इसे कबूल नहीं करता। जिसे मेरा दिल क़बूल नहीं करता उसमें मुझे रस नहीं है। मैं तो जब छोटा बच्चा था, तब से इस चीज़ को जानता था मदरसे में हिन्दू, मुसलमान और पारसी सब थे। उनसे मैंने दोस्ती की थी। मैं जानता था कि यदि हम हिन्दुस्तान में अमन से रहना चाहते हैं, तो पड़ोसी के फ़र्ज का भली-भाँति पालन करना चाहिए। अफ्रीका भी गया तो मुसलमानों का काम लेकर गया और सबका दिल हरण कर

लिया। जो मेरे उसूलों के मुख़ालिफ थे, उन्होंने भी मुझ पर विश्वास किया। वे जानते थे, कि जो बात कहेगा, वह न्याय की ही होगी। वहाँ से आया, सो भी हारकर नहीं आया। सबको रोता हुआ छोड़कर आया। यहाँ भी वही चीज़ मेरे सामने पैदा हो गई। बड़ा काम किया, तो मुसलमानों के लिए भी किया। उस समय मुझे कोई दुश्मन नहीं मानता था। खिलाफत में मैंने क्या स्वार्थीपन किया ? मैं गाय की पूजा करता हूँ। हम एक हैं, तो सिर्फ इन्सान ही नहीं जीव-मात्र एक हैं। सब खुदा के बन्दे हैं। इसकी फिलासफी आज मैं समझना नहीं चाहता। वे दोनों भाई और मौलाना बारी मेरी गवाही दे सकते हैं कि मैंने गाय के बारे में क्या कहा था। मैंने कहा था कि गाय को बचाने के लिए मैं सौदा करना नहीं चाहता। अगर आप स्वतन्त्र रूप से ऐसा करें, तो अच्छा होगा। मैं तो मुसलमानों के साथ खाना भी खा लेता हूँ। लोग उस जमाने में इसे अच्छा मानते थे। अब तो सब जान गए कि यह तो भंगी के साथ भी खा लेता है। लेकिन उन दिनों मौलाना बारी ने कहा कि मैं आपको अपने यहाँ नहीं खिलाऊँगा। उस समय यह उनके लिए बड़ी शराफ़त की बात थी। बड़े तंग से मकान में रहते थे। उनके पास कोई महल थोड़े ही पड़ा था ? फिरंगी महल के एक कोने में रहते थे। मेरे लिए ब्राह्मण रखते थे। शराफ़त के साथ शराफ़त चलती थी। यह सब मैं सबको सुनाना चाहता हूँ। जिन्ना साहब को भी ! वे भी तो कांग्रेसी थे। भले ही आज बिगड़ गए तो क्या हुआ ? भाई तो हैं। खुदा उनको बड़ी उमर दे। वे तब याद करेंगे कि गांधी ने कभी धोखा नहीं दिया, झूठी बात नहीं की। आज वे या मुसलमान नाराज़ हैं, तो मैं क्या करूँ। मारना चाहें तो मार भी सकते हैं। मेरे पास क्या है, मेरी गर्दन तो उनकी गोद में पड़ी है और मेरे गले में छुरी भी मार दें, तो बुरा भी नहीं लग सकता। मैं बुरा क्यों मानूँ। वह कोई सच्चे गांधी को थोड़े ही मारना चाहते हैं, वह तो उस गांधी को मारना चाहते हैं जिसे वह बुरा मानते हैं। तो मैं तो वही आदमी हूँ। इस बात को मुसलमान न भूलें। गालियाँ देना चाहें तो दें। इससे मुझे हानि नहीं पहुँचती। इस्लाम को मैं जानता हूँ। वह तो कहता है दुश्मन को भी गालियाँ देना बुरा है। मुहम्मद साहब भी यही कहते थे। वे दुश्मन को अपनाते थे। उसके साथ नेकी करते थे। अगर मुसलमान इस्लाम के हैं तो जो आदमी खुदा को हाज़िर-नाज़िर कहकर कोई बात कहता है, तो उस पर विश्वास करना चाहिए। जो गालियाँ देते हैं, वे तो गोलियाँ चलाते हैं। वे गोलियों से मेरा खात्मा कर दें, तो भी मुझ पर असर नहीं कर सकते। पर इस्लाम का क्या ? वे बारह आदमी हैं। उन्हें मौलाना साहब ने कितना समझाया, पर उन पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। पर इसकी कोई बात नहीं। जहाँ हमारी फिलासफी की बात हो, वहाँ दोस्ती इस्तेमाल न की जाए। आपको जो सही लगे, वो ही करें। कोई काम मेरे लिए नहीं, इस्लाम की भलाई के लिए करें।

अगर पाकिस्तान सही चीज़ है, तो जिन्ना साहब की जेब में पड़ा ही है। हर मुसलमान की जेब में पड़ा है। पर अगर वह सही चीज़ नहीं है, तो उसे कौन हज़म कर सकता है।

तकब्बरी से तो खुदा भी भागता है। कोई क्या जाने कि जिन्ना क्या चाहते हैं। जिन्ना साहब बड़े नाराज होते हैं। एक बार उन्होंने लिखा, 'मेरे ख़त पढ़कर आपको बहुत दुःख होता होगा। आपको मेरी बात बहुत चुभती होगी। पर मैं क्या करूँ ? जो दिल में है, सो कहता हूँ।' मैं उन्हें इसके लिए मुबारकबाद देता हूँ। लेकिन आप जो उस चीज़ को नहीं मानते, उनसे मैं कहता हूँ, कि आपको जो बात सही मालूम हो, वही करें। सबकी राह न देखें। अरब में करोड़ों लोग पड़े थे। हालत ख़राब थी। उनमें अकेले पैगम्बर साहब की क्या बिसात थी ? पर उन्होंने कभी ऐसा नहीं कहा कि जब मेरे साथ करोड़ों होंगे तभी इस्लाम जारी करूँगा। मैं आपसे कहता हूँ, जिसे सही न मानें, उसे क़बूल न करें; राजाजी से भी मैंने यही कहा। वे कहते थे कि दे दो। दे देंगे तो वे माँगेंगे नहीं। मेरी शराफ़त होगी। पर मैं इस चीज़ को ठीक नहीं मानता। मैं तो जिन्ना साहब से भी कहता हूँ कि जो महज़ आपको मानने के लिए बात करते हैं, उसे आप कभी क़बूल न करें। मेरे पास कई मुसलमान आते हैं। वे कहते हैं कि पाकिस्तान बुरी चीज़ है। पर दे दो। पर पीछे इसका नतीजा क्या होगा ? यह बुरी बात है। और जब तक उसे मैं बुरा मानता हूँ, साथ न दूँगा। पर इसके माने क्या हैं ? समझ लें हम मुसलमानों को दबाकर कोई बात नहीं करना चाहते। इस तरह विश्वास कैसे हो सकता है ? वह अहिंसा से ही होगा। इसलिए कहता हूँ कि जो हक़ की बात है उसे मान लें। यह मैं कांग्रेस की तरफ से कहता हूँ। पंच भी बना सकते हैं। पर उनमें भी हमारा एतबार तो होना चाहिए। उसे भी नहीं मानेंगे, तो आपकी ज़बरदस्ती नहीं तो क्या है ? उसे कोई कैसे मानेगा ? एक ज़िन्दा चीज के टुकड़े करेंगे ? ज़िन्दा चीज को मारकर क्या लेंगे ? हाँ, हम यह कहते हैं कि कोई किसी को मजबूर नहीं कर सकता। लड़ाई करके ले सकते हैं। मुंजे तो खुल्लमखुला कहते हैं, ऐसा हिन्दू मैं नहीं हूँ। कांग्रेस ऐसे हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व नहीं करती। अगर आप कांग्रेस का एतबार नहीं करते, तो आपके हिन्दुस्तान के नसीब में झगड़े ही झगड़े हैं। पर यह ठीक रास्ता नहीं है। अगर मुझसे खुदा ठीक बोल रहा है, तो आप इससे मुझे ज़िन्दा नहीं पाएँगे। अगर चीज़ सही नहीं है तो तलवार के बल पर लेंगे, यह कहना क्या ठीक है ? मुहम्मद साहब ने यह तरीका नहीं बताया।

मैंने बहुत वक्त लिया। सारी रातभर सोचता रहा। पर तन्दुरुस्ती की भी फ़िक्र रखनी पड़ती है। डाक्टरों ने भी फ़रमाया कि सम्हलकर काम करो। पर जो चीज खुदा ने दे दी है, उसे तो उसके लिए खर्च करना ही है। और अभी तो जबान चल रही है। पहले तो मैं हिन्दू-मूसलमानों की बात करता हूँ। हम एक बन जाएँ, सही माने से मान लें, दिल में कोई परदा न रखें और हिन्दुस्तान को विदेशी कब्जे से छुड़ाने के लिए यत्न करें। पाकिस्तान भी तो आखिर हिन्दुस्तान का एक हिस्सा होगा। इसलिए पहली बात यही है कि हिन्दुस्तान के लिए लड़ें। अगर ऐसा करेंगे तो बहुत जल्दी कामयाब होंगे। छः महीने तो बड़ी बात है। आज रात को भी ले सकते हैं। पर एक बात याद रखें। हिन्दू-मुसलमान एकता तो चाहिए। पर अगर नहीं मिलती, तो भी आजादी तो लेनी ही है।

पर हम यह समझकर नहीं लें कि अकेले हिन्दुओं के लिए लेना है, पैंतीस करोड़ के लिए लेना है। हक की बात है। जिन्ना साहब की आफर का यह मतलब नहीं कि मुस्लिम राज होगा। हो जाए तो उसकी भी परवाह नहीं। पर जो हमने आफर की, सो जिन्ना साहब की मुसलमानों की बादशाहत के लिए नहीं की। वह तो हिन्दू-मुसलमान-पारसी, वगैरा सबकी होगी। मेरा लड़का मुसलमान हो गया, तो उसका होमलैंड कहाँ होगा ? और अब तो वह आर्य समाजी है। उसकी हालत क्या होगी ? उसका कौन-सा मुल्क होगा, उसे कहाँ रखेंगे ? वह अपने बाप को थोड़े ही भूल गया है। उसकी माँ ने खत लिखा। वह पक्की हिन्दू है। राम को मानती है। पर उसका खुदा तो भोला है। अनपढ़ औरत है। पर उसका खुदा उसकी सुन लेता है। उसका नाम लिख लेता है। ऐसा बेवकूफ खुदा है सो उसने लिखा कि मेरा लड़का मुसलमान हो गया, मुझे इसकी शिकायत नहीं। पर वह शराब पीता है, उसे आप कैसे बरदाश्त करते हैं ? उसका लड़का खतरा उठाकर भी मुसलमानों के बीच यह देखने के लिए गया कि उसके बाप ने शराब और व्यभिचार दोनों में से एक भी छोड़ा या नहीं। पर उसने एक भी नहीं छोड़ा। पर मैंने उससे सबक लिया। इस चीज को समझ सब जाएँ। इस लड़ाई में जितने हिन्दू हैं, उतने ही मुसलमान भी आ सकते हैं। मुसलमान को कांग्रेस के दफ्तर में कौन-सी रुकावट है। वह तो बड़ा डेमोक्रेटिक आरगेनाइज़ेशन है। इसलिए पहला सबक यह है कि आप जो लड़ते हैं, सिर्फ हिन्दुओं के लिए नहीं लड़ते। सब माइनोरिटीज के लिए लड़ते हैं। किसी हिन्दू ने मुसलमान को मार डाला या किसी मुसलमान ने हिन्दू को मार डाला, यह मैं नहीं सुनना चाहता। हिन्दू मुसलमान एक-दूसरे के लिए अपनी जान दे दें। यह मसला सबका है। झगड़े के मौके हर वक्त आने वाले हैं। इसलिए कहता हूँ सब करें। कोई एक मारे तो आप दो न मारें। मुसलमान भी ऐसा ही करें। कोई तलवार चलाता है, तो अपनी गर्दन उसके हाथ में रख दें। मेरी हिदायत सबके लिए हैं। क्योंकि यह Mass Struggle कैसे चलेगा, सो बता रहा हूँ। यह छोटी-से-छोटी शर्त है।

पकल साहब का फर्मान पढ़ें। उसे छापकर मैंने सरकार की ख़िदमत की है। 'हरिजन' में दे नहीं सकता था। आपको पता चल जाएगा कि सरकार कैसे चलती है। पर उसका रास्ता टेढ़ा है। आपका सीधा है। आँख मूँदकर भी उस पर चल सकते हैं। यही सत्याग्रह का रास्ता है।

कोई कहते हैं, यह जल्दी होगी। तैयारी की जरूरत है। जितनी मुसाफ़री मैंने की, उतनी किसी ने नहीं की, जो ज़िंदा है। मैं लोगों को जानता हूँ, मेरा तो दिल उनके पास है। और तैयारी का क्या करूँ ? अब तैयारी कच्ची, मैं कच्चा और मेरा लश्कर भी कच्चा। पर हमला आ गया तो क्या करूँ ? अब तैयारी कर लें। खुदा क्या कहेगा ? वह तमाचा नहीं मारेगा ? क्या वह यह नहीं कहेगा कि तुझको मैंने जो ख़जाना दिया, उसे तो निकाल

देता। बाकी तो पीछे मैं था ही। मैं सिर्फ हिन्दुस्तान के लिए नहीं लड़ता। यों तो मेरे पास बहुत-सी लड़ाइयाँ पड़ी थीं। पहले कहते थे, परेशान नहीं करेंगे। पर अब ऐसे कब तक बैठेंगे ? वे बारह भाई जूझते हैं, तब मैं क्यों नहीं जूझूँ। आप मेरे दिल को समझ सकते हैं।

अब क्या करना है, वह सुना दूँ। आपने रेजोल्यूशन तो पास कर लिया। पर हमारी सच्ची लड़ाई शुरू नहीं हुई। आप मेरे मातहत हो गए। अभी तो वाइसराय से मिन्नत करूँगा। समय तो देना होगा, उस बीच आपको क्या करना है।

मौलाना साहब ने पूछा कि तब तक कोई कार्यक्रम तो बताइए। मैंने कहा, चरखा है। मौलाना साहब निराश हो गए। मैंने कहा, चौबीस घण्टे काम करना है, तो कुछ तो चाहिए, इसलिए चरखा बताया। और भी कहता हूँ। तब मौलाना खुश हो गए। अब सुनाता हूँ, सब क्या कर सकते हैं।

आप मान लें, कि हम आजाद बन गए। आजादी के माने क्या हैं ? गुलामी की ज़ंजीरें तो छूटीं। उसके दिल से तो छूटी अब वहतदबीर करता है। अपने मालिक से कहता, मैंने गुलामी छोड़ दी। लेकिन आपसे नहीं डरूँगा ? आप जिन्दा रखना चाहते हैं तो ज़िन्दा रखें। आप मुझे खुराक देते थे। पर वह तो मेरी ही पैदा की हुई थी।

अब बीच में समझौता नहीं है। मैं नमक की सुविधाएँ या शराबबन्दी लेने को नहीं जा रहा हूँ। मैं तो एक ही चीज लेने जा रहा हूँ आजादी। नहीं देनी है, तो कत्ल करें। मैं वह गांधी नहीं, जो बीच में कुछ चीज़ लेकर आ जाए। आपको तो मैं एक मन्त्र देता हूँ, करेंगे या मरेंगे। जेल को भूल जाएँ। आप सुबह-शाम यही कहें, कि खाता हूँ, पीता हूँ, साँस लेता हूँ, तो गुलामी की जंजीर तोड़ने के लिए। जो मरना जानते हैं उन्होंने जीने की कला जानी है। आज से तय करें कि आजादी लेनी है। नहीं लेनी है तो मरेंगे। आजादी डरपोकों के लिए नहीं। जिनमें करने की ताक़त है, वही जिन्दा रह सकते हैं। हम चींटियाँ नहीं। हम हाथी से भी बड़े हैं, हम शेर हैं।

पहले तो मेरे सामने अखबार हैं। वे या तो सरकार की आवाज हैं और अगर हमारी आवाज हैं, तो दबकर काम करते हैं। पर वह जंजीर से छूट जाएँ। आजादी के लिए सबको बुलाता हूँ। आप तो इस मैदान में आ जाएँ। अपनी कलम मुझे दे दें। अगर यह भय हो कि सरकार छापेखाने ले लेगी, तो मैं इतना ही कहता हूँ कि अखबार बन्द कर दें। खामखाह ज़मानत न दें। अगर देना चाहें तो दे दें। पर क़लम को न रोकें। वह भी बहादुरी का काम है। मैंने क्या किया ? इतना बड़ा कारखाना चलता था, सबको बन्द कर दिया। और अब फिर नया प्रेस पैदा हो गया। फिर मैंने तो आपको एक मध्यम मार्ग बताया। आखिरी चीज आपके सामने नहीं रखी। ऐलान कर दें कि अब स्टैन्डिग कमेटी को छोड़ देंगे। सिर्फ आजाद हिन्दुस्तान की सरकार को ही मानेंगे। अगर आप बहुत दूर नहीं जा सकते, तो कहें आपकी चीज़ भी देंगे और कांग्रेस की भी देंगे। अगर बरदाश्त नहीं कर सकते, तो नहीं करना है।

आजादी आ रही है, और इसके लिए राजा लोगों से तो मैं वह भी नहीं माँगता। उनसे कहता हूँ कि मैं आपका खैरख्वाह हूँ। काठियावाड़ का हूँ। मेरे पिता तीन जगह दीवान रहे। आपका नमक खाया। मैं नमकहराम कभी नहीं हुआ। आपके सामने एक नमकहलाल मिन्नत करता है। पर अब तक आप सल्लनत के रहे। उससे सत्ता पाई। पैसे लिए। पैसे तो पिताजी ने भी पाए। पर उन्होंने पोलिटिकल एजेण्ट से लड़ाई की। एक दिन हवालात में भी रहे। उनका मैं लड़का हूँ। मेरे जिन्दा रहते आप कुछ काम करेंगे तो आपके लिए जगह है। मेरे पीछे करेंगे तो भी जवाहरलाल नहीं मानेंगे। वह तो कहता है राजा लोग, पूँजीपति, जमींदार किसी के लिए अब जगह नहीं है। वह तो प्लाण्ड एकोमा वाला है। उसकी बहुत-सी बातें पी जाता हूँ। वह तो उड़ने वाला आदमी है। चाहेगा तो हवाई जहाज में बैठकर चीन भी चला जाएगा। पर मेरे पास तो सबके लिए जगह है। एक मन्त्र है, तुझे कोई चीज़ अपनानी है, तो पहले खुदा को दे दे, उसको छोड़ दे। हिन्दुस्तान में इतने लोग हैं। मैं तो इन्हीं की मारफ़त खुदा को पहचानता हूँ। वही खुदा है। अगर वह नहीं है तो मैं दूसरे खुदा को नहीं जानता। इसी तरह राजा लोग भी प्रजा से कह दें, राज आपकी ही मिलकियत है। तब राजाओं को किसी बात की कमी न रहेगी। प्रजा उन्हें दोनों हाथों से देगी। वह राजा रहेगा। वंश-परम्परा नहीं। वंश-परम्परा भी रहेगी अगर वे दुनिया की सेवा करते रहेंगे। इसलिए राजाओं से कहना चाहता हूँ कि आप गुलामी में न रहें। रहना है, तो हिन्दुस्तानियों की सल्तनत में रहें। पोलिटिकल डिपार्टमेंट को लिख दें कि खल्कत उठ गई तो हम कहाँ रहें। चक्रवर्ती तो मातहत राजाओं को बचाता है। जिसको राजा उठाते हैं, वह चक्रवर्ती नहीं। इसलिए कह दीजिए कि हम तो रैयत के हो गए। वह बैठाएगी तो बैठेंगे। हम उसका साथ देंगे। इसमें कोई कानूनी कठिनाई नहीं। राजाओं के लिए कोई कानून नहीं। पोलिटिकल डिपार्टमेंट की ज़बानी बातों को ही मानें तो मैं क्या करूँ? यह तो आप दावा नहीं कर सकते कि हम अलग हैं। अगर आप रैयत के साथ रहेंगे, तो आप उसके सरदार रहेंगे।

राजाओं से इस तरह साफ-साफ कह दें। और इतने पर वे मारें तो मर जाएँ। तेरह हों तो तेरह। बात छिपाकर नहीं करनी है। इस लड़ाई में गुप्तता तो है ही नहीं।

अब जज वगैरह से। वे भी अभी कुछ न करें। आज ही इस्तीफा न दें। रोक लें। पर अपनी आजादी क़ायम रखें। कह दें, मैं तो कांग्रेस का आदमी हूँ। रानाडे ने यही किया था। सिर्फ एक मर्यादा का पालन करूँगा। न्यायासन पर न कांग्रेस का हूँ, न सरकार का। आजाद। कोई कानून नहीं जो मुझे यह कहने से मना करे। रानाडे जब जक जिन्दा थे, ऐसा ही करते थे। कांग्रेस में बराबर जाते थे, पर भाग नहीं लिया। समाज-सेवा-संघ पैदा कर दिया। उस ज़माने में यह कम नहीं था। आज भी जज ऐसा कर सकते हैं। गुप्त हिदायतें निकलें उनको न मानें। कह दें कि हम तो कांग्रेस के आदमी हैं। यह सरकार को मंजूर

हो तो रहें, नहीं तो निकल जाएँ।

अब सिपाही ! वे इतना तो कह दें कि अब तक तो हमने अपने दिल की बात छिपाकर रखी, पर अब तो हम कहते हैं कि हम कांग्रेस के हैं।

कई सिपाही मेरे पास आए, जवाहरलाल के पास भी आए, मौलाना साहब के पास आए, और अली भाइयों के पास भी आए थे। सिपाही नहीं बड़े-बड़े अफसर भी। पर हम उनको रोकते रहे। पर अब वे ऐलान कर दें कि हम पेट के लिए काम करते हैं, पर आदमी तो कांग्रेस के हैं। आप हमारे ही लोगों पर गोली-लाठी चलाने की बात कहेंगे तो नहीं मानेंगे। बहुत बड़ी-आबोहवा पैदा हो जाएगी। कितने ही ऐरोप्लेन आएँ, हमें परवाह नहीं।

इसी तरह से प्रोफेसर और विद्यार्थी। उनको भी आज तो खींचना नहीं चाहता। वे भी इतना तो कह दें कि हम तो कांग्रेस के हैं। प्रोफेसर भी कह दें। वे तो उस्ताद हैं। पर काम तो हमारा ही करते हैं। मेरी भी एक गाना सिखाने वाली उस्ताद थी। वायोलिन सिखाती थी। कितनी मुहब्बत से वह सिखाती थी। नौकर की तरह काम करती थी। मैं तो English gentlman बनने जा रहा था। उसका ठीक-ठीक अर्थ बताने वाला शब्द तो मेरे पास है ही नहीं, वाशिंगटन आयरलिंग ने इसकी ठीक परिभाषा लिखी है। सो वह मुझे इंगलिश जेंटिलमैन बनाने के लिए वायलिन सिखाती थी। जो फ़ीस लेतीथी उसका पूरा बदला देती थी। इसी तरह प्रोफेसर भी सिखाते हैं। उनसे हम कह दें, कि आप सल्तनत के हैं, या हमारे। हमारे हैं, तो अच्छा है। मकान खाली करने की आज जरूरत नहीं, इनमें से जिनको निकालना चाहूँगा, निकालूँगा। हवाई बात नहीं करता।

मेरे दिल में तो कहने को बहुत है। पर सब मैं बाहर कर सकूँ, इतना समय नहीं है। मुझे अभी थोड़ा अंग्रेजी में भी बोलना बाकी है। रात हो गई है, बहुत देर हो गई है, फिर भी इतनी शन्ति से, इतने ध्यान से आपने मुझे सुना, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। सच्चे सिपाही ऐसा ही करते हैं।

बाईस वर्ष तक बोलने-लिखने में मैंने संयम रखा है, ताकत इकट्ठी की है। जो अपनी ताकत हमेशा ख़र्च नहीं करता वह ब्रह्मचारी-पाकदामन कहा जाता है। वह हमेशा जीभ पर काबू, संयम रखकर दबी ज़बान से बोलेगा। जिन्दगी-भर मेरा प्रत्यन इस दिशा में रहा है, फिर भी आज इतने सारे लोगों को इतनी रात तक रोके रखकर-आपके ऊपर जबर्दस्ती करके भी मुझे आपको आज जो कहना चाहिए था, वह कह दिया। उसका मुझे पश्चात्ताप नहीं है। आपकी मार्फत सारे हिन्दुस्तान को कह दिया।

इसके बाद अंग्रेजी भाषा में बोलते हुए गांधीजी ने बताया कि जिनकी सेवा के लिए अभी आपने मुझे नियुक्त किया, उनके सामने मेरे अन्तर के मन्थन को बाहर उँड़ेलने में मैंने आपका बहुत समय ले लिया है। मुझे नेतागिरी बख्शी गई-फौजी परिभाषा में मुझे सेनापति पद दिया गया, पर मैं इस दृष्टि से नहीं देखता। मेरे पास अपना सेनापति पद चलाने

के लिए प्रेम के अलावा दूसरा शस्त्र नहीं है। जिस लकड़ी के सहारे मैं चलता हूँ उसे तो आप आसानी से तोड़कर फेंक सकते हैं, ऐसी है। ऐसे अंपग आदमी को जब ऐसी लड़ाई का बोझा उठाने के लिए आमन्त्रित किया जाए तो इसमें उसके लिए पौरुष अनुभव करने-जैसा क्या है ? मेरा यह बोझा आप तभी हल्का कर सकते हैं जब कि मैं आपके सेनापति के रूप में नहीं, बल्कि आपके नम्र सेवक की तरह खड़ा रहूँ। जो सेवा में सबसे बढ़कर हो वह समान दरजे के सेवकों में अगुवा सेवक है, इतना ही इसका अर्थ है।

इसलिए पहली सीढ़ी पर ही मैं आपसे क्या-क्या अपेक्षा रखता हूँ इस बाबत अपने मन के उद्‌गार मैंने अब तक आपके सामने रखे। ध्यान रहे कि आज भी लड़ाई शुरू नहीं हुई है। अभी भी मुझे शरिस्ते मुजब अनेक विधियाँ करनी पड़ेंगी। जो बोझा मुझ पर आया है, सच ही वह असह्य है। मुझे ऐसों के सामने जाकर विनय-प्रार्थना करनी है जिनका आज मुझ पर विश्वास नहीं है। दुनिया-भर के अनेक मित्रों के आगे भी आज मैं अपनी साख खो बैठा हूँ। मेरी समझदारी पर बल्कि मेरी प्रामाणिकता पर भी उनके मन में शंका खड़ी हो गई है। मेरी समझदारी की कीमत कम आँकी जाए इसका मुझे दुःख नहीं है, पर मेरी नीयत के बारे में शंका उठाई जाए, यह तो मेरे लिए दारुण आघात है। आज तो यही स्थिति है।

ऐसे प्रसंग आदमी की जिन्दगी में आते हैं, पर सत्य के शोधक को, जिसे डर या पाखण्ड के बिना मानव जाति अथवा देश की यथाशक्ति सेवा करनी है, तो यह सब सहने ही पड़ते हैं। पचास वर्ष की अपनी शोध में शुद्ध सेवा का इससे दूसरा रास्ता मैंने नहीं जाना। मैंने मानव जाति की, साम्राज्य की एक से अधिक प्रसंगों पर यथाशक्ति सेवा बजाई है और मैं ऐसा कह सकता हूँ कि कहीं भी अपने किसी निजी स्वार्थ अथवा बदले की आशा से मैंने कोई काम नहीं किया। लार्ड लिनलिथगो के साथ मेरी मित्रता है, जो उनके ओहदे की सीमा को भी लाँघ गई है। अपनी लड़की के साथ भी उन्होंने मेरा परिचय कराया। उनकी लड़की और जमाई दोनों मेरी तरफ आकर्षित हुए। उनके जामाता ए० डी० सी० हैं और वे महादेव के खास मित्र बन गए हैं। उनकी लड़की आज्ञाकारिणी और सबको प्रिय लगने वाली है। इन सब पवित्र व्यक्तिगत सम्बन्धों का उल्लेख मैं इसलिए कर रहा हूँ कि लार्ड लिनलिथगो और मेरे बीच जो व्यक्तिगत प्रेम-सम्बन्ध है, उसका आपको पता चल जाए और ऐसा होने पर भी नम्रतापूर्वक जाहिर करता हूँ कि यदि कभी ऐसे लार्ड लिनलिथगो के सामने, साम्राज्य के प्रतिनिधि के रूप में, मरणान्त लड़ाई छेड़ना मेरे नसीब में लिखा होगा तो यह व्यक्तिगत प्रेम-सम्बन्ध रत्ती-भर भी बीच में नहीं आएगा। मैं सल्तनत के पशुबल का सामना करोड़ों भारतीयों की मूक शक्ति से करूँगा, जिन्होंने लड़ाई के लिए उपयुक्त अहिंसा के सिवाय और कोई मर्यादा नहीं रखी होगी। मेरे लिए अत्यन्त कठिन काम होगा कि जिनके साथ मेरा ऐसा घरोपा है, उन्हीं के सामने मैं लड़ाई छेड़ूँ। उन्होंने

एक से अधिक अवसरों पर मेरे शब्दों पर विश्वास किया है। मेरे लोगों पर भी विश्वास रखा है। यह कहते हुए मुझे गर्व और सुख होता है और यह मैं इसलिए कहता हूँ जिसमें सब जान लें कि जिस सल्तनत का मैं वर्षों तक वफ़ादर रहा और जिसकी मैंने सेवा बजाई, यह सल्तनत जब मेरे विश्वास की पात्र नहीं रही तब, जो अंग्रेज उस सल्तनत का प्रतिनिधि था, उसकी उसके सामने लड़ाई छेड़ने के पहले मैंने पूरी खबर कर दी थी।

ऐसे मौके पर चार्ली एंड्रूज की पवित्र याद आए बिना कैसे रह सकती है ? एंड्रूज की आत्मा इस समय मेरे आस-पास मँडरा रही है। मेरी नजर में अंग्रेजी संस्कृति की सबसे उज्ज्वल परम्पराओं के वे संस्कार-मूर्ति थे। हिन्दुस्तानियों की अपेक्षा भी उनके साथ मेरा अधिक निकट का नाता था। मेरे ऊपर उनका गले तक विश्वास था। हमारे बीच में कुछ भी प्राइवेट (खानगी) नहीं था। रोज हम एक-दूसरे के साथ अपने हृदय की बात खोलकर रख देते थे। जरा भी आनाकानी या मन की चोरी (छिपाव) बिना वह मुझे सब बता देते थे। गुरुदेव के भी वे मित्र थे जरूर, पर गुरुदेव की आत्मा से वे चकाचौंध होते और उनका अदब करते थे। पर मेरे तो वे प्राण-प्रिय मित्र बन गए थे। वर्षों पहले वे गोखले का परिचय-पत्र लेकर मेरे पास आए। पीयर्सन और एंड्रूज दोनों आदर्श अंग्रेज के नमूने थे। मैं जानता हूँ कि उनकी आत्माएँ अभी भी मेरी वेदना-वाणी सुन रही हैं।

कलकत्ता के मेट्रोपोलिटन (ईसाई धर्माचार्य) का भी हितैषिता से भरपूर मुबारकवादी का पत्र मिला है। उनको मैं पाकदिल खुदापरस्त पुरुष गिनता हूँ। मेरी कमनसीबी से वे भी आज मेरा यह कदम पसन्द नहीं करते। फिर भी उनका दिल मेरे साथ है। उनके दिल की भाषा मैं पढ़ सकता हूँ।

यह सारी पार्श्वभूमि उपस्थित करके मैं दुनिया को बताना चाहता हूँ कि पश्चिम में रहने वाले मित्रों का विश्वास आज मैंने खो दिया है—और उसका मुझे दुःख है—तो भी उन सबकी मैत्री और प्रेम की खातिर भी मैं अपने अन्दर से उठने वाली आवाज को दबा नहीं सकता। आत्मा कहिए, मूलगत स्वभाव कहिए, वह या मेरे भीतर रहने वाले मेरे दिल का दर्द, मेरी व्यथा पुकार-पुकारकर कह रही है, आज मुझे प्रेरित कर रही है। मैं भूत दया जानता हूँ। मनुष्य स्वभाव का भी मैंने थोड़ा-बहुत अभ्यास किया है। ऐसा आदमी अपने अन्तरात्मा को समझ सकता है। आज उसे जो चाहें नाम दें, पर यह अन्दर की आवाज मुझे कह रही है—तुझे अकेला बिना सहारे खड़ा रहना पड़े तो भी आज तमाम दुनिया के सामने खड़ा होने से ही तेरा छुटकारा है। दुनिया लाल-पीली, रक्तपूर्ण आँखों से तेरे सामने घूरे तो भी तुझे उसकी नजर के सामने नजर मिला करके खड़े रहना है। डर मत। अपने अन्दर की आवाज को ही सुन। यह आवाज तुझे कहती है कि पुत्र, स्त्री, सम्पत्ति, शीश सब कुछ समर्पण कर देना, पर जिस चीज के लिए तू जिया करता है और जिसकी खातिर तुझे मरना है, उस सत्य की पुकार करते-करते मरना। मित्रो ! इस बात का विश्वास रखिए

कि मुझे मरने की जल्दी नहीं है। मुझे अपने सौवें वर्ष तक जीना है। बल्कि मैंने तो आयु की सीमा 120 वर्ष तक आँकी है। इतने में तो हिन्द आजाद हो गया होगा—दुनिया भी आजाद हुई रहेगी। आज तो मैं इंग्लैण्ड को या अमेरिका को भी आजाद मुल्क के रूप में नहीं मानता। अपनी रीति से ये भले ही आजाद हों—ये आजाद हैं दुनिया की रंगीन जातियों को गुलामी की जंजीरों में जकड़े रखने के लिए। इन कौमों की आजादी के लिए क्या आज अमेरिका और इंग्लैण्ड लड़ रहे हैं ? तो फिर मुझे इस लड़ाई के पूरी होने तक रुकने को मत कहो। मेरी आजादी की परिभाषा को किस लिए आप संकुचित करते हैं ? इंग्लैण्ड और अमेरिका के आचार्य, उनका इतिहास, उनका उदात्त काव्य-भंडार यह नहीं सिखाता है कि आजादी की व्याख्या को संकुचित रखा जाए, विशाल नहीं बनाया जाए और ऐसी व्याख्या के गज से जब मैं नापता हूँ तब मुझे कहना ही पड़ता है कि इंग्लैण्ड क्या और अमेरिका क्या, कोई भी आजाद नहीं है। उनके आचार्यों ने और कवियों ने जिस स्वतन्त्रता के गाने गाए हैं, उसकी उनको पहचान नहीं है। इसकी पहचान करनी हो तो उनको हिन्दुतान के चरणों में बैठना होगा। घमण्ड और गुस्ताखी के साथ नहीं, पर सच्चे सत्यशोधक बनकर आना पड़ेगा। बाईस वर्ष से हिन्द इस आधारभूत सत्य का प्रयोग कर रहा है। यों तो कांग्रेस अपने जन्मकाल से ही जाने या अनजाने अहिंसा की—वैधानिक मर्यादा में रहकर आंदोलन करने की राह से चलती आई है और ऐसा होने पर भी दादाभाई और फीरोजशाह जैसे नेता हिन्द को अपनी अंगुली पर नचाते थे—वे विद्रोही थे, कांग्रेस-प्रेमी थे, कांग्रेस के कर्ता-धर्ता थे, तब भी उसके सच्चे सेवक थे, खून-खराबी और छिपे कामों को प्रश्रय देने वाले नहीं थे। आज कांग्रेस में बहुत से रंगे सियार भी हैं, यह मैं मंजूर करता हूँ। सारा देश अहिंसक लड़ाई में ही कूदेगा ऐसा मेरा विश्वास है। क्योंकि मनुष्य के स्वभाव में रही हुई भलाई और विषम अवसरों पर सत्य को परखने और उस पर दृढ़ रहने की उसकी कुदरती शक्ति पर मेरा विश्वास है। पर मेरा विश्वास खोटा भी साबित हो तो भी मैं अपनी राह से विचलित होने वाला नहीं हूँ, डिगने वाला नहीं हूँ। कांग्रेस की राह शुरू से ही शान्ति की रही है। आगे चलकर उसमें स्वराज्य का समावेश हुआ और बाद की पीढ़ियों ने उसमें अहिंसा-असहकार का तत्त्व शामिल कर दिया। दादाभाई ने तब ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में प्रवेश किया, साल्सबरी ने उन्हें काला आदमी कहा। पर अंग्रेज जनता ने दादाभाई को अपनाया—चुना और साल्सबरी हारे। हिन्द खुशी से पागल हो गया। पर हिन्दू के लिए आज ये सारी बातें पुरानी हो गईं। पर इन सब पिछली भूमिकाओं को ध्यान में रखकर मैं अंग्रेजों से, यूरोप से और मित्रराष्ट्रों से पूछता हूँ कि वे अपने हृदय पर हाथ रखकर कहें कि हिन्द जो आजादी माँगता है, उसमें कौन-सा गुनाह है ? ऐसी कार्रवाइयों और पचास से अधिक वर्ष तक ऐसी सेवाओं के इतिहास वाली संस्था पर अविश्वास करना, उसकी बदनामी करना और अपने हाथ के विशाल साधनों का उपयोग करके दुनियाभर में उसकी शिकायत करना यह

क्या शोभा की बात है ? आकाश-पाताल एक करके चाहे जैसे रास्ते से, विदेशी अखबारों की मदद लेकर, अमेरिका के प्रेजिडेण्ट की मदद लेकर, चीनी सेनापति मार्शल चांगकाइशेक की भी मदद लेने के प्रयत्न करके हिन्दुस्तान को भद्दे विकृत रूप में दुनिया में पेश करना क्या उचित है ? सेनापति चांग से मैं मिला हूँ। श्रीमती शेक ने हमारे बीच दुभाषिया का काम किया। उनकी सहायता से मैंने सेनाधिपति शेक का परिचय पाया और यद्यपि सेनापति को मैं पार नहीं पा सका तो भी उन्होंने श्रीमती शेक की मार्फत उनके मन के झुकाव का मुझे परिचय पाने दिया। हमारे मुकाबले में आज सारी दुनिया को खड़ा किया गया है—उभाड़ दिया गया है। सभी अपनी नाराजगी का इजहार कर रहे हैं। कहते हैं कि हम भूल कर रहे हैं। हमारी प्रवृत्ति असमय की है। ब्रिटिश मुत्सद्दीगिरी के लिए मेरे मन में मान था। आज आपकी गन्दगी से मेरा जी अकुला रहा है। पर नौसिखुए अभी भी इसके चरणों में अपना सबक ले रहे हैं। इन तरीकों से ये शायद चार दिन दुनिया के लोकमत को अपने पक्ष में रख सकेंगे। किन्तु हिन्दुस्तान तमाम खड़ा होकर भी आज अपनी पुकार बुलन्द करेगा। सारा हिन्दुतान मेरा त्याग करे तो भी मैं दुनिया को सुनाऊँगा—तुम ठोकर खा रहे हो, तुम भूल में हो। हिन्द की आजादी मजबूती से पकड़ रखने वालों के पास से भी हिन्दू अहिंसा के बल पर यह आजादी ले लेगा। यह आजादी आने के पहले भले ही मेरी आँखें बन्द हो जाएँ, मैं भले ही रुक जाऊँ, पर अहिंसा रुकेगी नहीं। बहुत ज्यादा देरी से लेना वसूल करने के लिए कदमबोसी करने, विनती करने वाले हिन्द की आजादी का विरोध करके चीन और रूस का भी तुम क्या भला कर सकने वाले हो। तुम उनको प्राणघातक धक्का ही लगाओगे। किसी महाजन को देनदार की आजिजी करते जाना है ? और उसके सामने ऐसे-ऐसे विरोध-बाधाएँ उपस्थित करने पर भी कांग्रेस तो आज विरोधियों को कहती है कि "हम साफ शराफत की लड़ाई लड़ेंगे, पीठ में घाव नहीं करेंगे, हम अहिंसा को अंगीकार कर चुके हैं।" ब्रिटिश सरकार को दिक न करने की कांग्रेस की नीति का प्रचारक मैं खुद ही तो था ? तो भी आज यह सख्त भाषा इस्तेमाल कर रहा हूँ। मैं कहता हूँ हमारी शराफत के लायक ही यह बात है। इसमें अयुक्त-अनुचित ऐसा क्या है ? किसी आदमी ने मुझे गर्दन से पकड़ रखा और वह मुझे डुबाना चाहता हो तो क्या मैं उसकी पकड़ में से छूटने के लिए उसी क्षण चेष्टा न करूँ ? कांग्रेस के निश्चय में अयुक्त अथवा असंगत ऐसा कुछ भी नहीं है।

विदेशों के अखबार वाले यहाँ इकट्ठे हुए हैं। उनकी मारफत दुनिया को और मित्र राष्ट्रों की प्रजा को—जिनका कहना है कि हिन्द का साथ उन्हें चाहिए—मैं कहता हूँ कि हिन्द को आजाद जाहिर करके तुम्हारी नीयत सच्ची करके दिखलाने का आज अवसर है। इससे खो दोगे तो जिन्दगी में ऐसी घड़ी आने वाली नहीं है और इतिहास इस बात को अंकित करेगा कि तुमने अवसर पर अपना फर्ज अदा न करके सब कुछ खो दिया। तुम्हारी मार्फत

मैं दुनिया का आशीर्वाद माँगता हूँ कि मैं विरोधियों को मनाने में सफल बनूँ। मित्रराष्ट्रों की जनता से मुझे उनका खुल्लमखुल्ला फर्ज अदा करने के अलावा और कुछ ज्यादा नहीं चाहिए। अंहिसा अथवा शस्त्र-सन्यास करने को मैं उन्हें नहीं कहता। फासिज्म और उन लोगों के साम्राज्यवाद, जिसके सामने मैं लड़ रहा हूँ, दोनों के बीच भी मौलिक भेद रहा हुआ है। ब्रिटिश सल्तनत को अभी हिन्दुस्तान से जैसा चाहिए, वैसा क्या मिल रहा है? मिल रहा है, वह तो गुलाम से मिल रहा है। हिन्द आजाद दोस्त के रूप में साथ दे तो कितना फर्क पड़े, इसका विचार करके देख लो। आजादी यदि उसे मिलने वाली हो तो वह आज ही आनी चाहिए। ऐसा होने में तुम मदद कर सकते हो। ऐसा होने पर भी मदद न करो तो बाद में आजादी मिले, उसमें स्वाद नहीं रहेगा। आज करो तो इस आजादी के चमत्कार से जो बात अशक्य लगती है, वह कल शक्य हो जाएगी। हिन्द मुक्त होगा तो चीन को मुक्ति दिलाएगा, रशिया की मदद को दौड़ेगा। वर्मा-मलाया में अंग्रेजों ने तो प्राण बिछाए नहीं थे, हिन्दुस्तानियों की ही शक्तियों का नाश किया। किस तरह से बिगड़ी बाजी सुधारी जा सकती है, इस पर विचार कर लो। मैं कहाँ जाऊँ-चालीस करोड़ को कहाँ ल जाऊँ? आजादी के स्पर्श बिना करोड़ों की जनता को दुनिया की मुक्ति के यज्ञ में दिल भाग लेने की और क्या कोई रीति हो सकती है? आज तो जनता के प्राण शोषित हो गए हैं—पीस दिये गए हैं, उनकी निस्तेज आँखों में तेज लाना हो तो आजादी कल नहीं, आज ही आनी चाहिए। इसी से मैंने आज कांग्रेस से यह बाजी लगवाई है, या तो कांग्रेस देश को आजद करेगी अथवा खुद फना हो जाएगी। 'करो या मरो।'

❑❑❑